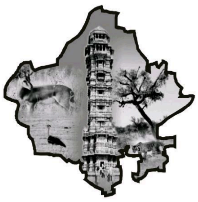

राजस्थान अध्ययन

भाग–3

कक्षा–11

संयोजक एवं लेखक

डॉ. हरि मोहन सक्सेना
से. नि. संयुक्त निदेशक कॉलेज शिक्षा, राजस्थान
बी–1, एम.बी.एस.नगर, कोटा जंक्शन, **कोटा**

लेखक गण

डॉ. हुकम चन्द जैन
विभागाध्यक्ष, इतिहास
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
कोटा

डॉ. ओम प्रकाश शर्मा
वरिष्ठ व्याख्याता
आर्थिक प्रशासन एवं वित्तीय प्रबंध विभाग,
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, **सवाई माधोपुर**

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान, अजमेर

प्रकाशक

राजस्थान राज्य पाठ्यपुस्तक मण्डल, जयपुर

अनुक्रमणिका

क्रम सं.	अध्याय का नाम	पृष्ठ संख्या
1.	राजस्थान में जनजागरण एंव स्वतन्त्रता संग्राम	1—23
2.	राजस्थान का स्थापत्य, मूर्तिशिल्प एंव चित्र शैलियाँ	24—44
3.	राजस्थान की लोक कलाएँ	45—58
4.	राजस्थान के प्राकृतिक संसाधन एंव उनका संरक्षण	59—71
5.	राजस्थान के ऊर्जा संसाधन	72—77
6.	राजस्थान की अर्थ व्यवस्था	78—83
7.	राजस्थान का आर्थिक विकास	84—102
8.	राजस्थान में पर्यटन विकास और संभावनाऐं	103—108

अध्याय – 1
राजस्थान में जन जागरण एवं स्वतन्त्रता संग्राम
I
1857 की क्रांति

पृष्ठभूमि

राजस्थान के देशी राज्यों ने अंग्रेजी कम्पनी के साथ संधियाँ (1818 ई.) करके मराठों द्वारा उत्पन्न अराजकता से मुक्ति प्राप्त कर ली तथा राज्य की बाह्य सुरक्षा के बारे में भी निश्चित हो गए, क्योंकि अब कम्पनी ने उनके राज्य की बाहरी आक्रमणों से सुरक्षा की जिम्मेदारी भी ले ली थी। प्रत्यक्ष में देशी रियासतों पर कोई अधिक आर्थिक भार भी नहीं पड़ा, क्योंकि जो खिराज वे मराठों को चुकाते थे, वो ही खिराज अब अंग्रेजों को देना था। अतः राजा खुश हो गए कि अब उनका निरंकुश शासन चलता रहेगा। राजाओं को संधियों की शर्ते इतनी आकर्षक लगीं कि उन्होंने अंग्रेजी कम्पनी की ईमानदारी पर बिना शंका किए संधियों पर हस्ताक्षर कर दिए। परन्तु संधियों में उल्लेखित शर्तों को कम्पनी के अधिकारियों ने जैसे ही क्रियान्वित करना शुरू किया, राजाओं के वंश परम्परागत अधिकारों पर कुठाराघात होंने लगा। कम्पनी ने राज्यों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करके देशी नरेशों की प्रभुसत्ता पर भी चोट की एवं उनकी स्थिति कम्पनी के सामन्तों व जागीरदारों जैसी हो गई। कम्पनी की नीतियों से सामन्तों के पद, मर्यादा व अधिकारों को भी आघात लगा। कम्पनी द्वारा अपनाई गई आर्थिक नीतियों के परिणामस्वरूप राजा, सामन्त, किसान, व्यापारी, शिल्पी एवं मजदूर सभी वर्ग पीड़ित हुए। कम्पनी के साथ की गई संधियों के कई दुष्परिणाम सामने आए, जिन्होंने 1857 की क्रांति की पृष्ठभूमि बनाई।

(1) राज्यों के आन्तरिक शासन में हस्तक्षेप

राजपूत राजाओं के साथ संधियाँ करते समय अंग्रेजों ने यह स्पष्ट आश्वासन दिया था कि वे राज्यों के आन्तरिक प्रशासन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेंगे। मगर अंग्रेजों ने राज्यों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप किया। जोधपुर के शासक पर दबाव डालकर 1839 ई. में जोधपुर के किले पर अधिकार कर लिया। 1842–43 ई. में अंग्रेजों ने पुनः जोधपुर के मामलों में हस्तक्षेप करते हुए नाथों की जागीरें जब्त कर उनको कैद में डाल दिया। 1819 ई. में उन्होंने जयपुर के मामलों में हस्तक्षेप किया। अंग्रेजों ने मांगरोल के युद्ध में (1821 ई.) कोटा महाराव के विरुद्ध दीवान जालिम सिंह की सहायता की, जो कि अंग्रेज समर्थक था। मेवाड़ के प्रशासन में भी पोलिटिकल एजेन्ट के बार–बार हस्तक्षेप ने राज्य की आर्थिक स्थिति को दयनीय बना दिया। 1823 ई. में कैप्टन कौब ने समस्त शासन प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया और महाराणा को खर्च के लिए एक हजार रु. दैनिक नियत कर दिया। इस प्रकार संधियों की शर्तों के विपरीत अंग्रेजों ने राज्यों के आन्तरिक प्रशासन में हस्तक्षेप कर उनकी बाह्य प्रभुसत्ता के साथ–साथ आन्तरिक स्वायत्तता भी खत्म कर दी। अब राजा अपने राज्य के सम्प्रभु स्वामी न रहकर अंग्रेजों की कृपादृष्टि पर निर्भर हो गए।

(2) राज्यों के उत्तराधिकार मामलों में हस्तक्षेप

अंग्रेजों ने राज्यों से संधियाँ करते समय आश्वासन दिया था कि वह उनके परम्परागत शासन में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करेंगे। परन्तु राज्य में शांति व व्यवस्था बनाये रखने के बहाने अंग्रेजों ने उत्तराधिकार के मामलों में खुलकर हस्तक्षेप किया। 1826 ई. में अलवर राज्य के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप कर बलवंतसिंह व बनेसिंह के मध्य अलवर राज्य के दो हिस्से करवा दिए। भरतपुर के उत्तराधिकार के प्रश्न पर 1826 ई. में अंग्रेजों ने लोहागढ़ दुर्ग को घेर कर उसे नष्ट कर दिया एवं बालक राजा

बलवन्त सिंह को गद्दी पर बिठाकर, पोलिटिकल एजेन्ट के अधीन एक काउन्सिल की नियुक्ति कर दी, जो प्रशासन का संचालन करने लगी। अंग्रेजों ने अपने समर्थक उम्मीदवारों को उत्तराधिकारी बनाकर राज्यों में अप्रत्यक्ष रूप से अपनी राजनीतिक प्रभुता स्थापित की।

जिस राज्य का उत्तराधिकारी अल्पवयस्क होता, वहाँ ए.जी.जी., रेजीडेण्ट की अध्यक्षता में अपने समर्थकों की कौंसिल का गठन कर प्रशासन पर नियंत्रण स्थापित कर लेते थे। 1835 ई. में जयपुर में शासन संचालन के लिए पोलिटिकल एजेन्ट के निर्देशन में सरदारों की समिति गठित की गई। 1844 ई. में बाँसवाड़ा में महारावल लक्ष्मणसिंह की नाबालिगी के दौरान प्रशासन पर अंग्रेजी नियंत्रण बना रहा। गोद लेने के प्रश्न पर भी अंग्रेज अपना निर्णय लादने का प्रयास करते थे।

(3) राज्यों की कमजोर वित्तीय स्थिति

संधियों के द्वारा राजपूत राज्यों को मराठों एवं पिण्डारियों की लूटमार एवं बार–बार की आर्थिक माँगों से तो छुटकारा मिल गया, मगर अंग्रेजों ने भी प्रारम्भ से ही खिराज की प्रथा लागू कर आर्थिक शोषण की नीति अपना ली थी। यदि खिराज का भुगतान समय पर नहीं होता तो अंग्रेज कम्पनी उन पर चक्रवृद्धि ब्याज लगाकर खिराज वसूल करती थी। खिराज के अलावा कम्पनी शांति व्यवस्था स्थापित करने के नाम पर राज्यों से धन वसूल करती थी। युद्ध की परिस्थितियों में भी राजाओं को धन देने के लिए बाध्य किया जाता था। इसके अतिरिक्त राजाओं को अपने खर्च पर कम्पनी के लिए सेना रखनी पड़ती थी। यदि राजा उस सैनिक खर्च को वहन करने में असमर्थता दिखाता, तो उसके राज्य का कुछ भाग कम्पनी अपने अधीन कर लेती थी। अंग्रेजों ने जयपुर नरेश को शेखावाटी में राजमाता के समर्थक सामन्तों को कुचलने के लिए सैनिक सहायता दी व सैनिक खर्च के रूप में सांभर झील को अपने अधीन (1835 ई.) कर लिया। जोधपुर में शांति व्यवस्था स्थापित करने के नाम पर 1835 ई. में 'जोधपुर लीजियन' का गठन कर उसके खर्च के लिए एक लाख पन्द्रह हजार रुपये वार्षिक जोधपुर राज्य से वसूला जाने लगे। 1841 ई. में 'मेवाड़ भील कोर' की स्थापना मेवाड़ राज्य के खर्च पर की गई, 1822 ई. में 'मेरवाड़ा बटालियन', 1834 ई. में 'शेखावाटी ब्रिगेड' की स्थापना कर इसका खर्चा सम्बन्धित राज्यों से वसूला जाने लगा, जबकि इन सैनिक टुकड़ियों पर नियंत्रण एवं निर्देशन अंग्रेजों का था। इसी प्रकार 1825–30 के दौरान भीलों के विद्रोह को दबाने के लिए अंग्रेजों ने सैनिक सहायता दी तथा सैनिक खर्च महाराणा के नाम पर ऋण के रूप में लिख दिया और फिर 6 प्रतिशत ब्याज लगाकर वह राशि वसूल की गई।

(4) राज्यों का शिथिल प्रशासन

संधियों के बाद राजपूत राज्यों को बाह्य आक्रमणों का भय न रहा और आन्तरिक विद्रोह के समय भी अंग्रेजी सहायता उपलब्ध रही। प्रशासनिक मामलों में रेजीडेण्ट का दखल अधिकाधिक बढ़ने लगा। धीरे–धीरे राजाओं ने प्रशासन पर अपना नियंत्रण खो दिया, अब वे रेजीडेण्ट की इच्छानुसार शासन संचालन करने वाले रबर की मोहर मात्र रह गए। रेजीडेण्टों ने प्रशासन में अपने समर्थक व्यक्ति नियुक्त कर दिए। बाँसवाड़ा का शासन मुंशी शहामत अलीखाँ (1844–56 ई.) के हाथों में था, अलवर का प्रशासन अहमदबख्श खाँ (1815–26) के नियंत्रण में था तो जयपुर राज्य में 1835 ई. में अंग्रेज समर्थक जेठाराम सर्वेसर्वा बन गया। नरेशों का प्रशासन में महत्त्व नहीं होने से वे प्रशासन के प्रति पूर्णतः उदासीन हो गये। वे अपना समय रंग–रेलियों में, सुरा–सुन्दरी के भोग में गुजारने लगे। कई शासक यूरोपीय देशों की यात्राओं में समय व्यतीत करने लगे। उनके प्रासादों में रानियों के स्थान पर वेश्याएँ गौरव पाने लगी। प्रशासन की शिथिलता का दुष्परिणाम जन सामान्य को भुगतना पड़ा। सामन्त और राज्य कर्मचारी जनता को विभिन्न प्रकार से पीड़ित करने लगे, जिसकी परिणति कृषक आन्दोलनों के रूप में हुई।

(5) किसानों एवं जनसाधारण के हितों पर कुठाराघात

अंग्रेजों के साथ संधियाँ करने के पश्चात् राजपूत

राज्यों के खर्च में अप्रत्याशित वृद्धि हुई। अंग्रेजों ने राज्यों से अधिकाधिक खिराज लेने का प्रयास किया तथा अंग्रेज रेजीडेण्ट व सैनिक बटालियनों के ऊपर भी राजाओं को अधिक खर्च के लिए बाध्य किया गया। इसके साथ ही विकास कार्यों (रेलवे, सिंचाई, सड़क, शिक्षा, चिकित्सा) पर खर्च करने से भी राज्यों के खर्च में वृद्धि हुई, जबकि व्यापार पर अंग्रेजी आधिपत्य स्थापित हो जाने से राज्यों की आय में कमी आई। अतः राज्यों के सारे खर्च की पूर्ति का भार भूमि–कर पर ही आ पड़ा। इसलिए भूमि कर बढ़ाना आवश्यक हो गया। परन्तु अकाल पड़ने या किसी भी कारण से उपज कम होने पर भी किसानों को निर्धारित भूमिकर नकद राशि में देना ही पड़ता था, जिससे किसान साहूकारों के शिकंजे में और अधिक फंसते गए। अब किसानों को भूमि से बेदखल भी किया जाने लगा, जबकि अंग्रेजों के आगमन से पूर्व किसानों को भूमि से बेदखल नहीं किया जा सकता था। राज्यों ने अपने बढ़ते व्यय की पूर्ति के लिए किसानों पर चराई कर, सिंचाई कर आदि लगा दिए। शासकों ने प्रशासन पर से ध्यान हटाकर यात्राओं एवं मनोरंजन में समय व्यतीत करना शुरू कर दिया और खर्चों की पूर्ति के लिए किसानों पर भूमि कर के साथ अनेक प्रकार की अतिरिक्त कर भार लगा दिया जिससे किसानों की स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गई। रेलवे के विकास ने लोगों की समृद्धि के स्थान पर उन्हें निर्धन करने में ज्यादा योग दिया। ब्रिटेन निर्मित वस्तुओं से बाजार भर गए, राज्य का कच्चा माल रेलों द्वारा बाहर जाने लगा। यहाँ तक कि अकाल के दौरान भी खाद्यान्नों का निर्यात किया जाने लगा। व्यापार पर अंग्रेजी नियंत्रण स्थापित होने से राज्य के व्यापारी पलायन कर गए। दस्तकार व हस्तशिल्पियों द्वारा निर्मित वस्तुएँ ब्रिटेन की वस्तुओं से महंगी होने के कारण और अब उन्हें शासक वर्ग का संरक्षण न मिलने से उनका जीवन निर्वाह कठिन हो गया, जिससे उन्होंने अपना परम्परागत व्यवसाय छोड़ दिया और श्रमिक बन गए।

इस प्रकार राजपूत राज्यों को अंग्रेजों के साथ (1818 ई.) की गई संधियाँ आकर्षक लगी, मगर इनके परिणामस्वरूप शासक शक्तिहीन हो गए, सामन्तों का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया तथा किसानों एवं जनसाधारण की दशा दयनीय हो गई। इन संधियों का ही दुष्परिणाम था कि 1857 की क्रांति के दौरान जनसाधारण एवं सामन्त वर्ग ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोहियों को सहायता दी व उनका स्वागत किया तथा बाद में भी राज्यों को किसान एवं जनसाधारण के आन्दोलनों का सामना करना पड़ा। राजा और प्रजा के मध्य जो सम्मानजनक सम्बन्ध थे, वे समाप्त होकर शोषक व शोषित में बदल गए।

क्रांति का सूत्रपात एवं विस्तार

1857 की क्रांति प्रारम्भ होने के समय राजपूताना में नसीराबाद, नीमच, देवली, ब्यावर, एरिनपुरा एवं खेरवाड़ा में सैनिक छावनियाँ थी। इन 6 छावनियों में पाँच हजार सैनिक थे किन्तु सभी सैनिक भारतीय थे। मेरठ में हुए विद्रोह (10 मई,1857) की सूचना राजस्थान के ए.जी.जी. (एजेन्ट टू गवर्नर जनरल) जार्ज पैट्रिक लॉरेन्स को 19 मई, 1857 को प्राप्त हुई। सूचना मिलते ही उसने सभी शासकों को निर्देश दिये कि वे अपने–अपने राज्य में शान्ति बनाए रखें तथा अपने राज्यों में विद्रोहियों को न घुसने दें। यह भी हिदायत दी कि यदि विद्रोहियों ने प्रवेश कर लिया हो तो उन्हें तत्काल बंदी बना लिया जावे। ए.जी.जी. के सामने उस समय अजमेर की सुरक्षा की समस्या सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण थी, क्योंकि अजमेर शहर में भारी मात्रा में गोला बारूद एवं सरकारी खजाना था। यदि यह सब विद्रोहियों के हाथ में पड़ जाता तो उनकी स्थिति अत्यन्त सुदृढ़ हो जाती। अजमेर स्थित भारतीय सैनिकों की दो कम्पनियाँ हाल ही में मेरठ से आयी थी और ए.जी.जी. ने सोचा कि सम्भव है यह इन्फेन्ट्री (15वीं बंगाल नेटिव इन्फेन्ट्री) मेरठ से विद्रोह की भावना लेकर आयी हो, अतः इस इन्फेन्ट्री को नसीराबाद भेज दिया तथा ब्यावर से दो मेर रेजीमेन्ट बुला ली गई। तत्पश्चात् उसने डीसा (गुजरात) से एक यूरोपीय सेना भेजने को लिखा।

राजस्थान में क्रांति की शुरुआत नसीराबाद से हुई, जिसके निम्न कारण थे –

(1) ए.जी.जी. ने 15वीं बंगाल इन्फेन्ट्री जो अजमेर में थी, उसे अविश्वास के कारण नसीराबाद में भेज दिया था। इस अविश्वास के चलते उनमें असंतोष पनपा।

(2) मेरठ में हुए विद्रोह की सूचना के पश्चात् अंग्रेज सैन्य अधिकारियों ने नसीराबाद स्थित सैनिक छावनी की रक्षार्थ फर्स्ट बम्बई लांसर्स के उन सैनिकों से, जो वफादार समझे जाते थे, गश्त लगवाना प्रारम्भ किया। तोपों को तैयार रखा गया। अतः नसीराबाद में जो 15वीं नेटिव इन्फेन्ट्री थी, उसके सैनिकों ने सोचा कि अंग्रेजों ने यह कार्यवाही भी भारतीय सैनिकों को कुचलने के लिए की है तथा गोला–बारूद से भरी तोपें उनके विरुद्ध प्रयोग करने के लिए तैयार की गई है। अतः उनमें विद्रोह की भावना जागृत हुई।

(3) बंगाल और दिल्ली से छद्मधारी साधुओं ने चर्बी वाले कारतूसों के विरुद्ध प्रचार कर विद्रोह का संदेश प्रसारित किया, जिससे अफवाहों का बाजार गर्म हो गया। वस्तुतः 1857 के विद्रोह का तात्कालिक कारण चर्बी वाले कारतूसों को लेकर था। एनफील्ड राइफलों में प्रयोग में लिए जाने वाले कारतूस की टोपी (केप) को दाँतों से हटाना पड़ता था। इन कारतूसों को चिकना करने के लिए गाय तथा सूअर की चर्बी काम में लाई जाती थी। इसका पता चलते ही हिन्दू–मुसलमान सभी सैनिकों में विद्रोह की भावना बलवती हो गई। सैनिकों ने यह समझा कि अंग्रेज उन्हें धर्म भ्रष्ट करना चाहते हैं। यही कारण था कि क्रांति का प्रारम्भ नियत तिथि से पहले हो गया।

राजस्थान में क्रांति का प्रारम्भ **28 मई, 1857 को नसीराबाद छावनी** के 15वीं बंगाल नेटिव इन्फेन्ट्री के सैनिकों द्वारा हुआ। नसीराबाद छावनी के सैनिकों में 28 मई, 1857 को विद्रोह कर छावनी को लूट लिया तथा अंग्रेज अधिकारियों के बंगलों पर आक्रमण किये। मेजर स्पोटिस वुड एवं न्यूबरी की हत्या के बाद शेष अंग्रेजों ने नसीराबाद छोड़ दिया। छावनी को लूटने के बाद विद्रोही सैनिकों ने दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। इन सैनिकों ने 18 जून, 1857 को दिल्ली पहुँचकर अंग्रेज पलटन को पराजित किया, जो दिल्ली का घेरा डाले हुए थी।

नसीराबाद की क्रांति की सूचना **नीमच** पहुँचने पर 3 जून, 1857 को नीमच छावनी के भारतीय सैनिकों ने विद्रोह कर दिया। उन्होंने शस्त्रागार को आग लगा दी तथा अंग्रेज अधिकारियों के बंगलों पर हमला कर एक अंग्रेज सार्जेन्ट की पत्नी तथा बच्चों का वध कर दिया। नीमच छावनी के सैनिक चित्तौड़, हम्मीरगढ़ तथा बनेड़ा में अंग्रेज बंगलों को लूटते हुए शाहपुरा पहुँचे। यहाँ के सामन्त ने इनको रसद की आपूर्ति की। यहाँ से ये सैनिक निम्बाहेड़ा पहुँचे, जहाँ जनता ने इनका स्वागत किया। इन सैनिकों ने देवली छावनी को घेर लिया, छावनी के सैनिकों ने इनका साथ दिया। छावनी को लूटकर ये क्रांतिकारी टोंक पहुँचे, जहाँ जनता ने नवाब के आदेशों की परवाह न करते हुए इनका स्वागत किया। टोंक से आगरा होते हुये ये सैनिक दिल्ली पहुँच गये। कैप्टन शावर्स ने कोटा, बूँदी तथा मेवाड़ की सेनाओं की सहायता से नीमच पर पुनः अधिकार कर लिया।

1835 ई. में अंग्रेजों ने जोधपुर की सेना के सवारों पर अकुशल होने का आरोप लगाकर जोधपुर लीजियन का गठन किया। इसका केन्द्र **एरिनपुरा** रखा गया। 21 अगस्त, 1857 को जोधपुर लीजियन के सैनिकों ने विद्रोह कर आबू में अंग्रेज सैनिकों पर हमला कर दिया। यहाँ से ये एरिनपुरा आ गये, जहाँ इन्होंने छावनी को लूट लिया तथा जोधपुर लीजियन के शेष सैनिकों को अपनी ओर मिलाकर "चलो दिल्ली, मारो फिरंगी" के नारे लगाते हुए दिल्ली की ओर चल पड़े। एरिनपुरा के विद्रोही सैनिकों की भेंट 'खैरवा' नामक स्थान पर आउवा ठाकुर कुशालसिंह से हुई। कुशालसिंह, जो कि अंग्रेजों एवं जोधपुर महाराजा से नाराज था, इन सैनिकों का नेतृत्व करना स्वीकार कर लिया। ठाकुर कुशालसिंह के आह्वान पर आसोप, गूलर, व खेजड़ली के सामन्त अपनी सेना के साथ आउवा पहुँच गये। वहाँ मेवाड़ के सलूम्बर, रूपनगर तथा लसाणी के सामंतों ने अपनी सेनाएँ भेजकर सहायता प्रदान की। ठाकुर कुशालसिंह की सेना ने जोधपुर की राजकीय सेना को 8 सितम्बर, 1857 को बिथोड़ा नामक स्थान पर पराजित किया। जोधपुर की सेना की पराजय की खबर पाकर ए.जी.जी. जॉर्ज लारेन्स

स्वयं एक सेना लेकर आउवा पहुँचा। मगर 18 सितम्बर, 1857 को वह विद्रोहियों से परास्त हुआ। इस संघर्ष के दौरान जोधपुर का पोलिटिकल एजेन्ट मोक मेसन क्रांतिकारियों के हाथों मारा गया। उसका सिर आउवा के किले के द्वार पर लटका दिया गया। अक्टूबर, 1857 में जोधपुर लीजिय़न के क्रांतिकारी सैनिक दिल्ली की ओर कूच कर गये। ब्रिगेडियर होम्स के अधीन एक सेना ने 29 जनवरी, 1858 को आउवा पर आक्रमण कर दिया। विजय की उम्मीद न रहने पर कुशालसिंह ने किला सलूंबर में शरण ली। उसके बाद ठाकुर पृथ्वीसिंह ने विद्रोहियों का नेतृत्व किया। अन्त में, आउवा के किलेदार को रिश्वत देकर अंग्रेजों ने अपनी ओर मिला लिया और किले पर अधिकार कर लिया। अंग्रेजों ने यहाँ अमानवीय अत्याचार किए एवं आउवा की महाकाली की मूर्ति (सुगाली माता) को अजमेर ले गये।

कोटा में राजकीय सेना तथा आम जनता ने अंग्रेजों के विरुद्ध संघर्ष किया। 14 अक्टूबर, 1857 को कोटा के पोलिटिकल एजेन्ट मेजर बर्टन ने कोटा महाराव **रामसिंह द्वितीय** से भेंट कर अंग्रेज विरोधी अधिकारियों को दण्डित करने का सुझाव दिया। मगर महाराव ने अधिकारियों के अपने नियंत्रण में न होने की बात कहते हुए बर्टन के सुझाव को मानने से इन्कार कर दिया। 15 अक्टूबर, 1857 को कोटा की सेना ने रेजीडेन्सी को घेरकर मेजर बर्टन और उसके पुत्रों तथा एक डॉक्टर की हत्या कर दी। मेजर बर्टन का सिर कोटा शहर में घुमाया गया तथा महाराव का महल घेर लिया। विद्रोही सेना का नेतृत्व रिसालदार मेहराबखाँ और लाला जयदयाल कर रहे थे। विद्रोही सेना को कोटा के अधिकांश अधिकारियों व किलेदारों का भी सहयोग व समर्थन प्राप्त हो गया। विद्रोहियों ने राज्य के भण्डारों, राजकीय बंगलों, दुकानों, शस्त्रागारों, कोषागार एवं कोतवाली पर अधिकार कर लिया। कोटा महाराव की स्थिति असहाय हो गयी। वह एक प्रकार से महल का कैदी हो गया। लाला जयदयाल और मेहराबखाँ ने समस्त प्रशासन अपने हाथ में ले लिया और जिला अधिकारियों को राजस्व वसूली के आदेश दिये गये। मेहराबखाँ और जयदयाल ने महाराव को एक परवाने पर हस्ताक्षर करने के लिए विवश किया, जिसमें मेजर बर्टन व उसके पुत्रों की हत्या महाराव के आदेश से करने एवं लाला जयदयाल को मुख्य प्रशासनिक अधिकारी नियुक्त करने की बातों का उल्लेख था। लगभग छः महीने तक विद्रोहियों का प्रशासन पर नियंत्रण रहा। कोटा के जनसामान्य में भी अंग्रेजों के विरुद्ध तीव्र आक्रोश था। उन्होंने विद्रोहियों को अपना समर्थन व सहयोग दिया। जनवरी, 1858 में करौली से सैनिक सहायता मिलने पर महाराव के सैनिकों ने क्रांतिकारियों को गढ़ से खदेड़ दिया। किन्तु कोटा शहर को क्रांतिकारियों से मुक्त कराना अभी शेष था। 22 मार्च, 1858 को जनरल राबर्ट्स के नेतृत्व में एक सेना ने कोटा शहर को विद्रोहियों से मुक्त करवाया।

टोंक का नवाब वजीरुद्दौला अंग्रेज समर्थक था। लेकिन टोंक की जनता एवं सेना की सहानुभूति क्रांतिकारियों के साथ थी। सेना का एक बड़ा भाग विद्रोहियों से मिल गया तथा इन सैनिकों ने नीमच के सैनिकों के साथ नवाब के किले को घेर लिया। सैनिकों ने नवाब से अपना वेतन वसूल किया और नीमच की सेना के साथ दिल्ली चले गए। नवाब के मामा मीर आलम खाँ ने विद्रोहियों का साथ दिया। 1858 ई. के प्रारम्भ में तांत्या टोपे के टोंक पहुँचने पर जनता ने तांत्या को सहयोग दिया एवं टोंक का जागीरदार नासिर मुहम्मद खाँ ने भी तांत्या का साथ दिया, जबकि नवाब ने अपने–आपको किले में बन्द कर लिया।

धौलपुर महाराजा भगवन्त सिंह अंग्रेजों का पक्षधर था। अक्टूबर, 1857 में ग्वालियर तथा इंदौर के क्रांतिकारी सैनिकों ने धौलपुर में प्रवेश किया। धौलपुर राज्य की सेना तथा अधिकारी क्रांतिकारियों से मिल गये। विद्रोहियों ने दो महीने तक राज्य पर अपना अधिकार बनाये रखा। दिसम्बर, 1857 में पटियाला की सेना ने धौलपुर से क्रांतिकारियों को भगा दिया।

1857 में **भरतपुर** पर पोलिटिकल एजेन्ट का शासन था। अतः भरतपुर की सेना विद्रोहियों को दबाने के लिए भेजी गयी। परन्तु भरतपुर की मेव व गुर्जर जनता ने क्रांतिकारियों का साथ दिया। फलस्वरूप अंग्रेज अधिकारियों

ने भरतपुर छोड़ दिया। मगर भरतपुर से विद्रोहियों के चले जाने पर वहाँ तनाव का वातावरण बना रहा।

करौली के शासक महाराव मदनपाल ने अंग्रेज अधिकारियों का साथ दिया। महाराव ने अपनी सेना अंग्रेजों को सौंप दी तथा कोटा महाराव की सहायता के लिए भी अपनी सेना भेजी। उसने अपनी जनता से विद्रोह में भाग न लेने व विद्रोहियों का साथ न देने की अपील की।

अलवर भी क्रांतिकारी भावनाओं से अछूता नहीं था। अलवर के दीवान फैजुल्ला खाँ की सहानुभूति क्रांतिकारियों के साथ थी। महाराजा बन्नेसिंह ने अंग्रेजों की सहायतार्थ आगरा सेना भेजी। अलवर राज्य की गुर्जर जनता की सहानुभूति भी क्रांतिकारियों के साथ थी।

बीकानेर महाराज सरदारसिंह राजस्थान का अकेला ऐसा शासक था जो सेना लेकर विद्रोहियों को दबाने के लिए राज्य से बाहर भी गया। महाराजा ने पंजाब में विद्रोह को दबाने में अंग्रेजों का सहयोग किया। महाराजा ने अंग्रेजों को शरण तथा सुरक्षा भी प्रदान की। अंग्रेज विरोधी भावनाओं पर महाराजा ने कड़ा रूख अपनाकर उन पर नियंत्रण रखा।

मेवाड़ महाराणा स्वरूपसिंह ने अपनी सेना विद्रोहियों को दबाने के लिए अंग्रेजों की सहायतार्थ भेजी। उधर महाराणा के सम्बन्ध न तो अपने सरदारों से अच्छे थे और न कम्पनी सरकार से। महाराणा अपने सामंतों को प्रभावहीन करना चाहता था। इस समय महाराणा और कम्पनी सरकार दोनों को ही एक–दूसरे की आवश्यकता थी। मेरठ विद्रोह की सूचना आने पर मेवाड़ में भी विद्रोही गतिविधियों पर अंकुश लगाने के लिए आवश्यक कदम उठाये गये। नीमच के क्रांतिकारी नीमच छावनी में आग लगाने के बाद मार्ग के सैनिक खजानों को लूटते हुए शाहपुरा पहुँचे। शाहपुरा मेवाड़ का ही ठिकाना था। शाहपुरा के शासक ने क्रांतिकारियों को सहयोग प्रदान किया। मेवाड़ की सेना क्रांतिकारियों का पीछा करते हुए शाहपुरा पहुँची तथा स्वयं कप्तान भी शाहपुरा आ गया परन्तु शाहपुरा के शासक ने किले के दरवाजे नहीं खोले। महाराणा ने अनेक अंग्रेजों को शरण तथा सुरक्षा भी प्रदान की। यद्यपि राज्य की जनता में अंग्रेजों के विरुद्ध रोष विद्यमान था। जनता ने विद्रोह के दौरान रेजीडेण्ट को गालियाँ निकालकर अपने गुस्से का इजहार किया। मेवाड़ के सलूम्बर व कोठारिया के सामन्तों ने क्रांतिकारियों का सहयोग दिया। इन सामन्तों ने ठाकुर कुशालसिंह व तांत्या टोपे की सहायता की।

बाँसवाड़ा का शासक महारावल लक्ष्मण सिंह भी विद्रोह के दौरान अंग्रेजों का सहयोगी बना रहा। 11 दिसम्बर, 1857 को तांत्या टोपे ने बाँसवाड़ा पर अधिकार कर लिया। महारावल राजधानी छोड़कर भाग गया। राज्य के सरदारों ने विद्रोहियों का साथ दिया।

डूँगरपुर, जैसलमेर, सिरोही और बूँदी के शासकों ने भी विद्रोह के दौरान अंग्रेजों की सहायता की।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि राजपूताने में नसीराबाद, आउवा, कोटा, एरिनपुरा तथा देवली सैनिक विद्रोह एवं क्रांति के प्रमुख केन्द्र थे। इनमें भी कोटा सर्वाधिक प्रभावित स्थान रहा। कोटा की क्रांति की यह भी उल्लेखनीय बात रही कि इसमें राज्याधिकारी भी क्रांतिकारियों के साथ थे तथा उन्हें जनता का प्रबल समर्थन था। वे चाहते थे कोटा का महाराव अंग्रेजों के विरुद्ध हो जाये तो वे महाराव का नेतृत्व स्वीकार कर लेंगे किन्तु महाराव इस बात पर सहमत नहीं हुए। आउवा का ठाकुर कुशालसिंह को मारवाड़ के साथ मेवाड़ के कुछ सामंतों एवं जनसाधारण का समर्थन एवं सहयोग प्राप्त होना असाधारण बात थी। एरिनपुरा छावनी के पूर्बिया सैनिकों ने भी उसके अंग्रेज विरोधी संघर्ष में साथ दिया था। जोधपुर लीजियन के क्रांतिकारी सैनिकों ने आउवा के ठाकुर के नेतृत्व में लेफ्टिनेंट हेथकोट को हराया था। आउवा के विद्रोह को ब्रिटिश सर्वोच्चता के विरुद्ध जन संग्राम के रूप में देखने पर किसी को कोई आपत्ति नहीं होना चाहिये। जयपुर, भरतपुर, टोंक में जनसाधारण ने अपने शासकों की नीति के विरुद्ध विद्रोहियों का साथ दिया। धौलपुर में क्रांतिकारियों ने राज्य प्रशासन अपने हाथों में ले लिया था।

1857 के स्वतंत्रता संग्राम के दौरान राजस्थान की जनता एवं जागीरदारों ने विद्रोहियों को सहयोग एवं समर्थन दिया। तांत्या टोपे को भी राजस्थान की जनता एवं कई सामन्तों ने सहायता प्रदान की। कोटा, टोंक, बाँसवाड़ा और भरतपुर राज्यों पर कुछ समय तक विद्रोहियों का अधिकार रहा, जिसे जन समर्थन प्राप्त था। राजस्थान की जनता ने अंग्रेजों के विरुद्ध घृणा का खुला प्रदर्शन किया। उदयपुर में कप्तान शावर्स को बुरा–भला कहा गया, जबकि जोधपुर में कप्तान सदरलैण्ड के स्मारक पर पत्थर बरसाये। फिर भी विद्रोहियों में किसी सर्वमान्य नेतृत्व का न होना, आपसी समन्वय एवं रणनीति की कमी, शासकों का असहयोग तथा साधनों एवं शस्त्रों की कमी के कारण यह क्रांति असफल रही।

क्रांति का समापन

क्रांति का अन्त सर्वप्रथम दिल्ली में हुआ, जहाँ 21 सितम्बर, 1857 को मुगल बादशाह को परिवार सहित बन्दी बना लिया। जून, 1858 तक अंग्रेजों ने अधिकांश स्थानों पर पुनः अपना नियन्त्रण स्थापित कर लिया। किंतु तांत्या टोपे ने संघर्ष जारी रखा। अंग्रेजों ने उसे पकड़ने में सारी शक्ति लगा दी। यह स्मरण रहे कि तांत्या टोपे ने राजस्थान के सामन्तों तथा जन साधारण में उत्तेजना का संचार किया था। परन्तु राजपूताना के सहयोग के अभाव में तांत्या टोपे को स्थान–स्थान पर भटकना पड़ा। अंत में, उसे पकड़ लिया गया और फांसी पर चढ़ा दिया।

क्रांति के दमन के पश्चात् कोटा के प्रमुख नेता जयदयाल तथा मेहराब खाँ को एजेन्सी के निकट नीम के पेड़ पर सरे आम फांसी दे दी गई। क्रांति से सम्बन्धित अन्य नेताओं को भी मौत के घाट उतार दिया अथवा जेल में डाल दिया। अंग्रेजों द्वारा गठित जांच आयोग ने मेजर बर्टन तथा उसके पुत्रों की हत्या के सम्बन्ध में महाराव रामसिंह द्वितीय को निरपराध किंतु उत्तरदायी घोषित किया। इसके दण्डस्वरूप उसकी तोपों की सलामी 15 तोपों से घटाकर 11 तोपें कर दी गई। जहाँ तक आउवा ठाकुर का प्रश्न है, उसने नीमच में अंग्रेजों के सामने आत्मसमर्पण (8 अगस्त, 1860) कर दिया था। उस पर मुकदमा चलाया गया, किंतु बरी कर दिया गया।

परिणाम

यद्यपि 1857 की क्रांति असफल रही किंतु उसके परिणाम व्यापक सिद्ध हुए। क्रांति के पश्चात् यहाँ के नरेशों को ब्रिटिश सरकार द्वारा पुरस्कृत किया गया क्योंकि राजपूताना के शासक उनके लिए उपयोगी साबित हुए थे। अब ब्रिटिश नीति में परिवर्तन किया गया। शासकों को संतुष्ट करने हेतु 'गोद निषेध' का सिद्धान्त समाप्त कर दिया गया। राजकुमारों के लिए अंग्रेजी शिक्षा का प्रबन्ध किया जाने लगा। अब राज्य कम्पनी शासन के स्थान पर ब्रिटिश नियंत्रण में सीधे आ गये। साम्राज्ञी विक्टोरिया की ओर से की गई घोषणा (1858) द्वारा देशी राज्यों को यह आश्वासन दिया गया कि देशी राज्यों का अस्तित्व बना रहेगा। क्रांति के पश्चात् नरेशों एवं उच्चाधिकारियों की जीवन शैली में पाश्चात्य प्रभाव स्पष्ट रूप से देखने को मिलता हैं। अब राजस्थान के राजे–महाराजे अंग्रेजी साम्राज्य की व्यवस्था में सेवारत होकर आदर प्राप्त करने व उनकी प्रशंसा करने के आदी हो गए थे। जहाँ तक सामन्तों का प्रश्न है, उसने खुले रूप में ब्रिटिश सत्ता का विरोध किया था। अतः क्रांति के पश्चात् अंग्रेजों की नीति सामन्त वर्ग को अस्तित्वहीन बनाने की रही। जागीर क्षेत्र की जनता की दृष्टि में सामन्तों की प्रतिष्ठा कम करने का प्रयास किया गया। सामन्तों को बाध्य किया गया कि से सैनिकों को नगद वेतन देवें। सामन्तों के न्यायिक अधिकारों को सीमित करने का प्रयास किया। उनके विशेषाधिकारों पर कुठाराघात किया गया। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि सामन्तों का सामान्य जनता पर जो प्रभाव था, ब्रिटिश नीतियों के कारण कम करने का प्रयास किया गया।

क्रान्ति के बाद अंग्रेजी सरकार ने रेल्वे व सड़कों का जाल बिछाने का काम शुरू किया, जिससे आवागमन की व्यवस्था तेज व सुचारू हो सके। मध्यम वर्ग के लिए शिक्षा

का प्रसार कर एक शिक्षित वर्ग खड़ा किया गया, जो उनके लिए उपयोगी हो सके। अर्थतन्त्र की मजबूती के लिए वैश्य समुदाय को संरक्षण देने की नीति अपनाई। बाद में वैश्य समुदाय राजस्थान में और अधिक प्रभावी बन गया।

1857 की क्रांति ने अंग्रेजों की इस धारणा को निराधार सिद्ध कर दिया कि मुगलों एवं मराठों की लूट से त्रस्त राजस्थान की जनता ब्रिटिश शासन की समर्थक है। परन्तु यह भी सच है कि भारत विदेशी जुये को उखाड़ फेंकने के प्रथम बड़े प्रयास में असफल रहा। राजस्थान में फैली क्रांति की ज्वाला ने अर्द्ध शताब्दी के पश्चात् भी स्वतन्त्रता संग्राम के दौरान लोगों को संघर्ष करने की प्रेरणा दी, यही क्रांति का महत्त्व समझना चाहिए।

क्रांति का स्वरूप (1857)

1857 की घटना को लम्बे समय तक सैनिक विद्रोह या विप्लव के नाम से सम्बोधित किया जाता रहा। परन्तु आधुनिक विद्वानों, इतिहासकारों एवं शिक्षाविदों के विचार –विमर्श के बाद यह माना गया कि क्रान्ति का स्वरूप केवल सैनिक विद्रोह ही नहीं था बल्कि यह राष्ट्रीय जन क्रान्ति थी। फिर भी किसी घटना पर मत विभेद होना अनुचित नहीं है।

निःसन्देह 1857 का वर्ष राजस्थान सहित भारत के लिए यादगार वर्ष रहा, क्योंकि ऐसी महान घटना भारतीय इतिहास की पहली घटना थी। भावी स्वतन्त्रता संग्राम ने देशभक्तों और विशेष रूप से क्रांतिकारियों पर असाधारण प्रभाव ड़ाला। यह घटना उनके लिए प्रेरणा का स्त्रोत बनी। सम्पूर्ण राष्ट्र द्वारा 1857 की 150 वीं जयन्ती वर्ष 2007 में उत्साहपूर्वक मनाना ही घटना के महत्व एवं प्रभाव को दर्शाती है। वास्तविक अर्थो में विद्रोह के स्वरूप के बारे में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि किसी क्रांति का स्वरूप केवल उस क्रांति के प्रारम्भ करने वालों के लक्ष्यों से निर्धारित नहीं हो सकता, बल्कि इससे निर्धारित होता है कि उस क्रांति ने अपनी क्या छाप छोड़ी।

1857 की घटना के स्वरूप को लेकर विद्वानों में अनेक मत हैं। ब्रिटिश इतिहासकारों ने इसे सैनिक विद्रोह कहा है जबकि गैर ब्रिटिश विद्वानों ने इस घटना को जन आक्रोश की संज्ञा दी है। भारतीय इतिहासकारों में प्रमुख रूप से आर.सी. मजूमदार, सुरेन्द्र नाथ सेन एंव अशोक मेहता आदि ने 1857 की महान घटना को जन साधारण का राष्ट्रीय आन्दोलन कहा है, जिसमें हिन्दू–मुस्लिम सबने मिलकर ब्रिटिश शासन का विरोध किया।

यहाँ हमारे लिए यह उचित होगा कि हम राजस्थान के परिप्रेक्ष्य में इस घटना की समीक्षा करें। मारवाड़ के ख्यात लेखक बांकीदास, बूँदी के साहित्यकार सूर्यमल्ल मीसण ने अपनी कृतियों अथवा पत्रों के माध्यम से गुलामी करने वाले राजपूत शासकों को धिक्कारा है। सूर्यमल्ल मीसण ने पीपल्या के ठाकुर फूलसिंह को लिखे एक पत्र में राजपूत शासकों को गुलामी करने की मनोवृत्ति की कटु आलोचना की थी। आउवा व अन्य कुछ ठाकुरों ने, जिनमें सलूम्बर भी शामिल है, अपने क्षेत्रों में चारणों द्वारा ऐसे गीत रचवाये, जिनमें उनकी छवि अंग्रेज विरोधी मालूम होती है।

राजस्थान में क्रांति की शुरुआत 1857 से हुई, जब यहाँ के ब्रिटिश अधिकारी भागकर ब्यावर की ओर गये, तब रास्ते में ग्रामीण उन पर आक्रमण करने के लिए खड़े थे। कप्तान प्रिचार्ड ने स्वीकार किया है कि यदि बम्बई लॉन्सर के सैनिक उनके साथ न होते तो उनका बचे रहना आसान नहीं था। उसके अनुसार मार्ग में किसी भी भारतीय ने उनके प्रति सहानुभूति प्रदर्शित नहीं की। उसने आगे लिखा है कि इस घटना के 24 घण्टे पहले ऐसी स्थिति नहीं थी। इन अंग्रेजों के घरेलू नौकरों में उनके प्रति उपेक्षा का भाव देखा गया। क्रांतिकारी जिस मार्ग से भी गुजरे, लोगों ने उनका हार्दिक स्वागत किया। मध्य भारत का लोकप्रिय नेता तॉत्या टोपे जहाँ भी गया, जनता ने उसका अभिनन्दन किया तथा उसे रसद आदि प्रदान की। जोधपुर के सरकारी रिकार्ड में यह स्पष्ट उल्लेख मिलता है कि जब ए.जी.जी. जॉर्ज लॉरेन्स ने आउवा पर चढ़ाई की तब सर्वप्रथम गाँव वालों की तरफ से आक्रमण हुआ था। मारवाड़ में ऐसी परम्परा थी कि जब किसी बड़े अधिकारी की मृत्यु होती थी

तब राजकीय शोक मनाते हुए किले में नौबत बजाना बन्द हो जाता था। किंतु कप्तान मॉक मेसन की मृत्यु के बाद ऐसा नहीं किया गया, जबकि किलेदार अनाड़सिंह की मृत्यु होने पर किले में नौबत बजाना बन्द रख गया। आउवा ठाकुर कुशालसिंह द्वारा ब्रिटिश सेनाओं की टक्कर लेने से घटना को उस समय के साहित्य में सर्वोच्च स्थान प्रदान किया गया है।

राजस्थान के संदर्भ में 1857 की क्रांति का अध्ययन और विश्लेषण करने से यह विदित होता है कि राजस्थान में यह महान् घटना किसी संयोग का परिणाम नहीं थी, अपितु यह तो ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध सर्वव्यापी रोष का परिणाम थी। यही कारण है कि आउवा की जनता सैनिकों के जाने के बाद भी लड़ती रही। नसीराबाद, नीमच और एरिनपुरा की घटनाएँ निःसन्देह भारतव्यापी क्रांति का अंग थी, लेकिन कोटा और आउवा की घटनाएँ स्थानीय परिस्थितियों का परिणाम थी और उनमें ब्रिटिश विरोधी भावना निर्विवाद रूप से विद्यमान थी। टोंक और कोटा की जनता ने तो विद्रोहियों से मिलकर संघर्ष में भाग लिया था।

जन आक्रोश के कारण ही भरतपुर के शासक ने मोरीसन को राज्य छोड़ने का परामर्श दिया था। कोटा के महाराव ने भी मेजर बर्टन को कोटा नहीं आने के लिए कहा था। जन आक्रोश के कारण ही मजबूरीवश टोंक के नवाब ने अंग्रेजों को अपने राज्य की सीमा से नहीं गुजरने के लिए कहा था।

अंत में, यह कहा जा सकता है कि राजस्थान की जनता अंग्रेजों को फिरंगी कहती थी और अपने धर्म को बनाये रखने के लिए उनसे मुक्ति चाहती थी। कुछ स्थानों पर स्थानीय जनता ने भी इस संघर्ष में भाग लिया था, तो अन्य स्थानों पर जनता का नैतिक समर्थन प्राप्त था। यह कहने में हमें संकोच नहीं करना चाहिए कि 1857 का यह संघर्ष विदेशी शासन से मुक्त होने का प्रथम प्रयास था। इस क्रांति को यदि राजस्थान का प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम कहा जाये तो सम्भवतः अनुचित नहीं होगा।

II

राजनीतिक जागरण एवं स्वतन्त्रता आन्दोलन में विभिन्न तत्त्वों का योगदान

1857 की क्रांति की भूमिका यद्यपि राजस्थान में कुछ स्थानों पर अत्यधिक प्रभावी रही थी किंतु अधिकांश राज्य इससे अछूते रहे। 1857 की क्रांति की असफलता के कारण देश के अनुरूप राजस्थान में भी अंग्रेजों का वर्चस्व स्थापित हो गया। राजस्थान के अधिकांश शासक अंग्रेजों के प्रति श्रद्धा एवं भक्ति प्रदर्शन की दौड़ में शामिल हो गये। ऐसा करके वे स्वयं को गौरवान्वित समझने लगे। ऐसी परिस्थितियों में राज्य की प्रजा में भी अंग्रेजों की अजेयता की भावना का घर करना अस्वाभाविक नहीं था। राजकीय कार्यों एवं जन कल्याण की भावना के प्रति शासकों की उदासीनता ने प्रजा के कष्टों को असहनीय बना दिया। सामन्तों की शोषण प्रवृत्ति यथावत बनी। परन्तु सदैव एक जैसी स्थिति बनी नहीं रह सकती है। स्थिति में बदलाव के संकेत बाहर से नहीं, अन्दर से ही आने थे। राज्य की जनता ही बदलाव की संवाहक बनी। देरी से ही सही, राजस्थान में राजनीतिक चेतना का विकास हुआ। राष्ट्र के सोच में परिवर्तन के साथ देशी रियासतों में भी राष्ट्रवादी भावनाओं ने जन्म लिया। जन आन्दोलनों ने भी स्थानीय स्तर पर अपनी जगह बनाकर माहौल को उत्तेजित कर दिया। राज्य की दमनात्मक नीतियों एवं ब्रिटिश सरकार के कठोर दृष्टिकोण के बावजूद जनता ने अपने अधिकारों की लड़ाई लड़ी। शासन में सुधार एवं भागीदारी के लिए आवाज उठाई। आजादी की अन्तिम लड़ाई के दौरान राष्ट्र के बड़े नेताओं को इस बात का अहसास हो गया था कि अब देशी रियासतों को पराधीन बनाकर अधिक समय तक नहीं रखा जा सकता। आखिर, राष्ट्र की स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् राजस्थान की देशी रियासतों का भी भारतीय संघ में विलीनीकरण हो गया।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि राजस्थान में स्वतन्त्रता से पूर्व जनजागरण लाने का कार्य जिन नेताओं ने किया, उनमें देशभक्ति का जलवा था। वे समकालीन समाज एवं राजनीति को लेकर चिन्तित एवं व्यथित थे। वे

क्रांतिकारी विचारों से युक्त थे। उनके नजरिये में स्वतन्त्रता आन्दोलन से तात्पर्य केवल राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने से नहीं था। वे सामाजिक समस्याओं एवं कुरीतियों के निराकरण, स्त्रियों की दुर्दशा सुधारने तथा कृषकों का शोषण, निरक्षरता, बेगारी आदि के उन्मूलन के लिए भी कृत संकल्प थे। वे चरखा, खादी, ग्राम–स्वावलम्बन, सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के पक्ष में थे। देशी रियासतों में 1934 और विशेष रूप से 1938 के बाद चला संघर्ष भी इसी स्वतन्त्रता संघर्ष का हिस्सा था।

राजनीतिक जागरण एवं स्वतन्त्रता आन्दोलन में जिन मुख्य तत्त्वों का योगदान रहा, उनका संक्षिप्त विवेचन इस प्रकार है –

जनजातीय एवं किसान आन्दोलन

राजस्थान में राजनीतिक चेतना का श्रीगणेश कर यहाँ की जनजातियों एवं किसानों ने इतिहास रच दिया। राजस्थान के आदिवासी क्षेत्रों में भील, मीणा, गरासिया आदि जनजातियाँ प्राचीन काल से रहती आयी हैं। अपने परम्परागत अधिकारों के उल्लंघन की स्थिति में इन्होंने अपना विरोध प्रकट किया, चाहे वह फिर अंग्रेजों के विरुद्ध हो या फिर देशी शासक के विरुद्ध । यहाँ के किसानों ने भी अपने ऊपर होने वाले अत्याचारों, शोषण एवं आर्थिक मार के विरोध में अपना विरोध जताकर राजनीतिक व्यवस्था को चुनौती दे डाली। अंग्रेजों का आतंक, रियासतों की अव्यवस्था, जागीरदारों का शोषण, कृषकों के परम्परागत अधिकारों का उल्लंघन आदि कारणों से कृषकों में असंतोष पनपा। जागीरी क्षेत्र में कृषकों का असंतोष जागीरदारों के जुल्मों के विरुद्ध था। जागीरदारों को कृषकों के हितों की कोई चिन्ता नहीं थी। जागीरदार अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र रहने के कारण उसे शासकों अथवा अंग्रेज सरकार से संरक्षण प्राप्त था।

राजस्थान में स्वतन्त्रता आन्दोलन एवं आदिवासियों में जनजागृति का शंखनाद फूंकने का योगदान देने वालों में मोतीलाल तेजावत (1888–1963) का विशिष्ट स्थान है। तेजावत का जन्म उदयपुर जिले में एक सामान्य ओसवाल परिवार में हुआ था। तेजावत अपने बलबूते पर एक बड़ा आन्दोलन "एकी आन्दोलन" (1921–22) खड़ा करने में सफल रहा। उन्होंने जिस प्रकार आदिवासियों का विश्वास प्राप्त किया, वह एकदम अकल्पनीय लगता है। तेजावत से पहले गोविन्द गुरू (1858–1931) ने वॉगड़ प्रदेश में आदिवासी भीलों के उद्धार के लिए 'भगत आन्दोलन' (1921–1929) चलाया था। इससे पूर्व गोविन्द गुरु ने 1905 में 'सम्प सभा' की स्थापना कर इसके माध्यम से भीलों में सामाजिक एवं राजनीतिक जागृति पैदा कर उन्हें संगठित किया।

गोविन्द गुरु ने मेवाड़, डूँगरपुर, ईडर, मालवा आदि क्षेत्रों में बसे भीलों एवं गरासियों को 'सम्प सभा' के माध्यम से संगठित किया। उन्होंने एक ओर तो इन आदिवासी जातियों में व्याप्त सामाजिक बुराइयों और कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया तो दूसरी ओर, उनको अपने मूलभूत अधिकारों का अहसास कराया। गोविन्द गुरु ने 'सम्प सभा' का प्रथम अधिवेशन गुजरात में स्थित मानगढ़ की पहाड़ी पर किया। इस अधिवेशन में गोविन्द गुरु के प्रवचनों से प्रभावित होकर हजारों भील–गरासियों ने शराब छोड़ने, बच्चों को पढ़ाने और आपसी झगड़ों को अपनी पंचायत में ही सुलझाने की शपथ ली। गोविन्द गुरु ने उन्हें बैठ–बेगार और गैर वाजिब लागतें नहीं देने के लिए आह्वान किया। इस अधिवेशन के पश्चात् हर वर्ष आश्विन शुक्ला पूर्णिमा को मानगढ़ की पहाड़ी पर सम्प सभा का अधिवेशन होने लगा। भीलों में बढ़ती जागृति से पड़ोसी राज्य सावधान हो गये। अतः उन्होंने ब्रिटिश सरकार से प्रार्थना की कि भीलों के इस संगठन को सख्ती से दबा दिया जावे। हर वर्ष की भाँति जब 1913 में मानगढ़ की पहाड़ी पर सम्प सभा का विराट् अधिवेशन हो रहा था, तब ब्रिटिश सेना ने मानगढ़ की पहाड़ी को चारों ओर से घेर लिया। उसने भीड़ पर गोलियों की बौछार कर दी। फलस्वरूप 1500 आदिवासी घटना स्थल पर ही शहीद हो गये। गोविन्द गुरु को गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें फांसी की सजा सुनाई गई। परन्तु भीलों में प्रतिक्रिया होने के डर से उनकी यह सजा 20 वर्षों के

कारावास में तब्दील कर दी। अंत में वे 10 वर्ष में ही रिहा हो गये। गोविन्द गुरु अहिंसा के पक्षधर थे व उनकी श्वेत ध्वजा शांति की प्रतीक थी। आज भी भील समाज में गोविन्द गुरु का पूजनीय स्थान है।

राजस्थान के आदिवासियों में गोविन्द गुरु के पश्चात् सबसे महत्त्वपूर्ण स्थान है, मोतीलाल तेजावत का। आदिवासियों पर ढाये जाने वाले जुल्मों से उद्वेलित होकर उन्होंने ठिकाने की नौकरी छोड़ दी। उन्होंने 1921 में भीलों को जागीरदारों द्वारा ली जाने वाली बैठ–बेगार और लाग–बागों के प्रश्न को लेकर संगठित करना प्रारम्भ किया। शनैः शनैः यह आन्दोलन सिरोही, ईडर, पालनपुर, विजयनगर आदि राज्यों में भी विस्तार पाने लगा। तेजावत ने अपनी मांगों को लेकर भीलों का एक विराट् सम्मेलन विजयनगर राज्य के नीमड़ा गाँव में आयोजित किया। मेवाड़ एवं अन्य पड़ोसी राज्यों की सरकारें भीलों के संगठित होने से चिंतित होने लगी। अतः इन राज्यों की सेनाएँ भीलों के आन्दोलन को दबाने के लिए नीमड़ा पहुँच गयी। सेना द्वारा सम्मेलन स्थल को घेर लेने और गोलियाँ चलाने के कारण 1200 भील मारे गये और कई घायल हो गये। मोतीलाल तेजावत पैर में गोली लगने से घायल हो गये। लोग उन्हें सुरक्षित स्थान ले गये, जहाँ उनका इलाज किया गया। मोतीलाल तेजावत भूमिगत हो गये, इस कारण मेवाड़, सिरोही आदि राज्यों की पुलिस उनको पकड़ने में नाकामयाब रहीं। अंत में, 8 वर्ष पश्चात् 1929 में गाँधीजी की सलाह पर तेजावत ने अपने आपको ईडर पुलिस के सुपुर्द कर दिया। 1936 में उन्हें रिहा कर दिया गया। इसके पश्चात् भी नजरबन्द एवं जेल का लुका–छिपी खेल चलता रहा किन्तु उन्होंने सामाजिक सरोकारों से कभी मुँह नहीं मोड़ा।

भील–गरासियों के हितों के लिए देश की आज़ादी में अन्य जिन जन नेताओं का योगदान रहा, उनमें प्रमुख थे – माणिक्यलाल वर्मा, भोगीलाल पण्ड्या, मामा बालेश्वर दयाल, बलवन्तसिंह मेहता, हरिदेव जोशी, गौरीशंकर उपाध्याय आदि। इन्होंने भील क्षेत्रों में शिक्षण संस्थाएँ, प्रौढ़ शालाएँ, हॉस्टल आदि स्थापित किये। साथ ही, उन आदिवासियों को कुप्रवृत्तियों को छौड़ने के लिए प्रेरित किया।

राजस्थान के देशी रियासतों के इतिहास में बिजौलिया किसान आन्दोलन (1897–1941) का विशिष्ट स्थान है। दीर्घ काल तक चलने वाले इस आन्दोलन में किसान वर्ग ठिकाने और मेवाड़ राज्य की सम्मिलित शक्ति से जूझता रहा। इस आन्दोलन में केवल पुरुषों ने ही भाग नहीं लिया, बल्कि स्त्रियों व बालकों ने भी सक्रियता दिखायी। यह आन्दोलन पूर्णतया स्वावलम्बी एवं अहिंसात्मक था। यह आन्दोलन प्रारम्भ में विजयसिंह पथिक के नेतृत्व में चला। इस आन्दोलन में कृषक वर्ग ने अभूतपूर्व साहस, धैर्य और बलिदान का परिचय दिया, चाहे यह अपने मंतव्य में सफल नहीं हो सका। यह आन्दोलन सामंती व्यवस्था के विरुद्ध भयंकर प्रहार था। यह आन्दोलन मेवाड़ राज्य की सीमा तक ही सीमित नहीं रहा। इस आन्दोलन ने कालान्तर में माणिक्यलाल वर्मा जैसे तेजस्वी नेता को जन्म दिया, जो बाद में मेवाड़ राज्य में उत्तरदायी सरकार की स्थापना हेतु अनेक आन्दोलनों का प्रणेता बना। हमें यह जान लेना चाहिए कि राजस्थान में कृषक आन्दोलन स्वंय के बलबूते पर था और इसका नेतृत्व पूर्णतः गैर पेशेवर नेताओं एवं अत्यन्त साधारण किसान वर्ग ने किया था, चाहे उनका आधार जातिगत रहा। बिजौलिया आन्दोलन में धाकड़ जाति की महती भूमिका रही। सीकर और शेखावटी आन्दोलनों में जाट जाति का वर्चस्व रहा। मेवाड़ और सिरोही राज्यों के किसान आन्दोलनों के पीछे भील और गरासिया जातियों की शक्ति रही। इसी प्रकार अलवर और भरतपुर राज्यों में मेवों की मुख्य भूमिका रही। इस प्रकार इन आन्दोलनों को सुनियोजित रूप से संचालित करने का श्रेय जाति पंचायतों एवं जाति संगठनों को दिया जा सकता है।

राजस्थान के किसान आन्दोलनों में बरड़ (बूँदी) किसान आन्दोलन (1921–43), नीमराणा (अलवर) किसान आन्दोलन (1923–25), बेगू (चित्तौड़गढ़), किसान आन्दोलन (1922–25), शेखावाटी किसान आन्दोलन (1924–47), मारवाड़ किसान आन्दोलन (1924–47) प्रमुख है। यह स्मरणीय है कि इन

किसान आन्दोलनों में स्त्रियों ने बढ़–चढ़कर भाग लिया। राजस्थान के ये किसान आन्दोलन सामन्त विरोधी स्वरूप लिये हुये थे और इन्होंने कालान्तर में जागीरदारी उन्मूलन की भूमिका तैयार की। राजस्थान के किसान आदोलनों में जबरदस्त उत्साह देखा जा सकता है। ये आन्दोलन सामान्यतः अहिंसात्मक रहे। इन आन्दोलनों ने प्रजामण्डल की जमीन तैयार कर दी थी।

दलित आन्दोलन

स्वतन्त्रतापूर्व राजस्थान में दलितों में भी क्रियाशील जागरण दिखाई देता है। दलितों की स्वतन्त्रता आन्दोलन में भूमिका उनके सामाजिक एवं राजनीतिक जागृति का प्रतीक थीं। यह ध्यान देन योग्य है कि दलितों ने राजस्थान में प्रजामण्डल आन्दोलनों में सक्रिय भाग लेकर राजस्थान में आजादी के आन्दोलन को विस्तृत सामाजिक आधार प्रदान किया। 1920 और 1934 के समय दलितों ने अजमेर–मेरवाड़ा के राष्ट्रीय आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया। राजपूताना के दलित जातियों में सामाजिक और राजनीतिक जागृति के चिह्न दिखाई देते हैं। इसका विशेष कारण यह था कि कोटा, जयपुर, धौलपुर और भरतपुर की रियासतों में दलितों का बाहुल्य था। अतः इन राज्यों में दलितों ने सामाजिक और राजनीतिक आन्दोलनों में सक्रिय भूमिका प्रदर्शित की। इसी कारण इन राज्यों ने इनकी मांगों की ओर ध्यान दिया। 1945–46 में उणियारा में बैरवा जाति ने नागरिक असमानता विरोधी आन्दोलन चलाकर अपनी सक्रियता का परिचय दिया।

आर्य समाज की भूमिका

राजस्थान में राजनीतिक चेतना जागृत करने एवं शिक्षा प्रसार में स्वामी दयानंद सरस्वती एवं आर्यसमाज ने महत्त्वपूर्ण कार्य किया। स्वामी दयानंद राजस्थान में सर्वप्रथम 1865 ई. में करौली के राजकीय अतिथि के रूप में आए। उन्होंने किशनगढ़, जयपुर, पुष्कर एवं अजमेर में अपने उपदेश दिए। स्वामीजी का राजस्थान में दूसरी बार आगमन 1881 ई. में भरतपुर में हुआ। वहाँ से स्वामीजी जयपुर, अजमेर, ब्यावर, मसूदा एवं बनेड़ा होते हुए चित्तौड़ पहुँचे, जहाँ कविराज श्यामलदास ने उनका स्वागत किया। महाराणा सज्जनसिंह (1874–1884 ई.) के अनुरोध पर स्वामीजी उदयपुर पहुँचे, वहाँ महाराणा ने उनका आदर–सत्कार किया। स्वामी दयानंद सरस्वती ने उदयपुर में आर्यधर्म का प्रचार किया। उनके उपदेशों को सुनने के लिए मेवाड़ के अनेक सरदार नित्य उनकी सभा में आया करते थे।

अगस्त, 1882 को स्वामी दयानन्द दुबारा उदयपुर पहुँचे। उदयपुर में स्वामीजी ने 'सत्यार्थ प्रकाश' के द्वितीय संस्करण की भूमिका लिखी। यहीं फरवरी, 1883 ई. में स्वामीजी के सान्निध्य में 'परोपकारिणी सभा' की स्थापना हुई। कालान्तर में मेवाड़ में विष्णु लाल पंड्या ने आर्य समाज की स्थापना की। 1883 ई. में ही स्वामीजी जोधपुर गए। जोधपुर महाराजा जसवन्तसिंह, सर प्रतापसिंह तथा रावराजा तेजसिंह पर स्वामीजी के उपदेशों का काफी प्रभाव पड़ा। अपने व्याख्यानों में स्वामीजी क्षत्रिय नरेशों के चरित्र संशोधन और गौरक्षा पर विशेष बल दिया करते थे। भरी सभा में उन्होने वेश्यागमन के दोष बतलाये और महाराजा जसवन्तसिंह की 'नन्हीजान' के प्रति प्यार पर उन्हें भी फटकार लगाई। कहा जाता है कि नन्हींजान ने स्वामीजी को विष दिलवा दिया, जिससे उनकी तबीयत बिगड़ गई। स्वामीजी को अजमेर ले जाया गया। काफी चिकित्सा के उपरान्त भी वह स्वस्थ नहीं हुए और अजमेर में ही 1883 ई. में इनका देहान्त हो गया।

दयानन्द सरस्वती ने स्वधर्म, स्वराज्य, स्वदेशी और स्वभाषा पर जोर दिया। उन्होंने प्रसिद्ध ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' को उदयपुर में हिन्दी भाषा में लिखा। अजमेर में 'आर्य समाज' की स्थापना की गई। स्वामी दयानंद सरस्वती एवं आर्य समाज ने राजस्थान में स्वतंत्र विचारों के लिए पृष्ठभूमि तैयार की। आर्य समाज ने हिन्दी भाषा, वैदिक धर्म, स्वदेशी एवं स्वदेशाभिमान की भावना पैदा की। राजस्थान में राजनीतिक जागृति पैदा करने एवं शिक्षा प्रसार के लिए भी आर्य समाज ने सराहनीय कार्य किया। आर्य समाज की शिक्षण संस्थाओं में हिन्दी, अंग्रेजी भाषा के साथ ही वैदिक धर्म एवं संस्कृत

की शिक्षा भी दी जाने लगी। आर्य समाज ने सामाजिक कुरीतियों का विरोध किया। अजमेर में हरविलास शारदा व चान्दकरण शारदा ने सामाजिक कुरीतियों के विरोध में आवाज उठायी। आर्य समाज ने खादी प्रचार, हरिजन उद्धार, शिक्षा के प्रचार–प्रसार को अपना मिशन बनाया। भरतपुर में जनजागृति पैदा करने वाले मास्टर आदित्येन्द्र व जुगल किशोर चतुर्वेदी आर्यसमाज के ही कार्यकर्त्ता थे।

समाचार पत्रों का योगदान

अज्ञानता को मिटाने और जन चेतना के प्रसार में प्रेस की भूमिका निर्णायक होती है। राजस्थान में समाचार पत्रों ने जन जागरण में जो योगदान दिया, उसका प्रमाण बिजौलिया किसान आन्दोलन में देखने को मिला। जब बिजौलिया के अत्याचारों का वर्णन 'प्रताप' नामक समाचार पत्र में छपा तो पूरे देश में इस पर चर्चा होने लगी। राजस्थान के राज्यों के आन्तरिक मामलों का ज्ञान समाचार पत्रों के माध्यम से जनता में पहुँचने लगा। विजय सिंह पथिक, रामनारायण चौधरी, जयनारायण व्यास आदि नेताओं ने राज्य की समस्याओं के विषय में समाचार पत्रों के माध्यम से चर्चा प्रारम्भ की। 'राजपूताना गजट' (1885) और 'राजस्थान समाचार' (1889) बहुत थोड़े समय के पश्चात् ही बन्द हो गये। 1920 में पथिक ने 'राजस्थान केसरी' का प्रकाशन पहले वर्धा से और फिर अजमेर से प्रारम्भ किया। 1922 में राजस्थान सेवा संघ ने 'नवीन राजस्थान' प्रारम्भ किया जिसमें आदिवासी एवं किसान आन्दोलनों का समर्थन किया गया। 1923 में वह बन्द हो गया परन्तु 'तरूण राजस्थान' के नाम से इसका प्रकाशन पुनः प्रारम्भ किया गया। इसमें भी कृषक आन्दोलनों एवं अत्याचारों पर व्यापक चर्चा हुई। इस पत्र के सम्पादन में शोभालाल गुप्त, रामनारायण चौधरी, जयनारायण व्यास आदि नेताओं ने सराहनीय योगदान दिया। जोधपुर, सिरोही तथा अन्य राज्यों के निरंकुश शासकों के विरुद्ध इस पत्र में आवाज उठाई गई। 1923 में ऋषिदत्त मेहता ने ब्यावर से 'राजस्थान' नाम का साप्ताहिक अखबार निकालना प्रारम्भ किया। 1930 के बाद समाचार पत्रों की संख्या बढ़ी। आगे के वर्षों में 'नवज्योति', 'नवजीवन', 'जयपुर समाचार', 'त्याग भूमि', 'लोकवाणी' आदि पत्रों का प्रकाशन प्रारम्भ होने लगा। 'त्याग भूमि' (1927) में गाँधीवादी विचारधारा का प्रतिपादन होता था और इसका सम्पादन हरिभाऊ उपाध्याय ने किया। इसमें गांधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम पर अधिक बल दिया गया। देशभक्ति, समाज सुधार, स्त्रियों के उत्थान सम्बन्धी लेख इसमें सामान्यतया होते थे।

समाचार पत्रों ने राष्ट्रीय स्तर पर राजस्थान की समस्याओं का खुलासा किया। विभिन्न मुद्दों पर राष्ट्रीय सहमति बनाने में योगदान दिया। रियासत से जुड़े आन्दोलनों पर प्रकाश डालकर उन्हें बहस का हिस्सा बनाया। पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से शोषण एवं अत्याचार का पर्दाफाश हुआ, उन पर चर्चा होने लगी। रचनात्मक कार्यक्रमों को अपनाने की प्रेस की अपील का अच्छा असर हुआ। शिक्षित वर्ग चाहे कम था, परन्तु लोग अखबार को दूसरों से सुनने में बड़ी रुचि लेने लगे। पढ़े–लिखे लोगों में भी पत्र–पत्रिकाओं को पढ़ने में रुचि तेजी से बढ़ी।

शासकों की भूमिका

मेवाड़ के महाराणा फतहसिंह, अलवर के महाराजा जयसिंह और भरतपुर के महाराजा कृष्णसिंह बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में राजस्थान के ऐसे शासक थे, जो अपनी प्रगतिशील और राष्ट्रीय विचारधारा और अंग्रेजों को राज्य के अंदरूनी मामलों में दखल देने से रोकने के कारण ब्रिटिश सरकार के कोपभाजन बने। अंग्रेजी शिकंजे से परेशान एवं अपदस्थ मेवाड़ के महाराणा के बारे में 'तरुण राजस्थान' ने अपने 10 जनवरी, 1924 के अंक में लिखा, "यदि महाराणा गोरी सरकार के अन्ध भक्त होते तो शायद मेवाड़ के प्राचीन गौरव का नाश करने वाला यह अत्याचारपूर्ण हस्तक्षेप न हुआ होता।" यह भी उल्लेखनीय है कि अलवर के शासक जयसिंह ने 1903 के आस–पास बाल–विवाह, अनमेल विवाह और मृत्यु भोज पर रोक लगा दी। रियासत की राजभाषा हिन्दी घोषित कर दी। राज्य में पंचायतों का जाल बिछा दिया। महाराजा ने बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय एवं सनातन धर्म कॉलेज,

लाहौर को उदारतापूर्वक वित्तीय सहायता दी। ऐसे प्रगतिशील शासक से ब्रिटिश सरकार का असन्तुष्ट होना स्वाभाविक था। अन्त में, अलवर महाराजा को निर्वासित होना पड़ा। इस प्रकार, राजस्थान के केवल कतिपय शासकों ने ही यहाँ के जन आन्दोलनों के प्रति सहानुभूति रखने एवं प्रगतिशील विचारों के प्रकटीरण की हिम्मत जुटाई, परन्तु अपवाद स्वयं बेमिसाल होते हैं।

व्यापारी वर्ग की भूमिका

सत्ता के निरंकुश प्रयोग के विरुद्ध आवाज उठाने में व्यापारी वर्ग भी पीछे नहीं रहा। प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात् इस वर्ग की धारणा एवं विचारधारा सत्ता वर्ग के विरुद्ध होने लगी। कलकत्ता में एक प्रभावशाली मारवाड़ी मण्डल विकसित हो रहा था, जिसने राष्ट्रीय विचारधारा को प्रोत्साहित करने का निश्चय किया। रियासतों में व्यापारी वर्ग को ठिकानेदारों की अहमन्यता खटकती थी। वे राजनीतिक जागरूकता लाने के लिए अपने धन का प्रयोग करना चाहते थे, जिससे सामन्ती अनुत्तरदायी व्यवहार नियन्त्रित हो सके। रियासतों में राजनीतिक चेतना जागृत करने वालों में कतिपय व्यापारी वर्ग की भूमिका सराहनीय रही, उदाहरणार्थ– बीकानेर में खूबराम सर्राफ तथा सत्यनारायण सर्राफ, जोधपुर में आनन्दराज सुराणा, चांदमल सुराणा, भंवरलाल सर्राफ, प्रयागराम भण्डारी तथा जयपुर में टीकाराम पालीवाल, गुलाबचन्द कासलीवाल आदि।

ब्यावर के सेठ दामोदरदास राठी एक कुशल उद्योगपति थे किन्तु उनका राजनीतिक कार्यक्षेत्र अर्जुनलाल सेठी, केसरीसिंह बारहठ, राव गोपाल सिंह खरवा और विजयसिंह पथिक के साथ ही था। क्रांति के मार्ग पर ये पाँचों राष्ट्रवादी नेता एक–दूसरे के पूरक थे। दुर्भिक्ष, बाढ़ या भूकम्प जैसी प्राकृतिक आपदाओं से त्रस्त जनता की उन्होंने सदैव सेवा की। सेठ राठी हिन्दी भाषा के भारी प्रशंसक थे। उन्होंने 1914 में अपनी कृष्णा मिल के बहीखातों का तथा अपना सम्पूर्ण कार्य हिन्दी में ही करने का संकल्प लेकर अत्यन्त प्रशंसनीय कार्य किया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष अमृतलाल चक्रवर्ती की प्रेरणा से राठी ने ब्यावर में 'नागरी प्रचारिणी सभा' की स्थापना की और अजमेर–मेरवाड़ा की अदालतों में नागरी लिपि और हिन्दी भाषा के प्रयोग के लिए आन्दोलन चलाया। इससे प्रभावित होकर अंग्रेज कमिश्नर ने राजकीय कार्य नागरी लिपि और हिन्दी भाषा में करना स्वीकार कर लिया था। इस प्रकार एक व्यवसायी एवं उद्योगपति होने के बावजूद सेठ राठी ने स्वभाषा के प्रयोग सहित स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोगों को बढ़ावा देकर राष्ट्र प्रेम की भावना को पोषित किया।

खादी का प्रयोग

राजस्थान के राज्यों में खादी के प्रचार ने स्वतन्त्रता की भावना को लोकप्रिय तथा व्यापक बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई तथा लोगों को इस आन्दोलन की ओर आकृष्ट किया। गाँधीजी के रचनात्मक कार्यक्रम का प्रचार ऐसा आवरण था, जिस पर किसी निरंकुश शासक को भी आपत्ति करने का औचित्य दिखाई नहीं पड़ता था। खादी का प्रयोग गाँव की निर्धन जनता के लिए एक रोजगार का साधन हो सकता था, इसलिए इस कार्यक्रम को रोकने में किसी को आपत्ति नहीं हो सकती थी। समय के व्यतीत होने के साथ–साथ गाँधी टोपी पहनना, खादी का प्रयोग करना स्वतन्त्रता आन्दोलन के हिस्से बन गये। जमनालाल बजाज पर इस आन्दोलन की देखभाल का जिम्मा था। गोकुल भाई भट्ट तथा अन्य खादी कार्यकर्त्ताओं के सम्मानार्थ प्रकाशित ग्रंथों से इन शान्त तथा जनप्रिय चर्चित चेहरों के योगदान पर अच्छा प्रकाश पड़ता है। खादी को प्रश्रय प्रदान करना, छूआछूत समाप्त करना अथवा हरिजनोद्धार इस युग के नये मूल्यों को प्रोत्साहन देने वाले कार्यक्रम थे, जिनसे जनजागरण प्रभावी हो सका।

महिलाओं की भूमिका

राजस्थान में राजनीतिक चेतना और नागरिक अधिकारों के लिए अनवरत चले आन्दोलनों में महिलाओं की भूमिका भी श्लाघनीय रहीं। इसमें अजमेर की प्रकाशवती सिन्हा का नाम विशेष उल्लेखनीय है। 1930 से 1947 तक अनेक महिलाएँ जेल गई। इनका नेतृत्व करने वाली

साधारण गृहणियाँ ही थीं, जिनकी गिनती अपने कार्यों तथा उपलब्धियों से असाधारण श्रेणी में की जाती है। इनमें अंजना देवी (पत्नी–रामनारायण चौधरी), नारायण देवी (पत्नी माणिक्य लाल वर्मा), रतन शास्त्री (पत्नी हीरालाल शास्त्री) आदि थीं। 1942 की अगस्त क्रांति में छात्राओं ने अद्‌भुत शौर्य का प्रदर्शन किया। कोटा शहर में तो रामपुरा पुलिस कोतवाली पर अधिकार करने वालों में छात्राएँ भी शामिल थीं। राजस्थान में जन चेतना के विकास में रमादेवी पाण्डे, सुमित्रा देवी भार्गव, इन्दिरा देवी शास्त्री, विद्या देवी, गौतमी देवी भार्गव, मनोरमा पण्डित, मनोरमा टण्डन, प्रियवंदा चतुर्वेदी और विजयाबाई का योगदान उल्लेखनीय रहा। डूँगरपुर की एक भील बाला कालीबाई 19 जून, 1947 को रास्तापाल सत्याग्रह में अपने शिक्षक सेंगाभाई को बचाते हुए शहीद हुई।

क्रांतिकारियों की भूमिका

भारतीय परिप्रेक्ष्य के अनुरूप ही राजपूताना में क्रांतिकारियों की गतिविधियाँ देखने को मिलती है। यहाँ भी शासक वर्ग ने ब्रिटिश सत्ता के समान ही सामान्यतः राष्ट्रवादी गतिविधियों पर अपना शिकंजा कस दिया। ऐसी परिस्थितियों में क्रांतिकारी गतिविधियों को अपनी जगह बनाने का मौका मिला। बंगाल में सक्रिय क्रांतिकारियों ने राजपूताना में भी सम्पर्क स्थापित करके अपने कार्यक्षेत्र का विस्तार किया। राजपूताना में क्रांतिकारी गतिविधियों से सम्बद्ध रहने वालों में विजयसिंह पथिक, अर्जुनलाल सेठी, केसरी सिंह बारहठ, प्रतापसिंह बारहठ, राव गोपाल सिंह खरवा के नाम गिनाये जा सकते हैं। यद्यपि क्रांतिकारियों का आन्दोलन जन साधारण में अपनी जमीन तैयार न कर सका, फिर भी सामंती समाज की बदहाली, शासकों की उदासीनता व अंग्रेजों के दमन की भूमिका अविस्मरणीय रही। राजस्थान में भी पूरे राष्ट्र के समान सामान्यतः गांधीवादी तौर–तरीके ही लोकप्रिय रहे।

अंग्रेज सरकार क्रांतिकारी गतिविधियों को समाप्त करने पर आमदा थी। इसी सिलसिले में वायसराय लार्ड मिण्टो ने अगस्त 1909 में राजस्थान में राजाओं को अपने–अपने राज्यों में क्रांतिकारी साहित्य व समाचार पत्रों पर रोक लगाने तथा क्रांतिकारी गतिविधियों को कुचलने के निर्देश दिये। फलतः राज्यों ने समाचार पत्रों पर रोक लगाने के साथ ही क्रांतिकारियों के आपसी व्यवहार एवं व्याख्यान देने पर रोक लगा दी। परन्तु राज्यों के ये प्रतिबन्ध कारगर नहीं हुए और दृढ़ प्रतिज्ञ एवं निष्ठावान देशभक्त हिंसात्मक गतिवधियों की ओर प्रवृत्त हुए। राजस्थान के क्रांतिकारियों का जनक शाहपुरा का बारहठ परिवार था। इनमें ठाकुर केसरीसिंह बारहठ राष्ट्रीय परिस्थितियों से भली–भाँति अवगत थे और ब्रिटिश सरकार की नीतियों के खिलाफ इनमें तीव्र आक्रोश था। 1903 में केसरी सिंह ने 'चेतावनी का चूँगटया" नामक सोरठा मेवाड़ महाराणा फतहसिंह को लिखकर भेजे, जिसके कारण उन्होंने दिल्ली दरबार में भाग नहीं लिया। क्रांतिकारी गतिविधियों के लिए धन जुटाने के लिए उन्होंने कुछ लोगों के साथ मिलकर कोटा के महन्त साधु प्यारेलाल की हत्या कर दी। इस केस में इन्हें बीस वर्ष की सजा दी गई और बिहार की हजारी बाग जेल में रखा गया, परन्तु 1919 में वे शीघ्र जेल से मुक्त हो गये। कोटा पहुँचने पर उन्हें अपने पुत्र प्रतापसिंह की शहादत का समाचार मिला, परन्तु उन्होंने धैर्य रखा। बाद में गांधीजी के सम्पर्क के कारण केसरी सिंह बारहठ अहिंसा के विचारों के पोषक हो गये।

जयपुर में क्रांतिकारियों की पौध तैयार करने वाले अर्जुन लाल सेठी ने राजकीय नौकरी को ठोकर मारकर देश सेवा का कठिन मार्ग चुना। उनके द्वारा स्थापित वर्धमान पाठशाला क्रांतिकारियों की नर्सरी थी। प्रतापसिंह बारहठ जैसे व्यक्ति इस पाठशाला के छात्र थे। इन्हें एक महन्त की हत्या के झूठे आरोप में जेल डाल दिया। जेल से 6 वर्ष बाद मुक्त (1920) होने के बाद राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लिया।

खरवा ठाकुर गोपालसिंह ने रासबिहारी बोस एवं बंगाल के क्रांतिकारियों के सम्पर्क में आने के कारण सशस्त्र बल द्वारा स्वतन्त्रता प्राप्ति का मन बनाया। 21 फरवरी, 1915 को सशस्त्र क्रांति की शुरूआत करने का राजस्थान में

उत्तरदायित्व खरवा ठाकुर ने लिया। मगर योजना असफल होने पर उन्हें टाडगढ़ में नजर बन्द रखा गया। जहाँ से वे फरार हो गये, मगर पुनः बन्दी बनाकर अजमेर जेल में रखा गया। जेल से मुक्त (1920) होने के पश्चात् वे शांतिपूर्ण राजनीतिक गतिविधियों में संलग्न हो गये।

कुछ अन्तराल के बाद 1931 में भगतसिंह को फांसी देने से उग्रवादी पुनः सक्रिय हो उठे। अजमेर, और पुष्कर की दीवारों पर 'भगतसिंह जिन्दाबाद' के नारे लिखे गये। चिरंजीलाल ने क्रांतिकारी दल की स्थापना की। ज्वालाप्रसाद शर्मा, रमेशचन्द्र व्यास जैसे लोग क्रांतिकारी गतिविधियों से जुड़े।

कवियों का योगदान

राजस्थान की स्वातन्त्र्य चेतना में कवियों ने लोकगीतों के माध्यम से जनता को जाग्रत किया। ये लोक गीत राज्य की सभी आंचलिक भाषाओं में वहाँ के स्थानीय कवियों तथा गीतकारों द्वारा रचे गये थे। इन गीत एवं कविताओं से परतन्त्रता काल में अशिक्षित ओर अर्द्धशिक्षित जन समूह प्रेरणा एवं प्रोत्साहन प्राप्त करता रहा था। भरतपुर राज्य के निवासी हुलासी का नाम सर्वप्रथम आता है, जिन्होंने वीर रस के गीतों के माध्यम से अंग्रेजों का विरोध करने का आह्वान उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही कर दिया था। इस ब्राह्मण कवि ने अपनी वीर रस की कविताओं में राजस्थान के तत्कालीन राज्यों की तुलना में भरतपुर के वीरों द्वारा अंग्रेजों का अंतिम दम तक विरोध करने का ओजस्वी वर्णन किया है। भरतपुर राज्य के राजनीतिक आन्दोलनों से सम्बन्धित वर्तमान काल में जितनी भी काव्य रचनाएँ हुई हैं, उनमें सबसे अधिक योगदान पूर्णसिंह की रचनाओं का रहा है। ग्रामीण कवि होने के साथ–साथ पूर्णसिंह कर्मठ कार्यकर्त्ता भी था। उसने 1939 से 1947 तक राज्य में जितने भी आन्दोलन हुए, उनमें सक्रियता का प्रदर्शन किया। समय–समय पर आयोजित सम्मेलनों में इसके गीतों की धूम रहती थी। राजस्थान में जन जागरण का हुंकार फूंकने वालों में बूँदी के सूर्यमल्ल मीसण (1815–1868) तथा मारवाड़ के शंकरदान सामोर (1824–1878) का नाम विशेष उल्लेखनीय है।

प्रजामण्डल आन्दोलन

राजस्थान की रियासतों में प्रजामण्डलों के नेतृत्व में उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए नेताओं को कठोर संघर्ष करना पड़ा। यातनाएँ झेलनी पड़ी। कारावास में रहना पड़ा। उनके परिवारों को भारी संकट का सामना करना पड़ा। यहाँ तक कि अपने जीवन को भी दाव पर लगाना पड़ा। प्रजामण्डलों के मार्गदर्शन में ही राजस्थान की विभिन्न रियासतों में राष्ट्रीय आन्दोलन की हलचल हुई। दुर्भाग्य की बात यह रही कि राजस्थान की जनता को तीन शक्तियों यथा–राजा, ठिकानेदार और ब्रिटिश सरकार का सामना करना पड़ा। ये तीनों शक्तियाँ मिलकर जनता के संघर्ष का दमन करती रहीं। परन्तु राजस्थान की रियासतों में होने वाले आन्दोलनों ने यह प्रमाणित कर दिया कि इन राज्यों की जनता भी ब्रिटिश भारत की जनता के साथ कन्धा मिलाकर भारत को स्वतन्त्र कराना चाहती है। जयपुर में प्रजामण्डल का नेतृत्व जमनालाल बजाज, हीरालाल शास्त्री जैसे दिग्गज नेताओं ने किया जबकि जोधपुर में जयनारायण व्यास के मार्गदर्शन में उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए संघर्ष चला, वहीं सिरोही में गोकुल भाई भट्ट के शीर्ष नेतृत्व में।

राजस्थान में राजनीतिक कार्यकर्त्ताओं की पहली पीढ़ी में चार प्रमुख नेताओं का नाम उल्लेखनीय है, यथा–अर्जुनलाल सेठी (1880–1941), केसरीसिंह बारहठ (1872–1941), स्वामी गोपालदास (1882–1939) एवं राव गोपालसिंह (1872–1956)। अर्जुनलाल सेठी ने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से स्नातक की डिग्री प्राप्त की थी और अपना कार्य चौंमू के ठाकुर देवीसिंह के निजी सचिव के रूप में प्रारम्भ किया लेकिन शीघ्र ही अपना यह पद त्याग दिया। कुछ समय तक मथुरा के एक जैन स्कूल में अध्यापक रहे और फिर 1906 में जयपुर आ गये। इसके पश्चात् वे युवकों को भावी क्रान्ति के लिए तैयार करने में लग गये।

केसरी सिंह बारहठ मेवाड़ में शाहपुरा में पैदा हुए। वे चारण तथा राजपूतों में कुछ सुधार लाना चाहते थे

उन्होंने राजपूतों में शिक्षा प्रसार पर बल दिया और सामाजिक कुरीतियों से बचने की सलाह दी।

स्वामी गोपालदास का जन्म चूरू के समीप हुआ था। उनका जीवन इस बात का ज्वलन्त उदाहरण है कि निरंकुश शासन में सार्वजनिक हित में कार्य करने वाले को कितनी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। बीकानेर के प्रबुद्ध शासक गंगासिंह ने स्वामी गोपालदास को परेशान करने में कोई कमी नहीं की, जबकि उनका दोष यह था कि वे बीकानेर की वास्तविक स्थिति से लोगों को अवगत करा रहे थे। सच तो यह है कि उन्होंने कई रचनात्मक कार्य किये, जैसे चूरू में लड़कियों के लिए स्कूल खोला, तालाबों की मरम्मत कराई ओर कुएं खुदवाए।

खरवा का ठाकुर राव गोपालसिंह ने सामंत परिवार में जन्म लेकर भी देश के भविष्य के लिए अपनी वंश परम्परागत जागीर को देश की आजादी के लिए दांव पर लगा दिया। उनके बारे में ठाकुर केसरीसिंह ने लिखा था, "जिस प्रकार पंजाब को लाला लाजपतराय पर और महाराष्ट्र को बाल गंगाधर तिलक पर गर्व है, उसी प्रकार राजस्थान को राव गोपालसिंह खरवा पर गर्व है।"

इन उक्त नेताओं की कार्य प्रणाली पर विचार करें तो कहा जा सकता है कि इन नेताओं की योजनाएँ तथा गतिविधियाँ सामाजिक कार्य करने, शिक्षा को प्रोत्साहित करने तथा देशप्रेम की भावना फैलाने की थी। यह उल्लेखनीय है कि उस समय अप्रगतिशील रूढ़िवादी घटनाओं पर टीका–टिप्पणी आपराधिक श्रेणी में गिनी जाती थी। समाचार पत्रों का बाहर से मंगवाना, एक टाइप मशीन अथवा चक्रमुद्रण यन्त्र का किसी व्यक्ति के पास होना एक अपराध माना जाता था। प्रचलित व्यवस्था के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण रखना संदिग्ध माना जाता था। पुरानी मान्यताओं को तर्क की कसौटी पर जाँचनें तथा राजनीतिक एवं प्रशासनिक नीतियों के प्रति आलोचनात्मक दृष्टिकोण रखने को क्रांतिकारी समझा जाता था। रास बिहारी घोष, महर्षि अरविन्द, शचीन्द्र सान्याल से मिल लेना ही क्रांतिकारी माने जाने के लिए पर्याप्त समझा जाता था। यह महत्वपूर्ण नहीं है कि जो कार्य सेठी, बारहट, खरवा राव, स्वामी गोपालदास आदि ने किया, उसमें से उन्हें सफलता मिली या असफलता तथा वे संस्थागत रूप धारण कर सके अथवा धराशायी हो गये, अपितु महत्वपूर्ण यह है कि वे लोगों को कितना प्रभावित कर पाये। इस मायने में वे सफल रहे। इन नेताओं ने अपने बलिदान से पुराने सामन्ती ढांचे के अन्यायपूर्ण आचरण का पर्दाफाश किया।

कोटा राज्य में जन–जागृति के जनक पं. नयनूराम शर्मा थे। उन्होंने थानेदार के पद से इस्तीफा देकर सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया था। वे विजयसिंह पथिक द्वारा स्थापित राजस्थान सेवा संघ के सक्रिय सदस्य बन गये। उन्होंने कोटा राज्य में बेगार विरोधी आन्दोलन चलाया, जिसके फलस्वरूप बेगार प्रथा की प्रताड़ना में कमी आई। 1939 में पं. नयनूराम शर्मा और पं. अभिन्न हरि ने कोटा राज्य में उत्तरदायी शासन स्थापित करने के उद्देश्य को लेकर कोटा राज्य प्रजामण्डल की स्थापना की। प्रजामण्डल का पहला अधिवेशन शर्मा की अध्यक्षता में मांगरोल (बाराँ) में सम्पन्न हुआ।

अजमेर में जमनालाल बजाज की अध्यक्षता में 'राजपूताना मध्य भारत सभा' का आयोजन (1920) किया गया, जिसमें अर्जुन लाल सेठी, केसरीसिंह बारहठ, राव गोपालसिंह खरवा, विजयसिंह पथिक आदि ने भाग लिया। इसी वर्ष देश में खिलाफत आन्दोलन चला। अजमेर में खिलाफत समिति की बैठक हुई, जिसमें डॉ. अन्सारी, शेख अब्बास अली, चांदकरण शारदा आदि ने भाग लिया। अक्टूबर, 1920 में 'राजस्थान सेवा संघ' को वर्धा से लाकर अजमेर में स्थापित किया गया, उसका उद्देश्य राजस्थान की रियासतों में चलने वाले आन्दोलनों को गति देना था। उसी समय रामनारायण चौधरी वर्धा से लौटकर अपना कार्य क्षेत्र अजमेर बना चुके थे। अजमेर में 15 मार्च, 1921 को द्वितीय राजनीतिक कांफ्रेस का आयोजन हुआ, जिसमें मोतीलाल नेहरू उपस्थित थे। मौलाना शौकत अली ने सभा की अध्यक्षता की थी। सभा में विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार का आह्वान किया गया। पंडित गौरीशंकर भार्गव ने अजमेर में

विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार की अगुवाई कर प्रथम गांधीवादी बनने का सौभाग्य प्राप्त किया। जब 'प्रिंस ऑफ वेल्स' का अजमेर आगमन (28 नवम्बर, 1921) हुआ, तो उसका स्वागत के स्थान पर बहिष्कार किया गया, हड़ताल की गई तथा दुकाने बन्द की गई। प्रिंस की यात्रा की व्यापक प्रतिक्रिया हुई।

जैसलमेर रेगिस्तान के धोरों के मध्य एक पिछड़ी हुई छोटी रियासत थी। यहाँ के सागरमल गोपा ने जैसलमेर की जनता को महारावल जवाहर सिंह के निरंकुश और दमनकारी शासन के विरुद्ध जागृत किया। सागरमल गोपा ने 1940 में 'जैसलमेर में गुण्डाराज' नामक पुस्तक छपाकर वितरित करवा दी। अतः महारावल ने शीघ्र ही उसे राज्य से निर्वासित कर दिया। गोपा नागपुर चला गया और वहाँ से जैसलमेर के दमनकारी शासन के विरुद्ध प्रचार करता रहा। मार्च, 1941 में उसके पिता का देहान्त हो गया, तब ब्रिटिश रेजीडेण्ट की स्वीकृति के पश्चात् ही वह जैसलमेर पहुँच सका। रेजीडेण्ट ने आश्वासन दिया था कि उसके विरुद्ध राज्य सरकार का कोई आरोप नहीं है, अतः वह जैसलमेर आ सकता है तथा उसे किसी प्रकार के दुर्व्यवहार का भय नहीं होना चाहिए। इस प्रकार गोपा जैसलमेर पहुँचा। जैसलमेर जाकर वह लगभग दो माह पश्चात् लौट रहा था, जब उसे अचानक बन्दी (22 मई, 1941) बना लिया गया। बन्दी अवस्था में उसे गम्भीर एवं अमानवीय यातनाएँ दी गई। अन्ततः उसे राजद्रोह के अपराध में 6 वर्ष की कठोर कारावास की सजा दी गई। जेल में थानेदार गुमानसिंह यातनाएँ देता रहा, जिससे उसका जीवन नारकीय हो गया था। गोपा द्वारा जयनारायण व्यास आदि को यातनाओं के सम्बन्ध में पत्र लिखे गये। जयनारायण व्यास ने रेजीडेण्ट को पत्र लिखकर वास्तविक स्थिति का पता लगाने का आग्रह किया। रेजीडेण्ट ने 6 अप्रैल, 1946 को जैसलमेर जाने का कार्यक्रम बनाया, उधर 3 अप्रैल, 1946 को ही जेल में गोपा पर मिट्टी का तेल डालकर जला दिया गया। यह खबर जंगल में आग की तरह फैल गयी किन्तु शासन ने गोपा के रिश्तेदारों तक को नहीं मिलने दिया। लगभग 20 घण्टे तड़पने के बाद 4 अप्रैल को वे चल बसे। पूरा नगर 'सागरमल गोपा जिन्दाबाद' के नारों से गूंज उठा। पण्डित नेहरू तथा जयनारायण व्यास सहित अनेक शीर्ष नेताओं ने इस काण्ड की भर्त्सना की। राजस्थान जब कभी भी स्वतन्त्रता सेनानियों को याद करेगा, गोपा का नाम प्रथम पंक्ति में अमर रहेगा।

भरतपुर में जन–जागृति पैदा करने वालों में जगन्नाथदास अधिकारी और गंगाप्रसाद शास्त्री प्रमुख थे। इन्होंने 1912 में 'हिन्दी साहित्य समिति' की स्थापना की, जिसने शीघ्र ही लोकप्रियता प्राप्त कर एक विशाल पुस्तकालय का रूप धारण कर लिया। भरतपुर के तत्कालीन महाराजा किशनसिंह अन्य शासकों की तुलना में जागरूक थे। उन्होंने हिन्दी को राजभाषा का दर्जा दिया। गाँवों और नगरों में स्वायत्तशासी संस्थाओं को विकसित किया और राज्य में एक अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन किया। वह राज्य में उत्तरदायी शासन की स्थापना के पक्ष में था। परन्तु अंग्रेज सरकार ने उसके प्रगतिशील विचारों के दूरगामी परिणामों को सोचकर उसे गद्दी छोड़ने के लिए विवश किया। नये शासक ने सभाओं एवं प्रकाशनों पर प्रतिबन्ध लगा दिया। इतना ही नहीं राष्ट्रीय नेताओं के चित्र रखना अपराध मान लिया गया। फिर भी, भरतपुर में जन–जागरण का कार्य चोरी–छिपे चलता रहा। गोपीलाल यादव, मास्टर आदित्येन्द्र, जुगलकिशोर चतुर्वेदी आदि के नेतृत्व में भरतपुर राज्य प्रजामण्डल अपनी गतिविधियाँ चलाता रहा।

जोधपुर के प्रजामण्डल के इतिहास में बालमुकुन्द बिस्सा का नाम स्मरणीय रहेगा। मारवाड़ के एक छोटे से ग्राम पीलवा, तहसील डीडवाना में जन्मे बालमुकुन्द बिस्सा ने 1934 में जोधपुर में गांधी जी से प्रेरित होकर खादी भण्डार खोला और तब से राष्ट्रीय कार्यक्रमों में भाग लेने लगा। उसका जवाहर खादी भण्डार शीघ्र ही राजनीतिक गतिविधियों का केन्द्र बन गया। 1942 में जोधपुर में उत्तरदायी शासन के लिए जो आन्दोलन चला, उसमें उसे गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया। जहाँ भूख हड़ताल एवं यातनाओं

के कारण वह शहीद हो गया परन्तु उससे प्रेरित होकर कई युवा प्रजामण्डल–आन्दोलन में कूद पड़े।

मेवाड़ में प्रजामण्डल की स्थापना बिजौलिया आन्दोलन के कर्मठ नेता माणिक्यलाल वर्मा द्वारा मार्च, 1938 में की गई। इस हेतु वे साइकिल पर सवार होकर निकल पड़े। वे जब शाहपुरा होकर गुजरे तो वहाँ उन्हें रमेश चन्द्र ओझा और लादूराम व्यास जैसे उत्साही व्यक्ति मिल गये। वर्मा की प्रेरणा से इन नवयुवकों ने 1938 में शाहपुरा राज्य में प्रजामण्डल की स्थापना की। उल्लेखनीय तथ्य यह है कि शाहपुरा राज्य ने प्रजामण्डल की गतिविधियों में अनावश्यक दखल नहीं दिया।

डूँगरपुर में 1935 में भोगीलाल पण्ड़या ने हरिजन सेवा समिति की स्थापना की। उसी वर्ष शोभालाल गुप्त ने राजस्थान सेवक मण्डल की ओर से हरिजनों और भीलों के हितार्थ सागवाड़ा में एक आश्रम स्थापित किया। इसी बीच बिजौलिया आन्दोलन के प्रमुख सूत्रधार माणिक्यलाल वर्मा जन–जातियों में काम करने के उद्देश्य से डूँगरपुर आये। उन्होंने 'बागड़ सेवा मन्दिर' की स्थापना द्वारा भीलों में साक्षरता का प्रचार किया तथा सामाजिक कुरीतियों के निवारणार्थ उल्लेखनीय कार्य किया। इससे भीलों में नवजीवन का संचार हुआ। परन्तु राज्य सरकार ने शीघ्र ही वॉगड़ सेवा मन्दिर की रचनात्मक प्रवृत्तियों को नियन्त्रित कर दिया। 1944 में डूँगरपुर प्रजामण्डल की स्थापना हरिदेव जोशी, भोगीलाल पण्ड्या, गौरीशंकर आचार्य आदि ने मिलकर की। डूँगरपुर के भोगीलाल पण्ड्या पर जेल में किये जाने वाले अमानुषिक व्यवहार का गोकुल भाई भट्ट, माणिक्यलाल वर्मा, हीरालाल शास्त्री, रमेशचन्द्र व्यास आदि ने मिलकर जमकर विरोध किया। फलस्वरूप डूँगरपुर महारावल को पण्ड्या सहित अनेक कार्यकत्ताओं को छोड़ना पड़ा।

भारत छोड़ो आन्दोलन और राजस्थान

भारत छोड़ो आन्दोलन (प्रस्ताव 8 अगस्त, शुरुआत 9 अगस्त, 1942) के 'करो या मरो' की घोषणा के साथ ही राजस्थान में भी गांधीजी की गिरफ्तारी का विरोध होने लगा। जगह–जगह जुलूस, सभाओं और हड़तालों का आयोजन होने लगा। विद्यार्थी अपनी शिक्षण संस्थानों से बाहर आ गये और आन्दोलन में कूद पड़े। स्थान–स्थान पर रेल की पटरियाँ उखाड़ दी, तार और टेलीफोन के तार काट दिये। स्थानीय जनता ने समानान्तर सरकारें स्थापित कर लीं। उधर जवाब में ब्रिटिश सरकार ने भारी दमनचक्र चलाया। जगह–जगह पुलिस ने गोलियाँ चलाई। कई मारे गये, हजारों गिरफ्तार किये गये। देश की आजादी की इस बड़ी लड़ाई में राजस्थान ने भी कंधे से कंधा मिलाकर योगदान दिया।

जोधपुर राज्य में सत्याग्रह का दौर चल पड़ा। जेल जाने वालों में मथुरादास माथुर, देवनारायण व्यास, गणेशीलाल व्यास, सुमनेश जोशी, अचलेश्वर प्रसाद शर्मा, छगनराज चौपासनीवाला, स्वामी कृष्णानंद, द्वारका प्रसाद पुरोहित आदि थे। जोधपुर में विद्यार्थियों ने बम बनाकर सरकारी सम्पत्ति को नष्ट किया। किन्तु राज्य सरकार के दमन के कारण आन्दोलन कुछ समय के लिए शिथिल पड़ गया। अनेक लोगों ने जयनारायण व्यास पर आन्दोलन समाप्त करने का दवाब डाला, परन्तु वे अडिग रहे। राजस्थान में 1942 के आन्दोलन में जोधपुर राज्य का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इस आन्दोलन में लगभग 400 व्यक्ति जेल में गए। महिलाओं में श्रीमती गोरजा देवी जोशी, श्रीमती सावित्री देवी भाटी, श्रीमती सिरेकंवल व्यास, श्रीमती राजकौर व्यास आदि ने अपनी गिरफ्तारियाँ दी।

माणिक्यलाल वर्मा रियासती नेताओं की बैठक में भाग लेकर इंदौर आये तो उनसे पूछा गया कि भारत छोड़ो आन्दोलन के संदर्भ में मेवाड़ की क्या भूमिका रहेगी, तो उन्होंने उत्तर दिया, "भाई हम तो मेवाड़ी हैं, हर बार हर–हर महादेव बोलते आये हैं, इस बार भी बोलेंगे।" स्पष्ट था कि भारत छोड़ो आन्दोलन के प्रति उनका सकारात्मक रूख था। बम्बई से लौटकर उन्होंने मेवाड़ के महाराणा को ब्रिटिश सरकार से सम्बन्ध विच्छेद करने का 20 अगस्त, 1942 को अल्टीमेटम दिया। परन्तु महाराणा ने इसे महत्त्व नहीं दिया। दूसरे दिन माणिक्यलाल गिरफ्तार कर लिये गये। उदयपुर

में काम–काज ठप्प हो गया। इसके साथ ही प्रजामण्डल के कार्यकर्त्ता और सहयोगियों की गिरफ्तारियों का सिलसिला शुरू हुआ। उदयपुर के भूरेलाल बया, बलवन्त सिंह मेहता, मोहनलाल सुखाड़िया, मोतीलाल तेजावत, शिवचरण माथुर, हीरालाल कोठारी, प्यारचंद विश्नोई, रोशनलाल बोर्दिया आदि गिरफ्तार हुए। उदयपुर में महिलाएँ भी पीछे नहीं रहीं। माणिक्यलाल वर्मा की पत्नी नारायणदेवी वर्मा अपने 6 माह के पुत्र को गोद में लिये जेल में गयी। प्यारचंद विश्नोई की धर्मपत्नी भगवती देवी भी जेल गयी। आन्दोलन के दौरान उदयपुर में महाराणा कॉलेज और अन्य शिक्षण संस्थाएँ कई दिनों तक बन्द रहीं। लगभग 600 छात्र गिरफ्तार किये गये। मेवाड़ के संघर्ष का दूसरा महत्वपूर्ण केन्द्र नाथद्वारा था। नाथद्वारा में हड़ताले और जुलूसों की धूम मच गयी। नाथद्वारा के अतिरिक्त भीलवाड़ा, चित्तौड़ भी संघर्ष के केन्द्र थे। भीलवाड़ा के रमेश चन्द्र व्यास, जो मेवाड़ प्रजामण्डल के प्रथम सत्याग्रही थे, को आन्दोलन प्रारम्भ होते ही गिरफ्तार कर लिया। मेवाड़ में आन्दोलन को रोका नहीं जा सका, इसका प्रशासन को खेद रहा।

जयपुर राज्य की 1942 के भारत छोड़ों आन्दोलन में भूमिका विवादास्पद रही। जयपुर प्रजामण्डल का एक वर्ग भारत छोड़ों आन्दोलन से अलग नहीं रहना चाहता था। इनमें बाबा हरिश्चन्द, रामकरण जोशी, दौलतमल भण्डारी आदि थे। ये लोग पं0 हीरालाल शास्त्री से मिले। हीरालाल शास्त्री ने 17 अगस्त, 1942 की शाम को जयपुर में आयोजित सार्वजनिक सभा में आन्दोलन की घोषणा का आश्वासन दिया। यद्यपि पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार सभा हुई, परन्तु हीरालाल शास्त्री ने आन्दोलन की घोषणा करने के स्थान पर सरकार के साथ हुई समझौता वार्ता पर प्रकाश डाला। हीरालाल शास्त्री ने ऐसा सम्भवतः इसलिए किया कि उनके जयपुर के तत्कालीन प्रधानमंत्री मिर्जा इस्माइल से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध थे तथा जयपुर महाराजा के रवैये एवं आश्वासन से जयपुर प्रजामण्डल सन्तुष्ट था। जयपुर राज्य के भीतर और बाहर हीरालाल शास्त्री की आलोचना की गई। बाबा हरिश्चन्द और उनके सहयोगियों ने एक नया संगठन 'आजाद मोर्चा' की स्थापना कर आन्दोलन चलाया। इस मोर्चे का कार्यालय गुलाबचन्द कासलीवाल के घर स्थित था। जयपुर के छात्रों ने शिक्षण संस्थाओं में हड़ताल करवा दी।

कोटा राज्य प्रजामण्डल के नेता पं. अभिन्नहरि को बम्बई से लौटते ही 13 अगस्त को गिरफ्तार कर लिया गया। प्रजामण्डल के अध्यक्ष मोतीलाल जैन ने महाराजा को 17 अगस्त को अल्टीमेटम दिया कि वे शीघ्र ही अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद कर दें। फलस्वरूप सरकार ने प्रजामण्डल के कई कार्यकर्त्ताओं को गिरफ्तार कर लिया। इनमें शम्भूदयाल सक्सेना, बेणीमाधव शर्मा, मोतीलाल जैन, हीरालाल जैन आदि थे। उक्त कार्यकर्त्ताओं की गिरफ्तारी के बाद नाथूलाल जैन ने आन्दोलन की बागड़ोर सम्भाली। इस आन्दोलन में कोटा के विद्यार्थियों का उत्साह देखते ही बनता था। विद्यार्थियों ने पुलिस को बेरकों में बन्द कर रामपुरा शहर कोतवाली पर अधिकार (14–16 अगस्त,1942) कर उस पर तिरंगा फहरा दिया। जनता ने नगर का प्रशासन अपने हाथ में ले लिया। लगभग 2 सप्ताह बाद जनता ने महाराव के इस आश्वासन पर कि सरकार दमन सहारा नहीं लेगी, शासन पुनः महाराव को सौंप दिया। गिरफ्तार कार्यकर्त्ता रिहा कर दिये गये।

भरतपुर में भी भारत छोड़ों आन्दोलन की चिंगारी फैल गई। भरतपुर राज्य प्रजा परिषद् के कार्यकर्त्ता मास्टर आदित्येन्द्र, युगलकिशोर चतुर्वेदी, जगपतिसिंह, रेवतीशरण, हुक्मचन्द, गौरीशंकर मित्तल, रमेश शर्मा आदि नेता गिरफ्तार कर लिये गये। इसी समय दो युवकों ने डाकखानों और रेलवे स्टेशनों को तोड़–फोड़ की योजना बनाई, परन्तु वे पकड़े गये। आन्दोलन की प्रगति के दौरान ही राज्य में बाढ़ आ गयी। अतः प्रजा परिषद् ने इस प्राकृतिक विपदा को ध्यान में रखते हुए अपना आन्दोलन स्थगित कर राहत कार्यों में लगने का निर्णय लिया। शीघ्र ही सरकार से आन्दोलनकारियों की समझौता वार्ता प्रारम्भ हुई। वार्ता के आधार पर राजनीतिक कैदियों को रिहा कर दिया गया। सरकार ने निर्वाचित सदस्यों के बहुमत वाली विधानसभा बनाना स्वीकार कर लिया।

शाहपुरा राज्य प्रजामण्डल ने भारत छोड़ो आन्दोलन शुरू होने के साथ ही राज्य को अल्टीमेटम दिया कि वे अंग्रेजों से सम्बन्ध विच्छेद कर दें। फलस्वरूप प्रजामण्डल के कार्यकर्त्ता रमेश चन्द्र ओझा, लादूराम व्यास, लक्ष्मीनारायण कौटिया गिरफ्तार कर लिये गये। शाहपुरा के गोकुल लाल असावा पहले ही अजमेर में गिरफ्तार कर लिये गये थे।

अजमेर में कांग्रेस के आह्वान के फलस्वरूप भारत छोड़ों आन्दोलन का प्रभाव पड़ा। कई व्यक्तियों को गिरफ्तार कर लिया। इनमें बालकृष्ण कौल, हरिभाऊ उपाध्याय, रामनारायण चौधरी, मुकुट बिहारी भार्गव, अम्बालाल माथुर, मौलाना अब्दुल गफूर, शोभालाल गुप्त आदि थे। प्रकाशचन्द ने इस आन्दोजन के संदर्भ में अनेक गीतों को रचकर प्रजा को नैतिक बल दिया। जेलों के कुप्रबन्ध के विरोध में बालकृष्ण कौल ने भूख हड़ताल कर दी।

बीकानेर में भारत छोड़ो आन्दोलन का विशेष प्रभाव देखने को नहीं मिलता है। बीकानेर राज्य प्रजा परिषद् के नेता रघुवरदयाल गोयल को पहले से ही राज्य से निर्वासित कर रखा था। बाद में गोयल के साथी गंगादास कौशिक ओर दाऊदयाल आचार्य को गिरफ्तार कर लिया गया। इन्हीं दिनों नेमीचन्द आँचलिया ने अजमेर से प्रकाशित एक साप्ताहिक में लेख लिखा, जिसमें बीकानेर राज्य में चल रहे दमन कार्यों की निंदा की गई। राज्य सरकार ने आँचलिया को 7 वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड दिया। राज्य में तिरंगा झण्डा फहराना अपराध माना जाता था। अतः राज्य में कार्यकर्त्ताओं ने झण्डा सत्याग्रह शुरू कर भारत छोड़ों आन्दोलन में अपना योगदान दिया।

अलवर, डूँगरपुर, प्रतापगढ़, सिरोही, झालावाड़ आदि राज्यों में भी भारत छोड़ो आन्दोलन की आग फैली। सार्वजनिक सभाएँ कर देश में अंग्रेजी शासन का विरोध किया गया। कांग्रेस नेताओं की गिरफ्तारियाँ हुई। हड़तालें हुई। जुलुस निकाले गये।

सिंहावलोकन

रियासतों में जन आन्दोलनों के दौरान लोगों को अनेक प्रकार के जुल्मों एवं यातनाओं का शिकार होना पड़ा। किसान आन्दोलनों, जनजातीय आन्दोलनों आदि ने राष्ट्रीय जाग्रति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। ये स्वस्फूर्त आन्दोलन थे। इनसे सामन्ती व्यवस्था की कमजोरियाँ उजागर हुईं। यद्यपि इन आन्दोलनों का लक्ष्य राजनीतिक नहीं था, परन्तु निरंकुश सत्ता के विरुद्ध आवाज के स्वर बहुत तेज हो गये, जिससे तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था को आलोचना का शिकार होना पड़ा। यदि आजादी के पश्चात् राजतन्त्र तथा सामन्त प्रथा का अवसान हुआ, तो इसमें इन आन्दोलनों की भूमिका को ओझल नहीं किया जा सकता है। अनेक देशभक्तों को प्राणों की आहुति देनी पड़ी। शहीद बालमुकुन्द बिस्सा, सागरमल गोपा आदि का बलिदान प्रेरणा के स्रोत बने। प्रजामण्डल आन्दोलनों से राष्ट्रीय आन्दोलन को सम्बल मिला। प्रजामण्डलों ने अपने रचनात्मक कार्यों के अन्तर्गत सामाजिक सुधार, शिक्षा का प्रसार, बेगार प्रथा के उन्मूलन एवं अन्य आर्थिक समस्याओं का समाधान करने की दिशा में महत्वपूर्ण कदम उठाये। यह कहना उचित नहीं है कि राजस्थान में जन–आन्दोलन केवल संवैधानिक अधिकारों तथा उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए था, स्वतन्त्रता के लिए नहीं। डॉ. एम.एस. जैन ने उचित ही लिखा है, "स्वतन्त्रता संघर्ष केवल बाह्य नियंत्रण के विरुद्ध ही नहीं होता, बल्कि निरंकुश सत्ता के विरुद्ध संघर्ष भी इसी श्रेणी में आते हैं।" चूंकि रियासती जनता दोहरी गुलामी झेल रही थी, अतः उसके लिए संवैधानिक अधिकारों की प्राप्ति तथा उत्तरदायी शासन की स्थापना से बढ़कर कोई बात नहीं हो सकती थी।

रियासतों में शासकों का रवैया इतना दमनकारी था कि खादी प्रचार, स्वदेशी शिक्षण संस्थाओं जैसे रचनात्मक कार्यों को भी अनेक रियासतों में प्रतिबन्धित कर दिया गया। सार्वजनिक सभाओं पर प्रतिबन्ध होने के कारण जन चेतना के व्यापक प्रसार में अड़चने आयी। ऐसी कठिन परिस्थितियों में लोक संस्थाओं की भागीदारी कठिन थी। जब तक कांग्रेस ने अपने हरिपुरा अधिवेशन (1938) में देशी रियासतों में चल रहे आन्दोलनों को समर्थन नहीं दिया, तब तक राजस्थान की

रियासतों में जन आन्दोलन को व्यापक समर्थन नहीं मिल सका। हरिपुरा अधिवेशन के पश्चात् रियासती आन्दोलन राष्ट्र की मुख्य धारा से जुड़ गया।

धीरे–धीरे राजस्थान आज़ादी के संघर्ष के अंतिम सोपान की ओर बढ़ रहा था। आज़ादी से पूर्व राजस्थान विभिन्न छोटी–छोटी रियासतों में बँटा हुआ था। 19 देशी रियासतों, 2 चीफ़शिपों एवं एक ब्रिटिश शासित प्रदेश में विभक्त था। इसमें सबसे बड़ी रियासत जोधपुर थीं और सबसे छोटी लावा चीफ़शिप थी। राजस्थान के एकीकरण की प्रक्रिया समस्त भारतीय राज्यों के एकीकरण का हिस्सा थी। एकीकरण में सरदार वल्लभ भाई पटेल, वी.पी. मेनन सहित स्थानीय शासक, रियासतों के जननेता, जिनमें जयनारायण व्यास, माणिक्यलाल वर्मा, पं. हीरालाल शास्त्री, प्रेम नारायण माथुर, गोकुल भाई भट्ट आदि शामिल थे, की अहम् भूमिका रही। जनता रियासतों के प्रभाव से मुक्त होना चाहती थी क्योंकि वह उनके आतंक एवं अलोकतांत्रिक शासन से नाखुश थी। साथ ही, वह स्वयं को राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ना चाहती थी। राजस्थान में संचालित राष्ट्रवादी गतिविधियों एवं विभिन्न कारकों ने मिलकर राजस्थान में एकता का सूत्रपात किया। फलतः 18 मार्च, 1948 से 1 नवम्बर, 1956 तक सात चरणों में राजस्थान का एकीकरण सम्पन्न हुआ। 30 मार्च, 1949 को वृहत् राजस्थान का निर्माण हुआ, जिसकी राजधानी जयपुर बनायी गयी ओर पं. हीरालाल शास्त्री को नवनिर्मित राज्य का प्रथम मुख्यमंत्री नियुक्त किया गया।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुविकल्पात्मक प्रश्न

1. राजस्थान में 1857 के विद्रोह की शुरुआत कब हुई ?

   (अ) 10 मई (ब) 28 मई

   (स) 10 जून (द) 18 मई

2. राजस्थान में 1857 के महान् विद्रोह की शुरुआत कहाँ से हुई ?

   (अ) अजमेर (ब) कोटा

   (स) नसीराबाद (द) नीमच

3. ठाकुर कुशालसिंह ने कहाँ के क्रांतिकारियों के विद्रोह का नेतृत्व किया ?

   (अ) जोधपुर (ब) नीमच

   (स) सलूम्बर (द) आउवा

4. लाला जयदयाल और मेहराब खाँ ने कहाँ के विद्रोह का नेतृत्व किया ?

   (अ) कोटा (ब) भरतपुर

   (स) एरिनपुरा (द) धौलपुर

5. विजयसिंह पथिक ने किस कृषक आन्दोलन का नेतृत्व किया ?

   (अ) बिजौलिया (ब) बरड़

   (स) शेखावाटी (द) बेगूं

6. 'सम्प सभा' की स्थापना किसने की ?

   (अ) मोतीलाल तेजावत

   (ब) राव गोपालसिंह

   (स) गोविन्द गुरु

   (द) कृष्णसिंह बारहठ

7. भगत आन्दोलन किस क्षेत्र में हुआ ?

   (अ) डूँगरपुर–बाँसवाड़ा

   (ब) सिरोही–पाली

   (स) भीलवाड़ा–शाहपुरा

   (द) अजमेर–नागौर

8. मेवाड़ प्रजामण्डल से सम्बद्ध नेता थे ?

   (अ) पं. हीरालाल शास्त्री

   (ब) पं. नयनूराम शर्मा

(स) पं. अभिन्न हरि

(द) माणिक्यलाल वर्मा

9. भोगीलाल पण्ड्या किस रियासत के प्रजामण्डल से सम्बद्ध रहे ?

(अ) अलवर (ब) डूँगरपुर

(स) जयपुर (द) अजमेर

10. शहीद सागरमल गोपा का सम्बन्ध किस रियासत से रहा है ?

(अ) बाँसवाड़ा (ब) जैसलमेर

(स) डूंगरपुर (द) सिरोही

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. 1857 से पूर्व किन–किन स्थानों पर सैनिक छावनियाँ थीं ?
2. क्रांतिकारियों का नेतृत्व करने वाले दो ठिकानेदारों का नाम बताइये।
3. राजस्थान में सर्वप्रथम क्रांति करने वाली पलटन का नाम बताइये।
4. भीलों को संगठित करने वाले 4 नेताओं के नाम बताइये।
5. राजस्थान के कोई चार किसान आन्दोलनों के नाम लिखिए।
6. राजस्थान में आर्य समाज से जुड़े कोई दो नेताओं के नाम बताइये।
7. बिजौलिया किसान आन्दोलन की खबर को सर्वप्रथम महत्त्व देने वाले समाचार पत्र का क्या नाम था ?
8. भरतपुर रियासत का पूर्णसिंह कौन था ?
9. कोटा प्रजामण्डल के दो नेताओं के नाम बताइये।
10. स्वामी गोपालदास का चुरू–बीकानेर क्षेत्र में स्वतन्त्रता संघर्ष के दौरान क्या योगदान रहा ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. 15 वीं बंगाल इन्फेंट्री द्वारा नसीराबाद में क्रांति के क्या कारण थे ?
2. 1857 के संघर्ष में कोटा का क्या योगदान रहा ?
3. आउवा के ठाकुर कुशालसिंह का 1857 के संघर्ष में रहे योगदान को स्पष्ट कीजिये।
4. राजस्थान के सन्दर्भ में 1857 की क्रांति का स्वरूप समझाइये।
5. राजस्थान में क्रांतिकारी गतिविधियों पर प्रकाश डालिये।
6. राजस्थान के जन चेतना के विकास में कवियों के योगदान की चर्चा कीजिये।
7. गोविन्द गुरू एवं मोतीलाल तेजावत का भील समाज के प्रति जो योगदान रहा, उसका विवेचन कीजिये।
8. बिजौलिया किसान आन्दोलन की मुख्य घटनाओं पर प्रकाश डालिये।
9. जन जागरण में आर्य समाज की भूमिका स्पष्ट कीजिये।
10. भरतपुर प्रजामण्डल की गतिविधियों पर टिप्पणी लिखिये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. राजस्थान में 1857 की क्रांति की पृष्ठभूमि की विवेचना कीजिये।
2. नसीराबाद, कोटा एवं आउवा में 1857 के दौरान हुई क्रांतिकारी गतिविधियों का वर्णन कीजिये।
3. राजस्थान में जनजाति आन्दोलन का विवरण एवं महत्त्व प्रस्तुत कीजिये।
4. मेवाड़, जयपुर एवं भरतपुर के सन्दर्भ में प्रजामण्डल आन्दोलन का मूल्यांकन कीजिये।

^ ^ ^

अध्याय – 2
राजस्थान का स्थापत्य, मूर्तिशिल्प एवं चित्रशैलियाँ

मानव सभ्यता के विकास क्रम में जब उसमें सृजनात्मक सोच का विकास हुआ और अपने चारों ओर प्रकृति की विभिन्न कृतियों को देखा, तो उसके मन में भी कुछ रचना करने की इच्छा हुई। ऐसे मानव ने मन के भाव, छैनी, हथौड़े तथा अन्य औजारों से मूर्त रूप में प्रकट किए। भवन, महल, मन्दिर तथा मूर्ति रूपों आदि का निमार्ण किया जाने लगा। धीरे धीरे मूर्ति–शिल्प विज्ञान व वास्तु–शिल्प विज्ञान का विकास हुआ। इससे हमारी संस्कृति समृद्ध हुई।

भवन निर्माण एवं शिल्प की उत्कृष्टता के साक्ष्य राजस्थान में मानव की विकास यात्रा के साथ ही देखने को मिलते है। कालीबंगा, आहड़, गिलूण्ड, बैराठ, नोह, नगरी आदि राजस्थान के ऐसे पुरातात्विक स्थल हैं, जहाँ आवासों का निर्माण हुआ। स्थापत्य एवं रक्षा की दृष्टि से राजस्थान के ऐतिहासिक भवन, जिनका निर्माण पूर्व–मध्यकाल में हुआ, बेजोड़ थे। राजस्थान में विभिन्न स्थलों पर स्थित मध्यकालीन किले, मन्दिर, राजप्रासाद, बावड़ियाँ एवं अन्य भवन एक समन्वयात्मक चित्रण प्रस्तुत करते हैं। राजपूत संस्कृति के अभ्युदय के कारण वीरता एवं रक्षा के प्रतीक किलों का निर्माण तेजी से हुआ। इसी के साथ, भक्ति, शक्ति एवं अध्यात्म की प्रभावना के कारण मन्दिरों की स्थापना में गति आयी। यहाँ यह जान लेना उपयुक्त होगा कि राजस्थान की भवन निर्माण कला में उपयोगिता एवं समन्वयात्मकता की भावना को केन्द्र बिन्दु में रखा गया है, साथ ही शिल्प सौष्ठव, अलंकरण एवं सुरक्षा की भावना का निर्माताओं ने ध्यान रखा है। समय और सम्पन्नता के साथ वास्तुकला में उत्कृष्टता, विशालता एवं सूक्ष्मता के तत्त्वों का समावेश होने लगा। स्थापत्य का वैविध्य राजस्थान की वास्तुकला की विशेषता है। यहाँ के शासकों ने सदैव ही कला को संरक्षण एवं संवर्धन प्रदान किया है। राजस्थान में जितनी भी ऐतिहासिक इमारतें एवं सांस्कृतिक वैभव के प्रतीक शेष बचे हैं, वे इस प्रदेश की स्थापत्य की समृद्ध विरासत को कहने में सक्षम है।

भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति को गौरवान्वित करने का श्रेय राजस्थान की वास्तुकला एवं मूर्तिशिल्प के साथ चित्रकला को भी जाता है। राजस्थान की चित्रशैलियाँ युगों के मानव श्रम का परिणाम है। वैसे हजारों वर्षों पूर्व राजस्थान के शैलाश्रयों में शैलचित्रों का रेखांकन राजस्थान की प्रारम्भिक चित्रण परम्परा को दर्शाता है। भारतीय चित्रकला की सर्वोत्कृष्ट दाय अजन्ता शैली की समृद्ध परम्परा को वहन करने वाली राजस्थानी चित्रकला के महत्त्व से इन्कार नहीं किया जा सकता है।

प्रस्तुत अध्याय में राजस्थान के स्थापत्य, मूर्तिशिल्प एवं चित्रशैलियों का विवेचन किया जा रहा है ताकि राजस्थान की समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा से आप अवगत हो सकें।

दुर्ग स्थापत्य

प्राचीन लेखकों ने दुर्ग को राज्य का अनिवार्य अंग माना है। राजस्थान में दुर्ग निर्माण की परम्परा पूर्व मध्यकाल से ही देखने को मिलती है। यहाँ शायद ही कोई जनपद हो, जहाँ कोई दुर्ग या गढ़ न हो। इन दुर्गों का अपना इतिहास है। इनके आधिपत्य को लेकर कई लड़ाइयाँ भी लड़ी गई। कई बार स्थानीय स्तर पर तो यदा–कदा विदेशी सत्ता द्वारा, इन पर अधिकार करने को लेकर दीर्घ काल तक संघर्ष भी चले। युद्ध कला में दक्ष सेना के लिए दुर्ग को जीवन रेखा माना गया है। यहाँ यह बात महत्त्वपूर्ण है कि सम्पूर्ण देश में राजस्थान वह प्रदेश है, जहाँ पर महाराष्ट्र और मध्यप्रदेश के बाद सर्वाधिक गढ़ ओर दुर्ग बने हुए हैं। एक गणना के अनुसार राजस्थान में 250 से

अधिक दुर्ग व गढ़ हैं। खास बात यह कि सभी किले और गढ़ अपने आप में अद्‌भुत और विलक्षण हैं। दुर्ग निर्माण में राजस्थान की स्थापत्य कला का उत्कर्ष देखा जा सकता है। प्राचीन ग्रंथों में किलों की जिन प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख हुआ है, वे यहाँ के किलों में प्रायः देखने को मिलती हैं। सुदृढ़ प्राचीर, अभेद्य बुर्जे, किले के चारों तरफ़ गहरी खाई या परिखा, गुप्त प्रवेश द्वार तथा सुरंग, किले के भीतर सिलहरवाना (शस्त्रागार), जलाशय अथवा पानी के टांके, राजप्रासाद तथा सैनिकों के आवास गृह–यहाँ के प्रायः सभी किलों में विद्यमान है।

राजस्थान में दुर्गों का निर्माण दरअसल विभिन्न रूपों में हुआ है। कतिपय दुर्गों के प्रकार निम्न हैं–

1. **धान्वन दुर्ग :** ऐसा दुर्ग जिसके दूर–दूर तक मरु भूमि फैली हो, जैसे–जैसलमेर का किला।

2. **जल दुर्ग :** ऐसा दुर्ग जो जल राशि से घिरा हो, जैसे – गागरोन का किला।

3. **वन दुर्ग :** वह दुर्ग जो कांटेदार वृक्षों के समूह से घिरा हो, जैसे सिवाणा दुर्ग।

4. **पारिख दुर्ग :** वह दुर्ग जिसके चारों तरफ़ गहरी खाई हो, जैसे भरतपुर का लोहागढ़ दुर्ग।

5. **गिरि दुर्ग :** एकान्त में किसी ऊँची दुर्गम पहाड़ी पर स्थित दुर्ग, जैसे मेहरानगढ़, रणथम्भौर।

6. **एरण दुर्ग :** वह दुर्ग जो खाई, कांटो एवं पत्थरों के कारण दुर्गम हो, जैसे चित्तौड़ एवं जालौर दुर्ग।

उक्त दुर्गों के प्रकार के अतिरिक्त दुर्गों के अन्य प्रकार भी होते हैं। यहाँ यह जान लेना उचित होगा कि कुछ दुर्ग ऐसे भी हैं, जिन्हें दो या अधिक दुर्गों के प्रकार में शामिल किया जा सकता है, जैसे चित्तौड़ के दुर्ग को गिरि दुर्ग, पारिख दुर्ग एवं एरण दुर्ग की श्रेणी में भी विद्वान रखते हैं। वैसे दुर्गों के सभी प्रकारों में सैन्य दुर्गों को श्रेष्ठ माना जाता है। ऐसे दुर्ग व्यूह रचना में चतुर वीरों की सेना के साथ अभेद्य समझे जाते थे। चित्तौड़ दुर्ग सहित राजस्थान के कई दुर्गों को 'सैन्य दुर्ग' की श्रेणी में रखा जाता है।

आचार्य कौटिल्य, शुक्र आदि ने भी दुर्गों के महत्त्व एवं वास्तुशिल्प के बारे में संक्षेप में लिखा है। शासकों को यह निर्देश दिया गया है कि वे अधिकाधिक किलों पर अपना आधिपत्य स्थापित करें। राजस्थान में किलों का स्थापत्य वास्तुशिल्पियों के मानदण्ड के अनुसार ही हुआ है। मध्यकाल में यहाँ अनेक किलों का निर्माण हुआ और दुर्ग स्थापत्य कला में एक नया मोड़ आया। किलों का निर्माण करते समय अब इस तथ्य पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा कि दुर्ग ऐसी पहाड़ियों पर बनाये जावें जो ऊँची पहाड़ियों के साथ चौड़ी हो तथा जहाँ खेती और सिंचाई के साधन हों। इसके अतिरिक्त, जो ऐसी पहाड़ियों पर प्राचीन दुर्ग बने हुए थे, उन्हें फिर से नया रूप दिया गया।

आगे के पृष्ठों में आपको राजस्थान के उन दुर्गों से परिचय कराया जा रहा है, जो इतिहास प्रसिद्ध हैं –

अकबर का किला

अजमेर में स्थित इस किले का निर्माण 1570 में अकबर ने करवाया था। इस किले को दौलतखाना या मैग्जीन के नाम से भी जाना जाता है। हिन्दू–मुस्लिम पद्धति से निर्मित इस किले का निर्माण अकबर ने ख्वाजा मुइनुद्दीन हसन चिश्ती के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने हेतु करवाया था। 1576 में महाराजा प्रताप के विरुद्ध हल्दीघाटी युद्ध की योजना को भी अन्तिम रूप इसी किले में दिया गया था। जहाँगीर मेवाड़ को अधीनता में लाने के लिए तीन वर्ष तक इसी किले में रूका था। इस दौरान ब्रिटिश सम्राट जेम्स प्रथम के राजदूत सर टॉमस रो ने इसी किले में 10 जनवरी, 1616 को जहाँगीर से मुलाकात की थी। 1801 में अंग्रेजों ने इस किले पर अधिकार कर इसे अपना

शस्त्रागार (मैग्जीन) बना लिया। किले में स्थित आलीशान चित्रकारी तथा जनाने कक्षों की दीवारों में पच्चीकारी का कार्य बड़ा कलापूर्ण ढंग से किया गया है। वर्तमान में यहाँ राजकीय संग्रहालय स्थित है।

आमेर दुर्ग

यह दुर्ग अपने स्थापत्य की दृष्टि से अन्य दुर्गों से सर्वथा भिन्न है। प्रायः सभी दुर्गों में, जहाँ राजप्रासाद प्राचीर के भीतर समतल भू–भाग पर बने पाये जाते हैं, वहीं आमेर दुर्ग में राजमहल ऊँचाई पर पर्वतीय ढलान पर इस तरह बने हैं कि इन्हें ही दुर्ग का स्वरूप दिया लगता हैं। इस किले की सुरक्षा व्यवस्था काफी मजबूत थी, फिर भी कछवाहा शासकों के शौर्य और मुगल शासको से राजनीतिक मित्रता के कारण यह दुर्ग बाहरी आक्रमणों से सदैव बचा रहा। आमेर दुर्ग के नीचे मावठा तालाब और दौलाराम का बाग खूबसूरती के लिए प्रसिद्ध है। इस किले में बने शिलादेवी, जगतशिरोमणि और अम्बिकेश्वर महादेव के मन्दिरों का ऐतिहासिक काल से ही महत्त्व रहा है।

कुंभलगढ़ दुर्ग

वर्तमान राजसमन्द जिले में अरावली पर्वतमाला की चोटी पर स्थित कुंभलगढ़ दुर्ग का निर्माण राणा कुंभा ने करवाया था। इस दुर्ग का शिल्पी मंडन मिश्र था। कुंभलगढ़ संभवतः भारत का ऐसा किला है, जिसकी प्राचीर 36 किमी तक फैली है। दुर्ग रचना की दृष्टि से यह चित्तौड़ दुर्ग से ही नहीं बल्कि भारत के सभी दुर्गों में विलक्षण और अनुपम है। कुंभलगढ़ के भीतर ऊँचे भाग पर राणा कुंभा ने अपने निवास हेतु 'कटारगढ़' नामक अन्तःदुर्ग का निर्माण करवाया था। इसी कटारगढ़ में राणा उदयसिंह का राज्याभिषेक और महाराणा प्रताप का जन्म हुआ था। कुंभलगढ़ मेवाड़ की संकटकालीन राजधानी रहा है। किले के भीतर कुंभश्याम मंदिर, कुंभा महल, झाली रानी का महल आदि प्रसिद्ध इमारते हैं।

गागरोन का किला

झालावाड़ से चार किमी दूरी पर अरावली पर्वतमाला की एक सुदृढ़ चट्टान पर कालीसिन्ध और आहू नदियों के संगम पर बना यह किला जल दुर्ग की श्रेणी में आता है। इस किले का निर्माण कार्य डोड राजा बीजलदेव ने बारहवीं सदी में करवाया था। दुर्गम पथ, चौतरफा विशाल खाई तथा मजबूत दीवारों के कारण यह दुर्ग अपने आप में अनूठा और अद्भुत है। यह दुर्ग शौर्य ही नहीं भक्ति और त्याग की गाथाओं का साक्षी है।

संत रामानन्द के शिष्य संत पीपा इसी गागरोन के शासक रहे हैं, जिन्होंने राजसी वैभव त्यागकर राज्य अपने अनुज अचलदास खींची को सौंप दिया था। गागरोन में मुस्लिम संत पीर मिट्ठे साहब की दरगाह भी है, जिनका उर्स आज भी प्रतिवर्ष यहाँ लगता है। यह किला अचलदास खींची की वीरता के लिए प्रसिद्ध रहा है जो 1423 में मांडू के सुल्तान हुशंगशाह से लड़ता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ। युद्धोपरान्त रानियों ने अपनी रक्षार्थ जौहर किया।

चित्तौड़ का किला

राजस्थान के किलों में क्षेत्रफल की दृष्टि से सबसे बड़ा चित्तौड़ का किला है। यह दुर्ग वीरता, त्याग, बलिदान, स्वतन्त्रता और स्वाभिमान के प्रतीक के रूप में देश भर में विख्यात है। सात प्रवेश द्वारों से निर्मित इस किले का निर्माण चित्रांगद मौर्य ने करवाया था। यह किला गंभीरी और बेड़च नदियों के संगम पर स्थित है। दिल्ली से मालवा और गुजरात जाने वाले मार्ग पर अवस्थित होने के कारण मध्यकाल में इस किले का सामरिक महत्त्व था। 1303 में इस किले को अलाउद्दीन खिलजी ने तथा 1534 में गुजरात के बहादुरशाह ने अपने अधिकार में ले लिया था। 1567–1568 में अकबर ने चित्तौड़गढ़ पर आक्रमण करके यहाँ भयंकर नरसंहार करवाया था। चित्तौड़गढ़ में इतिहास प्रसिद्ध साकों में 1303 का रानी पद्मिनी का जौहर और 1534 का रानी कर्णावती का जौहर मुख्य है। इस किले

के साथ गोरा–बादल, जयमल–पत्ता की वीरता तथा पन्नाधाय के त्याग की अमर गाथाएँ जुड़ी हैं।

चित्तौड़गढ़ के भीतर राणा कुंभा द्वारा निर्मित नौ मंजिला प्रसिद्ध कीर्तिस्तम्भ अपने शिल्प और स्थापत्य की दृष्टि से अनूठा है। इस किले के भीतर निर्मित महलों और मन्दिरों में रानी पद्मिनी का महल, नवलखा भण्डार, जैन कीर्ति स्तम्भ (सात मंजिला), कुंभश्याम मंदिर, समिद्धेश्वर मंदिर, मीरा मंदिर, कालिका माता मंदिर, श्रृंगार चँवरी आदि दर्शनीय हैं।

जयगढ़

मध्ययुगीन भारत की प्रमुख सैनिक इमारतों में से एक जयगढ़ दुर्ग की खास बात यह कि इसमें तोपें ढालने का विशाल कारखाना था, जो शायद ही किसी अन्य भारतीय दुर्ग में रहा है। इस किले में रखी 'जयबाण' तोप को एशिया की सबसे बड़ी तोप माना जाता है। जयगढ़ अपने विशाल पानी के टांकों के लिये भी जाना जाता है। जल संग्रहण की खास तकनीक के अन्तर्गत जयगढ़ किले के चारों ओर पहाड़ियों पर बनी पक्की नालियों से बरसात का पानी इन टांकों में एकत्र होता रहा है। इस किले का निर्माण एवं विस्तार में विभिन्न कछवाहा शासकों का योगदान रहा है, परन्तु इसे वर्तमान स्वरूप सवाई जयसिंह ने प्रदान किया। जयगढ़ को रहस्यमय दुर्ग भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें कई गुप्त सुरंगे हैं। इस किले में राजनीतिक बन्दी रखे जाते थे। ऐसा माना जाता है कि मानसिंह ने यहाँ सुरक्षा की दृष्टि से अपना खजाना छिपाया था। वर्तमान में जयगढ़ किले में मध्यकालीन शस्त्रास्त्रों का विशाल संग्रहालय है। यहाँ के महल दर्शनीय हैं।

जालौर का किला

सोनगिरि पहाड़ी पर स्थित यह किला सूकड़ी नदी के किनारे बना हुआ है। शिलालेखों में जालौर का नाम जाबालिपुर और किले का नाम सुवर्णगिरि मिलता है। इस किले का निर्माण प्रतिहारों द्वारा आठवीं सदी में करवाया गया था। इस किले पर परमार, चौहान, सोलंकियों, तुर्कों और राठौड़ो का समय–समय पर आधिपत्य रहा। किले के भीतर बनी तोपखाना मस्जिद, जो पूर्व में परमार शासक भोज द्वारा निर्मित संस्कृत पाठशाला थी, बहुत आकर्षक है। यहाँ का प्रसिद्ध शासक कान्हड़दे चौहान (1305–1311) था, जो अलाउद्दीन खिलजी से लड़ता हुआ वीर गति को प्राप्त हुआ।

जूनागढ़ का किला

बीकानेर स्थित जूनागढ़ किले का निर्माण राठौड़ शासक रायसिंह ने करवाया था। यहाँ पूर्व में स्थित पुराने किले के स्थान पर इस किले का निर्माण करवाने के कारण इसे जूनागढ़ के नाम से जाना जाता है। जूनागढ़ के आन्तरिक प्रवेश द्वार सूरजपोल के दोनों तरफ जयमल मेड़तियाँ और फत्ता सिसोदिया की गजारूढ़ मूर्तियाँ स्थापित हैं, जो उनके पराक्रम और बलिदान का स्मरण कराती हैं। सूरजपोल पर ही रायसिंह प्रशस्ति उत्कीर्ण है। शिल्प सौन्दर्य की अनूठी मिशाल लिए जूनागढ़ किले में बने महल और उनकी बनावट मुगल स्थापत्य कला की बरबस ही याद दिलाते हैं। किले में कुल 37 बुर्जे हैं, जिनके ऊपर कभी तोपें रखी जाती थीं। सम्भवतः राजस्थान का यह एक मात्र ऐसा किला है, जिसकी दीवारें, महल इत्यादि में शिल्प सौन्दर्य का अद्भुत मिश्रण है। गंगा निवास जूनागढ़ का ऐसा हॉल है, जिसमें पत्थर की बनावट और उस पर उत्कीर्ण कृष्ण रासलीला दर्शनीय हैं। फूलमहल, गजमंदिर, अनूप महल, कर्ण महल, लाल निवास, सरदार निवास इत्यादि इस किले के प्रमुख वास्तु हैं।

जैसलमेर का किला

राजस्थान की स्वर्णनगरी कहे जाने वाले जैसलमेर में त्रिकूट पहाड़ी पर पीले पत्थरों से निर्मित इस किले को 'सोनार का किला' भी कहा जाता है। इसका निर्माण बारहवीं सदी में भाटी शासक राव जैसल ने करवाया था। दूर से देखने पर यह किला पहाड़ी पर लंगर डाले एक

जहाज का आभास कराता है। दुर्ग के चारों ओर घाघरानुमा परकोटा बना हुआ है, जिसे 'कमरकोट' अथवा 'पाडा' कहा जाता है। इसे बनाने में चूने का प्रयोग नहीं किया गया बल्कि कारीगरों ने बड़े–बड़े पीले पत्थरों को परस्पर जोड़कर खड़ा किया है। 99 बुर्जो वाला यह किला मरुभूमि का महत्त्वपूर्ण किला है। किले के भीतर बने प्राचीन एवं भव्य जैन मंदिर–पार्श्वनाथ और ऋषभदेव मंदिर अपने शिल्प एवं सौन्दर्य के कारण आबू के देलवाड़ा जैन मंदिरों के तुल्य हैं। किले के महलों में रंगमहल, मोती महल, गजविलास और जवाहर विलास प्रमुख हैं। जैसलमेर का किला इस रूप में भी खासा प्रसिद्ध है कि यहाँ पर दुर्लभ और प्राचीन पाण्डुलिपियों का अमूल्य संग्रह है।

जैसलमेर का किला 'ढाई साके' के लिए प्रसिद्ध है। पहला साका अलाउद्दीन खिलजी (1296–1316) के आक्रमण के दौरान, दूसरा साका फिरोज तुगलक (1351–1388) के आक्रमण के दौरान हुआ था। 1550 में कंध ाार के अमीर अली ने यहाँ के भाटी शासक लूणकरण को विश्वासघात करके मार दिया था परन्तु भाटियों की विजय होने के कारण महिलाओं ने जौहर नहीं किया। यह घटना 'अर्द्ध साका' कहलाती है।

तारागढ़ (अजमेर)

अजमेर में स्थित तारागढ़ को 'गढ़बीठली' के नाम से भी जाना जाता है। चौहान शासक अजयराज (1105–1133) द्वारा निर्मित इस किले के बारे में मान्यता है कि राणा सांगा के भाई कुँवर पृथ्वीराज ने इस किले के कुछ भाग बनवाकर अपनी पत्नी तारा के नाम पर इसका नाम तारागढ़ रखा था। तारागढ़ के भीतर 14 विशाल बुर्जे, अनेक जलाशय और मुस्लिम संत मीरान् साहब की दरगाह बनी हुई है।

तारागढ़ (बूँदी)

बूँदी का दुर्ग तारागढ़ पर्वत की ऊँची चोटी पर तारे के समान दिखाई देने के कारण 'तारागढ़' के नाम से प्रसिद्ध है। हाड़ा शासक बरसिंह द्वारा चौदहवीं सदी में बनवाये गये इस किले को मालवा के महमूद खिलजी, मेवाड़ के राणा क्षेत्रसिंह और जयपुर के सवाई जयसिंह के आक्रमणों का सामना करना पड़ा। यहाँ के शासक सुर्जन हाड़ा द्वारा 1569 में अकबर की अधीनता स्वीकारने के कारण यह किला अप्रत्यक्ष रूप से मुगल अधीनता में चला गया। तारागढ़ के महलों के भीतर सुन्दर चित्रकारी (भितिचित्र) हाड़ौती कला के सजीव रूप का प्रतिनिधित्व करती है। किले में छत्र महल, अनिरूद्ध महल, बादल महल, फूल महल इत्यादि बने हुये हैं।

नाहरगढ़

जयपुर के पहरेदार के रूप में प्रसिद्ध इस किले का निर्माण सवाई जयसिंह ने करवाया था। इस किले को सुदर्शनगढ़ के नाम से भी जाना जाता है। ऐसा माना जाता है कि इस किले का निर्माण सवाई जयसिंह ने मराठों के विरुद्ध सुरक्षा की दृष्टि से करवाया था। इस किले में सवाई माधोसिंह ने अपनी नौ पासवानों के नाम पर एक समान नौ महल बनवाये।

मेहरानगढ़

सूर्यनगरी के नाम से विख्यात जोधपुर की चिड़ियाटूक पहाड़ी पर राव जोधा ने 1459 में मेहरानगढ़ का निर्माण करवाया था। मयूर की आकृति में बने इस दुर्ग को मयूरध्वज के नाम से जाना जाता है। मेहरानगढ़ दो मंजिला है। इसमें रखी लम्बी दूरी तक मार करने वाली अनेक तोपों का अपना गौरवमयी इतिहास है। इनमें किलकिला, भवानी इत्यादि तोपें अत्यधिक भारी और अद्भुत हैं। यह दुर्ग वीर दुर्गादास की स्वामिभक्ति का साक्षी है। लाल बलुआ पत्थर से निर्मित मेहरानगढ़ वास्तुकला की दृष्टि से बेजोड़ है। इस किले के स्थापत्यों में मोती महल, फतह महल, जनाना महल, शृंगार चौकी, तख्तविलास, अजीत विलास, उम्मेद विलास इत्यादि का वैभव प्रशंसनीय है। इसमें स्थित महलों की नक्काशी, मेहराब, झरोखें और जालियों की बनावट हैरत डालने वाली है।

रणथम्भौर दुर्ग

सवाई माधोपुर शहर के निकट स्थित रणथम्भौर

दुर्ग अरावली पर्वत की विषम आकृति वाली सात पहाड़ियों से घिरा हुआ है। यह किला यद्यपि एक ऊँचे शिखर पर स्थित है, तथापि समीप जाने पर ही दिखाई देता है। यह दुर्ग चारों ओर से घने जंगलों से घिरा हुआ है तथा इसकी किलेबन्दी काफी सुदृढ़ है। इसलिए अबुल फ़ज़ल ने इसे बख्तरबंद किला कहा है। ऐसी मान्यता है कि इसका निर्माण आठवीं शताब्दी में चौहान शासकों ने करवाया था।

हम्मीर देव चौहान की आन–बान का प्रतीक रणथम्भौर दुर्ग पर अलाउद्दीन खिलजी ने 1301 में ऐतिहासिक आक्रमण किया था। हम्मीर विश्वासघात के परिणामस्वरूप लड़ता हुआ वीरगति को प्राप्त हुआ तथा उसकी पत्नी रंगादेवी ने जौहर कर लिया। यह जौहर राजस्थान के इतिहास का प्रथम जौहर माना जाता है। रणथम्भौर किले में बने हम्मीर महल, हम्मीर की कचहरी, सुपारी महल, बादल महल, बत्तीस खंभों की छतरी, जैन मंदिर तथा त्रिनेत्र गणेश मंदिर उल्लेखनीय हैं। गणेश मन्दिर की विशेष मान्यता है।

लोहागढ़

राजस्थान के सिंहद्वार भरतपुर में जाट राजाओं की वीरता एवं शौर्य गाथाओं को अपने आंचल में समेटे लोहागढ़ का किला अजेयता एवं सुदृढ़ता के लिए प्रसिद्ध हैं। जाट शासक सूरजमल ने इसे 1733 में बनवाया था। लोहागढ़ को यहाँ पूर्व में एक मिट्टी की गढ़ी को विकसित करके वर्तमान रूप में परिवर्तित किया गया। किले के प्रवेशद्वार पर अष्टधातु निर्मित कलात्मक और मजबूत दरवाजा आज भी लोहागढ़ का लोहा मनवाता प्रतीत होता है। इस कलात्मक दरवाजे को महाराजा जवाहरसिंह 1765 में दिल्ली से विजय करके लाये थे। इस किले की अभेद्यता का कारण इसकी दीवारों की चौड़ाई है। किले की बाहरी प्राचीर मिट्टी की बनी है तथा इसके चारों ओर एक गहरी खाई है। अंग्रेज जनरल लॉर्ड लेक ने तो अपनी विशाल सेना और तोपखाने के साथ पाँच बार इस किले पर चढ़ाई की परन्तु हर बार उसे पराजय का सामना करना पड़ा। किले में बने किशोरी महल, जवाहर बुर्ज, कोठी खास, दादी माँ का महल, वजीर की कोठी, गंगा मंदिर, लक्ष्मण मंदिर आदि दर्शनीय हैं।

मन्दिर शिल्प

मन्दिर शिल्प की दृष्टि से राजस्थान अत्यन्त समृद्ध है तथा उत्तर भारत के मंदिर स्थापत्य के इतिहास में उसका विशिष्ट महत्त्व है। राजस्थान में जो मंदिर मिलते हैं, उनमें सामान्यतः एक अलंकृत प्रवेशद्वार होता है, उसे तोरण द्वार कहते हैं। तोरण द्वार में प्रवेश करते ही उप मण्डप आता है। तत्पश्चात् विशाल आंगन आता है, जिसे सभा मण्डप कहते हैं। सभा मण्डप के आगे मूल मंदिर का प्रवेश द्वार आता है। मूल मन्दिर को गर्भगृह कहा जाता है, जिसमें मूल नायक की प्रतिमा होती है। गर्भगृह के ऊपर अलंकृत अथवा स्वर्णमण्डित शिखर होता है। गर्भगृह के चारों ओर गलियारा होता है, जिसे पद–प्रदक्षिणा पथ कहा जाता है। तेरहवीं सदी तक राजपूतों के बल एवं शौर्य की भावना मन्दिर स्थापत्य में भी प्रतिबिम्बित होती है। अब मन्दिर के चारों ओर ऊँची दीवारें, बड़े दरवाजें तथा बुर्ज बनाकर दुर्ग स्थापत्य का आभास करवाया गया। इस प्रकार के मन्दिरों में रणकपुर का जैन मन्दिर, उदयपुर का एकलिंगजी का मन्दिर, नीलकण्ठ (कुंभलगढ़) मन्दिर प्रमुख हैं।

राजथान में सातवीं शताब्दी से पूर्व जो मन्दिर बने, दुर्भाग्य से उनके अवशेष ही प्राप्त होते हैं। यहाँ मन्दिरों के विकास का काल सातवीं से दसवीं शताब्दी के मध्य रहा। यह वह काल था, जब राजस्थान में अनेक मन्दिर बने। इस काल में ही मन्दिरों की क्षेत्रीय शैलियाँ विकसित हुई। इस काल में विशाल एवं परिपूर्ण मन्दिरों का निर्माण हुआ। लगभग आठवीं शताब्दी से राजस्थान में जिस क्षेत्रीय शैली का विकास हुआ, गुर्जर–प्रतिहार अथवा महामारू कहा गया है। इस शैली के अन्तर्गत प्रारम्भिक निर्माण मण्डौर के प्रतिहारों, सांभर के चौहानों तथा चित्तौड़ के मौर्यों ने किया। इस प्रकार के मन्दिरों में केकीन्द (मेड़ता) का नीलकण्ठेश्वर मन्दिर, किराडू का सोमेश्वर मन्दिर प्रमुख हैं। इस क्रम को आगे बढ़ाने वालों में जालौर के गुर्जर प्रतिहार रहे और बाद

में चौहानों, परमारों और गुहिलों ने मन्दिर शिल्प को समृद्ध बनाया। परन्तु इस युग के कुछ मन्दिर गुर्जर–प्रतिहार शैली की मूलधारा से अलग है, इनमें बाड़ौली का मन्दिर, नागदा में सास–बहू का मन्दिर और उदयपुर में जगत अम्बिका मन्दिर प्रमुख हैं। इसी युग का सिरोही जिले में वर्माण का ब्रह्माण्ड स्वामी मन्दिर अपनी भग्नावस्था के बावजूद राजस्थान के सुन्दर मन्दिरों में से एक है। यह मन्दिर एक अलंकृत मंच पर अवस्थित है। दक्षिण राजस्थान के इन मन्दिरों में क्रमबद्धता एवं एकसूत्रता का अभाव दिखाई देता है। इन मन्दिरों के शिल्प पर गुजरात का प्रभाव स्पष्टतः देखा जा सकता है। इन मन्दिरों में विभिन्न शैलीगत तत्त्वों एवं परस्पर विभिन्नताओं के दर्शन होते हैं।

ग्यारहवीं से तेरहवीं सदी के बीच निर्मित होने वाले राजस्थान के मन्दिरों को श्रेष्ठ समझा जाता है क्योंकि यह मन्दिर–शिल्प के उत्कर्ष का काल था। इस युग में राजस्थान में काफी संख्या में बड़े और अलंकृत मन्दिर बने, जिन्हें सोलंकी या मारु गुर्जर शैली के अन्तर्गत रख जा सकता है। इस शैली के मन्दिरों में ओसियाँ का सच्चिया माता मन्दिर, चित्तौड़ दुर्ग में स्थित समिंधेश्वर मन्दिर आदि प्रमुख हैं। इस शैली के द्वार सजावटी है। खंभे अलंकृत, पतले, लम्बे और गोलाई लिये हुये है, गर्भगृह के रथ आगे बढ़े हुये है। ये मन्दिर ऊँची पीठिका पर बने हुये हैं।

राजस्थान में जैन धर्म के अनुयायियों ने अनेक जैन मन्दिर बनवाये, जो वास्तुकला की दृष्टि से अभूतपूर्व हैं। इन मंदिरों में विशिष्ट तल विन्यास, संयोजन और स्वरूप का विकास हुआ जो इस धर्म की पूजा–पद्धति और मान्यताओं के अनुरूप था। जैन मन्दिरों में सर्वाधिक प्रसिद्ध देलवाड़ा के मन्दिर हैं। इनके अतिरिक्त रणकपुर, ओसियाँ, जैसलमेर आदि स्थानों के जैन मन्दिर प्रसिद्ध हैं। साथ ही, पाली जिले में सेवाड़ी, घाणेराव, नाडौल–नारलाई, सिरोही जिले में वर्माण, झालावाड़ जिले में चाँदखेड़ी और झालरापाटन, बूँदी में केशोरायपाटन, करौली में श्रीमहावीर जी आदि स्थानों के जैन मन्दिर प्रमुख हैं।

एकलिंगजी का मन्दिर, उदयपुर

मेवाड़ महाराणाओं के इष्टदेव एकलिंगजी का लकुलीश मन्दिर उदयपुर शहर के निकट नाथद्वारा राजमार्ग पर कैलाशपुरी नामक गाँव में बना हुआ है। इसका निर्माण आठवीं शताब्दी में मेवाड़ के गुहिल शासक बप्पा रावल ने करवाया था तथा इसे वर्तमान स्वरूप महाराणा रायमल ने दिया था। मन्दिर के मुख्य भाग में काले पत्थर से बनी एकलिंगजी की चतुर्मुखी प्रतिमा है। किसी भी साहसिक कार्य के लिए प्रस्थान करने से पूर्व मेवाड़ के शासक इस मन्दिर में आकर आशीर्वाद लेते थे। एकलिंग जी को मेवाड़ राजघराने का कुलदेवता माना जाता था, जबकि यहाँ का राजा स्वयं को इनका दीवान मानते थे। इस मन्दिर के अहाते में कुंभा द्वारा निर्मित विष्णु मंदिर भी है, जिसे लोग मीराबाई का मन्दिर कहते हैं। एकलिंगजी में शिवरात्रि को प्रतिवर्ष मेला लगता है।

किराडू के मन्दिर, बाड़मेर

बाड़मेर जिले में स्थित किराडू प्राचीन मन्दिरों के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ का सोमेश्वर मन्दिर शिल्पकला के लिए विख्यात है। वीर रस, श्रृंगार रस, युद्ध, नृत्य, कामशारुप इत्यादि की भाव भंगिमा युक्त मूर्तियाँ शिल्पकला की दृष्टि से अनूठी हैं। कामशास्त्र की मूर्तियों के कारण किराडू को 'राजस्थान का खजुराहो' कहा जाता है। किराडू के मन्दिरों की मूर्तियाँ जीवन के विभिन्न पहलुओं को समेटे हुए है। शिल्पकला के लिए विख्यात ये मन्दिर ग्यारहवीं–बारहवीं शताब्दी के बने हुए हैं।

कैला देवी मन्दिर, करौली

मूल मंदिर खींची राजपूतों का है, जिसे कालान्तर में यादव वंश के शासक भंवरपाल ने संगमरमर से निर्मित करवाया था। इनकी कुलदेवी कैलादेवी है, जिसका मन्दिर करौली से 26 किमी दूर अवस्थित है। मुख्य मन्दिर में कैलादेवी (महालक्ष्मी) एवं चामुण्डा देवी की प्रतिमाएँ स्थापित हैं। धार्मिक आस्था के प्रमुख केन्द्र के रूप में प्रतिष्ठित इस मन्दिर में लाखों दर्शनार्थी प्रतिवर्ष आते हैं। इसलिए यहाँ लगने वाले मेले को लक्खी मेला कहा जाता है। राजपूत, मीणा आदि कैलादेवी के प्रमुख भक्त माने जाते हैं। यहाँ एक

भैरों मन्दिर और हनुमान मन्दिर (लांगुरिया) भी स्थित है। यहाँ लगने वाले मेले में लांगुरिया गीत गाये जाते हैं।

गणेश मन्दिर, रणथम्भौर

सवाई माधोपुर शहर के निकट स्थित रणथम्भौर के किले में देशभर में विख्यात त्रिनेत्र मन्दिर बना हुआ है। सिन्दूर लेपन की मात्रा अधिक होने के कारण मूर्ति का वास्तविक स्वरूप जानना कठिन है, पर इतना निश्चित है कि गणेशजी के मुख की ही पूजा की जाती है। गर्दन, हाथ, शरीर, आयुध व अन्य अवयव इस प्रतिमा में नहीं है। वैवाहिक इत्यादि मांगलिक अवसरों पर गणेश जी को प्रथम पाती पहुँचाकर निमन्त्रित करने की सुदीर्घ परम्परा है।

गोविन्ददेव जी मन्दिर, जयपुर

जयपुर का गोविन्ददेवजी मन्दिर गौड़ीय सम्प्रदाय का प्रमुख मन्दिर है। वल्लभ सम्प्रदाय के अनुयायी इनके बालरूप की पूजा करते हैं, तो गौड़ीय सम्प्रदाय वाले युगल रूप अर्थात् राधाकृष्ण के रूप में पूजते हैं। गोविन्ददेव जी की यह मूर्ति सवाई जयसिंह द्वारा वृन्दावन से लाकर जयपुर में प्रतिष्ठापित की गई थी। यह मंदिर जगन्नाथपुरी, ब्रज और ढूँढाड़ क्षेत्र की परम्पराओं का सुन्दर संयोजन प्रस्तुत करता है।

जगतशिरोमणि मन्दिर, आमेर

आमेर में स्थित इस मंदिर का निर्माण कछवाहा शासक मानसिंह की पत्नी कंकावती ने अपने पुत्र जगतसिंह की स्मृति में करवाया था। कहा जाता है इस मंदिर में प्रतिष्ठित काले पत्थर की कृष्ण की मूर्ति वही मूर्ति है, जिसकी मीरा चित्तौड़ में आराधना किया करती थी। मानसिंह इसे चित्तौड़ से लेकर आया था। यह मंदिर अपने उत्कृष्ट शिल्प एवं सौन्दर्य के कारण आमेर का सबसे अधिक विख्यात मंदिर है।

जगदीश मंदिर, उदयपुर

उदयपुर में स्थित जगदीश मन्दिर शिल्पकला की दृष्टि से अनूठा है। इसका निर्माण 1651 में महाराणा जगतसिंह ने करवाया था। इसमें भगवान जगदीश (विष्णु) की काले पत्थर से निर्मित पाँच फीट ऊँची प्रतिमा स्थापित है। यह मन्दिर पंचायतन शैली का है। चार लघु मंदिरों से परिवृत होने के कारण इसे पंचायतन कहा गया है। मन्दिर के चारों कोनों में शिव पार्वती, गणपति, सूर्य तथा देवी के चार लघु मन्दिर तथा गर्भगृह के सामने गरूड़ की विशाल प्रतिमा है।

यह विशाल और शिखरबन्द मन्दिर एक ऊँचे स्थान पर बना हुआ होने के कारण बड़ा भव्य दिखता है। इस मन्दिर के बाहरी भाग में चारों ओर अत्यन्त सुन्दर शिल्प बना हुआ है। कर्नल टॉड, गौरीशंकर हीराचन्द ओझा, कविराज श्यामलदास आदि ने इस मन्दिर के शिल्प की उत्कृष्टता की मुक्त कंठ से प्रशंसा की है।

सूर्य मंदिर, झालरापाटन

झालरापाटन के मध्य अवस्थित इस विशाल मन्दिर में सूर्य और विष्णु के सम्मिलित भाव की एक ही प्रतिमा मुख्य रथिका में है। गर्भगृह के बाहर शिव की ताण्डव नृत्यरत प्रतिमा और मातृकाओं की प्रतिमाएँ हैं। यह मन्दिर मूल रूप से दसवीं सदी का है, गर्भगृह की रथिका में त्रिमुखी सूर्य प्रतिमा है, जिसमें विष्णु का भाव मिश्रित है।

जैन मन्दिर, देलवाड़ा

सफेद संगमरमर से निर्मित भारतीय शिल्पकला की उत्कृष्टता तथा जैन संस्कृति के वैभव और उदारता को प्रकट करने वाले देलवाड़ा के जैन मन्दिर सिरोही जिले में आबू पर्वत पर स्थित है। यहाँ स्थित जैन मन्दिरों में दो मन्दिर प्रमुख है। प्रथम मन्दिर 1031 ई. में गुजरात के चालुक्य राजा भीमदेव के मन्त्री विमलशाह ने बनवाया था। यह मन्दिर प्रथम जैन तीर्थंकर ऋषभदेव को समर्पित है। इस मन्दिर को विमलवसही के नाम से भी जाना जाता है। दूसरा प्रमुख मन्दिर 22वें जैन तीर्थंकर नेमिनाथ का है, जिसका निर्माण वास्तुपाल और

तेजपाल द्वारा 1230 में करवाया गया था। इस मन्दिर को लूणवसही के नाम से भी जाना जाता है। यहाँ के मन्दिरों के मंडपों, स्तम्भों, छतरियों तथा वेदियों के निर्माण में श्वेत पत्थर पर इतनी बारीक एवं भव्य खुदाई की गई है, जो अन्यत्र दुर्लभ है। वस्तुतः यह मन्दिर सम्पूर्ण भारत में कलात्मकता में बेजोड़ है।

शिव मन्दिर, बाड़ौली

चित्तौड़ जिले में स्थित बाड़ौली शिव मन्दिर पंचायतन शैली के मन्दिर के रूप में विख्यात है। इसमें मुख्य मूर्तियाँ शिव–पार्वती और उनके अनुचरों की है। ऐसा माना जाता है कि इस मन्दिर का निर्माण हूण शासक तोरमाण के पुत्र मिहिरकुल ने करवाया था। इस मन्दिर को प्रकाश में लाने का श्रेय जेम्स टॉड को दिया जाता है।

ब्रह्मा मन्दिर , पुष्कर

पुष्कर में स्थित ब्रह्मा मन्दिर राजस्थान के प्राचीनतम मन्दिरों में से एक है और पूरे भारत में कुछ वर्षों पूर्व तक यह अकेला मन्दिर था। मन्दिर के अन्दर चतुर्मुखी ब्रह्माजी की मूर्ति प्रतिष्ठित है।

शिव मन्दिर , भण्डदेवरा

बारां जिले के रामगढ़ में स्थित भण्डदेवरा के शिव मन्दिर को 'हाड़ौती का खजुराहो' कहा जाता है। मन्दिर में उत्कीर्ण मिथुन मुद्रा की आकृतियाँ इसे खजुराहो के समकक्ष रखती है। इस मन्दिर का निर्माण मेदवंशीय राजा मलय वर्मा ने दसवीं शताब्दी में करवाया था। यह देवालय पंचायतन शैली में बना हुआ है।

जैन मन्दिर, रणकपुर

पाली जिले में स्थित रणकपुर का जैन मन्दिर, अपनी अद्भुत शिल्पकला एवं भव्यता के साथ आध्यात्मिकता लिए हुए है। प्रथम जैन तीर्थंकर आदिनाथ को समर्पित इस मन्दिर का निर्माण महाराणा कुंभा के शासनकाल (1433–1468) में धरणशाह नामक एक जैन व्यापारी ने, प्रसिद्ध शिल्प विशेषज्ञ देपाक के निर्देशन में करवाया था। यह मन्दिर 1444 खंभों पर टिका हुआ है। इसलिए इसे 'खंभों का अजायबघर' कहा जाता है। मूल गर्भगृह में आदिनाथ की चार मुख वाली मूर्ति लगी हुई है। इसलिए यह मन्दिर 'चौमुखा मन्दिर' भी कहलाता है। यह मन्दिर अपनी शिल्पकला के साथ ही अध्यात्म एवं शांति का केन्द्र है।

रामद्वारा, शाहपुरा

भीलवाड़ा जिले में स्थित शाहपुरा में रामस्नेही सम्प्रदाय की मुख्य पीठ स्थित है। यहाँ रामस्नेही सम्प्रदाय के संस्थापक स्वामी रामचरण का समाधिस्थल तथा एक विशाल रामद्वारा बना हुआ है। रामचरण के समाधि स्थल पर बारहदरी बनी है, जिस पर कलात्मक बारह स्तंभ एवं बारह दरवाजे लगे हुये हैं। रामद्वारा परिसर में सम्प्रदाय के आचार्यों और शाहपुरा के दिवंगत राजाओं की छतरियाँ बनी हुई हैं। यहाँ प्रतिवर्ष फूलडोल उत्सव धूमधाम से मनाया जाता है।

शिलादेवी मन्दिर, आमेर

आमेर में स्थित शिलादेवी मन्दिर का निर्माण कछवाहा शासक मानसिंह (1589–1614) ने करवाया था। मानसिंह शिलादेवी की मूर्ति को बंगाल से जीतकर लाया था। इस मन्दिर के कपाट चाँदी के बने हुये हैं, जिन पर विद्या देवियाँ व नवदुर्गा का चित्रण किया गया है।

शीतलेश्वर मन्दिर , झालरापाटन

झालावाड़ जिले में झालरापाटन में चन्द्रभागा नदी के तट पर स्थित यह मन्दिर राजस्थान के तिथियुक्त मन्दिरों में सबसे प्राचीन (689 ई.) हैं। इस मन्दिर के भग्नावशेषों में केवल गर्भगृह और छत रहित अंतराल ही मिलता है।

श्रीनाथजी मन्दिर, नाथद्वारा

राजसमन्द जिले के श्रीनाथद्वारा में स्थित श्रीनाथजी मन्दिर पुष्टिमार्गीय वैष्णवों का प्रमुख तीर्थस्थल है। यहाँ

कृष्ण के बालरूप की उपासना की जाती है। औरंगजेब द्वारा हिन्दू मूर्तियों एवं मन्दिरों को तुड़वाने पर मथुरा से वैष्णव दाउजी महाराज के नेतृत्त्व में वैष्णव भक्त श्रीनाथ जी की मूर्ति सिहाड़ (आधुनिक नाथद्वारा)लाये थे, जहाँ महाराणा राजसिंह ने उन्हें शरण देकर यहाँ मूर्ति को प्रतिष्ठित किया था। यहाँ अष्टछाप कवियों के पद गाये जाते हैं, जिसे 'हवेली संगीत' कहा जाता है। यहाँ श्रीनाथ के स्वरूप के पीछे कृष्णलीला विषयक पट् लगाया जाता है, जिसे 'पिछवाई' कहा जाता है।

सच्चियाा माता मन्दिर , ओसियां

जोधपुर जिले के ओसियाँ में सच्चियाा माता का बारहवीं सदी का विशाल और भव्य मन्दिर स्थित है। इस पंचायतन शैली के मन्दिर के कोनों पर विष्णु, शिव व सूर्य के मन्दिर बने हुये है, जो स्थापत्य शिल्प के उत्कृष्ट नमूने हैं। सच्चियाा माता हिन्दुओं और ओसवाल समाज दोनों की ही पूज्य देवी है। ओसियाँ के मन्दिरों में शैलीगत विविधता मिलती है। इनमें अलंकरण काफ़ी मात्रा में है। यहाँ के मन्दिरों के दरवाजों पर पौराणिक तथा लोक कथाओं का चित्रण किया गया है।

यहाँ के मन्दिर परिसर में जैन धर्म के चौबीसवें तीर्थंकर भगवान महावीर का एक सुन्दर मन्दिर है, जो प्रतिहारकालीन है। इस मन्दिर के तोरण भव्य हैं और स्तम्भों पर जैन तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ उत्कीर्ण है।

सास–बहू मन्दिर , नागदा

उदयपुर जिले में स्थित नागदा में युगल मन्दिर के रूप में प्रसिद्ध सास–बहू का मन्दिर बना हुआ है। इनमें बड़ा मन्दिर (सास का मन्दिर) दस सहायक देव मन्दिरों से घिरा हुआ है, जबकि छोटा मंदिर (बहू का मन्दिर) पंचायतन प्रकार का है। ये मन्दिर विष्णु को समर्पित है तथा दसवीं सदी के बने हुये हैं, जो श्वेत पत्थर के चौकोर चबूतरों पर निर्मित है। सास के मन्दिर का शिखर ईंटों का है तथा शेष मन्दिर संगमरमर का है। इस मंदिर के स्तंभ, उत्कीर्ण शिलापट्ट एवं मूर्तियों सभी उत्कृष्ट शिल्पकला के उदाहरण हैं।

राजप्रासाद एवं महल स्थापत्य

प्राचीन ग्रंथों में राजप्रासाद वास्तु का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। राजस्थान को इतिहास में 'राजाओं के प्रदेश' के नाम से भी जाना गया है। ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक था कि राजा अपने रहने के विस्तृत आवास बनाते। दुर्भाग्य से, अब राजस्थान के प्राचीन एवं पूर्व मध्यकाल की संधिकाल के राजप्रासादों के खण्डहर ही शेष रहे हैं। मेनाल, नागदा आदि स्थान के राजप्रासादों के खण्डहर यह बताते हैं कि वे सादगी युक्त थे। इनमें संकरे दरवाजे एवं खिड़कियों का अभाव है, जो सुरक्षा के कारणों से रखे गये हैं।

मध्यकाल में राजप्रासाद विशाल, भव्य एवं अलंकृत बनने लगे। पूर्व मध्यकाल में अधिकांश राजप्रासाद किलों में ही देखने को मिलते हैं। इन राजप्रासादों में राजा एवं उसके परिवार के अतिरिक्त उसके बन्धु–बान्धव तथा अतिविशिष्ट नौकरशाही रहा करती थी। इस युग में भी कई वास्तुविद् हुए जिनमें मण्डन, नापा, भाणा, विद्याधर आदि प्रमुख हैं। कुम्भायुगीन प्रख्यात शिल्पी मण्डन का विचार है कि राजभवन नगर के मध्य में अथवा नगर के एक तरफ किसी ऊँचे स्थान पर बनाना चाहिये। उसने जनाना एवं मर्दाना महलों को सुगम मार्गों से जोड़े जाने की व्यवस्था सुझाई है। उसने अन्य महलों को भी एक–दूसरे से जोड़ने तथा सभी को एक इकाई का रूप देने पर बल दिया है। कुम्भाकालीन राजप्रासाद सादे थे किन्तु बाद के काल में महलों की बनावट एवं शिल्प में परिवर्तन दिखाई देता है। 15वीं शताब्दी के पश्चात् महलों में मुगल प्रभाव देखा जा सकता है। अब इन महलों में तड़क–भड़क देखी जा सकती है। फव्वारे, छोटे बाग–बगीचे, बेल–बूँटे, संगमरमर का प्रयोग, मेहराब, गुम्बज आदि रूपों में मुगल प्रभाव को इन इमारतों में देखा जा सकता है। उदयपुर के महलों में अमरसिंह के महल कर्णसिंह का जगमन्दिर, जगतसिंह द्वितीय के समय के प्रीतम निवास महल, जगनिवास महल, आमेर के दीवाने आम, दीवाने खास, बीकानेर के कर्णमहल, शीशमहल, अनूप महल, रंगमहल,

जोधपुर का फूल महल आदि पर मुगल प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। सत्रहवी शताब्दी के बाद कोटा, बूँदी, जयपुर आदि में निर्मित महलों में स्पष्टतः मुगल प्रभाव दिखाई देता है। मुगल प्रभाव के कारण राजप्रासादों में दीवाने आम, दीवाने खास, चित्रशालाएँ, बारहदरियाँ, गवाक्ष–झरोखे, रंग महल आदि को स्थान मिलने लगा। इस प्रकार के महलों में जयपुर का सिटी पैलेस, उदयपुर का सिटी पैलेस प्रमुख है। राजस्थान के महलों में डीग के महलों का विशिष्ट स्थान है। डीग के महल जाट नरेश सूरजमल द्वारा निर्मित है। डीग के महलों के चारों ओर छज्जे (कार्निस) हैं, जो प्रभावोत्पादक है। डीग के महलों एवं इनमें बने उद्यानों का दृष्टिभाव (दिखना) विशेष कौशल का परिचय कराता है। यह जल महल के नाम से भी प्रख्यात है। डीग के महलों में गोपाल भवन विशेष है।

हवेली स्थापत्य

राजस्थान में बड़े–बड़े सेठ साहूकारों तथा धनी व्यक्तियों ने अपने निवास के लिये विशाल हवेलियों का निर्माण करवाया। ये हवेलियाँ कई मंजिला होती थी। शेखावाटी, ढूँढाड़, मारवाड़ तथा मेवाड़ क्षेत्रों की हवेलियाँ स्थापत्य की दृष्टि से भिन्नता लिए हुये हैं। शेखावाटी क्षेत्र की हवेलियाँ अधिक भव्य एवं कलात्मक है। जयपुर, जैसलमेर, बीकानेर, तथा शेखावाटी के रामगढ़, नवलगढ़, फतहपुर, मुकुंदगढ़, मण्डावा, पिलानी, सरदार शहर, रतनगढ़ आदि कस्बों में खड़ी विशाल हवेलियाँ आज भी अपने स्थापत्य का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती हैं। राजस्थान की हवेलियाँ अपने छज्जों, बरामदों और झरोखें पर बारीक नक्काशी के लिए प्रसिद्ध हैं।

जैसलमेर की हवेलियाँ राजपूताना के आकर्षण का केन्द्र रही है। यहाँ की पटवों की हवेली अपनी शिल्पकला, विशालता एवं अद्भुत नक्काशी के कारण प्रसिद्ध है। यह सेठ गुमानचन्द बापना ने बनवाई थी। यह पाँच मंजिला हवेली शहर के मध्य स्थित है। इस हवेली के जाली–झरोखें बरबस ही पर्यटक को आकर्षित करते हैं। पटवों की हवेली के अतिरिक्त जैसलमेर, में स्थित सालिमसिंह की हवेली का शिल्प–सौन्दर्य भी बेजोड़ है। इस नौ खण्डी हवेली के प्रथम सात खण्ड पत्थर के और ऊपरी दो खण्ड लकड़ी के बने हुये थे। बाद में लकड़ी के दोनों खण्ड उतार लिये गये। जैसलमेर की नथमल की हवेली भी शिल्पकला की दृष्टि से अपना अनूठा स्थान रखती है। इस हवेली का शिल्पकारी का कार्य हाथी और लालू नामक दो भाइयों ने इस संकल्प के साथ शुरू किया था कि वे हवेली में प्रयुक्त शिल्प को दोहरायेंगे नहीं, इसी कारण इसका शिल्प अनूठा है।

बीकानेर की प्रसिद्ध 'बच्छावतों की हवेली' का निर्माण सोलहवीं सदी के उत्तरार्द्ध में कर्णसिंह बच्छावत ने करवाया था। इसके अतिरिक्त बीकानेर में मोहता, मूंदड़ा, रामपुरिया आदि की हवेलियाँ अपने शिल्प वैभव के कारण विख्यात है। बीकानेर की हवेलियाँ लाल पत्थर से निर्मित है। इन हवेलियों में ज्यॉमितीय शैली की नक्काशी है एवं आधार को तराश कर बेल–बूटे, फूल–पत्तियाँ आदि उकेरे गये हैं। इनकी सजावट में मुगल, किशनगढ़ एवं यूरोपीय चित्रशैली का प्रयोग किया गया है।

शेखावाटी की हवेलियाँ अपने भित्तिचित्रों के लिए विख्यात हैं। शेखावाटी की हवेलियाँ स्वर्णनगरी के रूप में विख्यात हैं। नवलगढ़ (झुंझुनूं) में सौ से ज्यादा हवेलियाँ अपनी शिल्प सौन्दर्य बिखेरे हुये हैं। यहाँ की हवेलियों में रूप निवास, भगत, जालान, पोद्दार और भगेरियाँ की हवेलियाँ प्रसिद्ध हैं। बिसाऊ (झुंझुनूं) में नाथूराम पोद्दार की हवेली, सेठ जयदयाल केठिया की तथा सीताराम सिंगतिया की हवेली प्रसिद्ध है। झुंझुनूं में टीबड़ेवाला की हवेली तथा ईसरदास मोदी की हवेली अपने शिल्प वैभव के कारण अलग ही छवि लिए हुए हैं। डूंडलोद (झुंझुनूं) में सेठ लालचन्द गोयनका, मुकुन्दगढ़ (झुंझुनूं) में सेठ राधाकृष्ण एवं केसरदेव कानेड़िया की हवेलियाँ, चिड़ावा (झुंझुनूं) में बागड़िया की हवेली, महनसर (झुंझुनूं) की सोने–चाँदी की हवेली, श्रीमाधोपुर (सीकर) में पंसारी की हवेली प्रसिद्ध है। झुंझुनूं जिले की ये ऊँची–ऊँची हवेलियाँ बलुआ पत्थर, ईंट, जिप्सम एवं चूना, काष्ठ तथा ढलवाँ धातु के समन्वय से निर्मित अपने अन्दर भित्ति चित्रों की छटा लिये हुए हैं।

सीकर में गौरीलाल बियाणी की हवेली, रामगढ़ (सीकर) में ताराचन्द रूइया की हवेली समकालीन भित्तिचित्रों के कारण प्रसिद्ध है। फतहपुर (सीकर) में नन्दलाल देवड़ा, कन्हैयालाल गोयनका की हवेलियाँ भी भित्तिचित्रों के कारण प्रसिद्ध है। चूरू की हवेलियों में मालजी का कमरा, रामनिवास गोयनका की हवेली, मंत्रियों की हवेली इत्यादि प्रसिद्ध है। खींचन (जोधपुर) में लाल पत्थरों की गोलेछा एवं टाटिया परिवारों की हवेलियाँ भी कलात्मक स्वरूप लिए हुए है।

जोधपुर में बड़े मियां की हवेली, पोकरण की हवेली, राखी हवेली, टोंक की सुनहरी कोठी, उदयपुर में बागौर की हवेली, जयपुर का हवामहल, नाटाणियों की हवेली, रत्नाकार पुण्डरीक की हवेली, पुरोहित प्रतापनारायण जी की हवेली इत्यादि हवेली स्थापत्य के विभिन्न रूप हैं।

राजस्थान में मध्यकाल के वैष्णव मंदिर भी हवेलियों जैसे ही बनाये गये हैं। इनमें नागौर का बंशीवाले का मंदिर, जोधपुर का रणछोड़जी का मंदिर, घनश्याम जी का मंदिर, जयपुर का कनक वृंदावन आदि प्रमुख हैं। देशी–विदशी पर्यटकों को लुभानें तथा राजस्थानी स्थापत्य कला को संरक्षण देने के लिए वर्तमान में अनेक हवेलियों का जीर्णोद्धार किया जा रहा है।

जल स्थापत्य

राजस्थान की पहचान मरुधरा के रूप में की जाती है। इसके बावजूद भी यहाँ जल स्थापत्य का विकास हुआ। कुँए, कुंड, बावडियाँ, टांके यहाँ के जल स्थापत्य की पहचान है। इनका इतिहास और सौन्दर्य अनूठा है। जल की महत्ता तो विश्वभर में स्वीकार की जाती है परन्तु यहाँ रेगिस्तानी प्रदेश होने के कारण प्यासे को पानी पिलाना पुण्य का कार्य माना जाता है।

कुआँ राजस्थान में उपयोगी जलस्त्रोत है। इसके निर्माण में तकनीकी जटिलताएँ नहीं होती है। शेखावाटी के रेतीले क्षेत्र में इन कुँओं को खूब सजाया जाता है तथा बहुरंगी चित्रकारी की जाती है। कुआँ खुदवाने में समाज के मध्यम वर्ग का सहयोग रहा है। बांदीकुई का नाम किसी बांदी अर्थात् दासी द्वारा बनवाये कुएँ के नाम पर पड़ा है। बाड़मेर जिले में बाटाडू गाँव में आधुनिक पाषाण कला से निर्मित संगमरमर का कुआँ दर्शनीय है।

टांके जल स्थापत्य के महत्वपूर्ण कारक है। इनका स्त्रोत बरसाती पानी होता है। टांके (होज) पक्के होते थे, इनमें बारिश का पानी नहरों के माध्यम से इकट्ठा कर लिया जाता था। टांके निजी और सार्वजनिक दोनों प्रकार के होते थे। टांकों के अच्छे उदाहरण किलों में मिलते हैं, जिनमें जयपुर का जयगढ़ किला प्रमुख है। ये टांके मध्यकालीन सिविल इंजिनियरिंग के अच्छे प्रमाण हैं।

राजस्थान के जन–जीवन में **बावड़ियों** का बहुत महत्व रहा है। इनके निर्माण कार्य में उपयोगिता के साथ–साथ सौन्दर्य का भी ध्यान रखा जाता था। इस कारण इनके निर्माण में व्यय भी अधिक होता था। राजपरिवार के सदस्य मुख्यतः रानियाँ, राजमाताएँ, श्रेष्ठी वर्ग इत्यादि इन्हें बनाने में धन खर्च करते थे। इनके निर्माण संबंधी सूचनाएँ भी शिलालेखों पर खुदवाई जाती थी, जिनसे निर्माताओं और कारीगरों की जानकारी मिलती है। टोंक के पास नगर के अवशेषों से मिले एक लेख में बावड़ी निर्माण में भीनमाल के कुशल शिल्पियों का उल्लेख हुआ है।

दौसा जिले में बांदीकुई के निकट बनी आभानेरी की चांद बावड़ी संभवतया प्रदेश की सबसे कलात्मक बावड़ी है। मूर्तियों से सजी आभानेरी की इस बावड़ी के निर्माता का नाम अज्ञात है, किंतु लोक प्रचलित है कि किसी चांद नामक राजा ने इसे बनवाया था। जोधपुर महाराजा गजसिंह की मुस्लिम पासवान अनारा बेगम ने जोधपुर में एक बावड़ी बनवाई था, जो आज भी विद्यमान है। मेवाड़ महाराणा राजसिंह (1652–1680) की पत्नी रानी रामरसदे ने उदयपुर में त्रिमुखी बावड़ी का निर्माण करवाया था। इस बावड़ी में लगी प्रशस्ति में बप्पा रावल से लेकर राजसिंह तक के मेवाड़ के शासकों की वंशावली तथा कुछ ऐतिहासिक घटनाएँ दी

गई है। डूँगरपुर के पास स्थित प्रसिद्ध नौलखा बावड़ी का निर्माण महारावल आसकरण की पत्नी प्रीमल देवी ने करवाया था। बूँदी में स्थित रानीजी की बावड़ी उपयोगिता के साथ ही कला की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। इसमें सुन्दर चित्र बने हुये हैं तथा देवी देवताओं की मूर्तियाँ लगी हुई है। इस बावड़ी का निर्माण बूँदी के शासक अनिरूद्ध सिंह की पत्नी नाथावत ने 1699 में करवाया था। मेवाड़ महाराणा रायमल की पत्नी शृंगारदेवी ने घोसुण्डी नामक गाँव (चित्तौड़) में एक बावड़ी बनवाई थी, जो कारीगरी का श्रेष्ठ नमूना है।

मूर्तिशिल्प

राजस्थान में मूर्तिशिल्प का इतिहास आज से लगभग 4500 वर्ष पुराना है। कालीबंगा से प्राप्त **हड़प्पाकालीन सांस्कृतिक पुरासामग्री** में मिट्टी तथा धातु की लघु मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। कालान्तर में दूसरी शताब्दी ई॰पू॰ से कई **शुंगकालीन मूर्तियाँ** नगर (टोंक) एवं रैढ़ (टोंक) से मिली हैं, जो लाल मिट्टी की पकाई हुई हैं। नोह (भरतपुर) से प्राप्त इस युग की यक्ष–यक्षी की मूर्तियाँ उल्लेखनीय हैं। **ब्रजमण्डल** के सांस्कृतिक प्रभाव क्षेत्र में होने के कारण प्रारम्भिक मूर्तिकला के उद्भव व विकास में पूर्वी राजस्थान (भरतपुर क्षेत्र) ने विशिष्ट भूमिका निभायी। नोह में जाखबाबा की विशालकाय प्रतिमा शुंगकालीन कला का प्रतिनिधित्व करती है तथा यह चतुर्मुख प्रतिमा राजस्थान की भारतीय मूर्ति विज्ञान को अनुपम देन है। इस युग की यक्ष–यक्षी की मूर्तियाँ भरतपुर संग्रहालय में सुरक्षित हैं।

प्राचीन काल के शैव मूर्तिशिल्प में भी राजस्थान की अनुपम देन है। इस दृष्टि से भरतपुर क्षेत्र की विशेष भूमिका रही है। इस क्षेत्र के चौमा, भंडपुरा, गामड़ी आदि स्थानों से शुंग–कुषाणकालीन शिवलिंग मिले हैं। रंगमहल (हनुमानगढ़) से प्राप्त एकमुखी शिवलिंग की बहुचर्चित मृण्मूर्ति में शिवलिंग के मुख भाग में जटामुकुटधारी शिव को मानवाकृति प्रदान की गई हैं। यह मूर्ति वर्तमान में बीकानेर संग्रहालय में प्रदर्शित है।

बैराठ (जयपुर) प्राचीन काल में राजस्थान में बौद्ध धर्म का सांस्कृतिक केन्द्र रहा है। यहाँ से प्राप्त मौर्यकालीन बौद्ध अवशेषों से बौद्ध मंदिर, मठ आदि के होने के प्रमाण मिले हैं। भरतपुर क्षेत्र से अनेक रोचक कुषाणकालीन (प्रथम शताब्दी ई0 के आस–पास) बौद्ध मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। यहीं से कुछ बोधिसत्व मूर्तियाँ भी मिली हैं। बोधिसत्व महात्मा बुद्ध के जीवन की वह अवस्था है, जब वे बुद्धत्व प्राप्त करने के मार्ग में अग्रसर हो रहे थे। बुद्ध की प्रतिमा सदैव ही करूणा, प्रेम और सौहार्द की प्रतीक मानी गई हैं। भरतपुर संग्रहालय में भगवान बुद्ध का कपर्द रूप में मंडित केश (महात्मा बुद्ध ने ज्ञान प्राप्ति के पश्चात् केश तक मुंडित करा लिए और केवल बालों की एक लट सिर पर रहने दी, इस आशय की मूर्ति को कपर्द की संज्ञा मिली) वाला बुद्ध शीर्ष भरतपुर संग्रहालय में उपलब्ध हैं, जो **कुषाणकालीन कला** का उल्लेखनीय उदाहरण हैं।

इस प्रकार राजस्थान में **गुप्तकाल** से पूर्व मूर्तिकला का विकास हो चुका था। परन्तु गुप्तकाल में लगभग सम्पूर्ण भारत में मूर्तिकला का जो विकसित रूप देखने को मिलता है, वैसा इससे पहले देखने को नहीं मिला। गुप्तकाल की मूर्तियों में मौलिकता है।

इस युग की देव मूर्तियाँ गान्धार कला से मुक्त हैं और उन पर आध्यात्मिक एवं अलौकिक भावों की अभिव्यक्ति है। उनकी मुखाकृति सौम्य है, भाव–भंगिमा में जीवन्तता है, केश रचना में विविधता है तथा मूर्तियों के पीछे कलात्मक प्रभामण्डल दर्शाया गया है। देव परिवार का आशातीत रूप से विस्तार गुप्त युग में देखने को मिलता है। यद्यपि राजस्थान सीधे रूप से गुप्त साम्राज्य का अंग नहीं था, परन्तु कला के क्षेत्र में हो रहे मौलिक परिवर्तनों तथा प्रयोगों का यहाँ प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। राजस्थान में इस युग के बचे हुए मन्दिरों में हाड़ौती क्षेत्र का मुकन्दरा तथा चारचौमा का शिव मन्दिर उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त नगरी (चित्तौड़), गंगधार (झालावाड़), मंडोर (जोधपुर) में भव्य देवालय थे, जिनकी मूर्तियाँ अतीत के

वैभव को रेखांकित करती हैं। इटालियन विद्वान टेसीटोरी ने बीकानेर के इर्द–गिर्द गुप्तकलीन मृण्मूर्तियों की अमूल्य धरोहर की खोज की, वे प्रारम्भिक गुप्तकालीन मूर्तिकला की साक्ष्य हैं। वर्तमान में ये बीकानेर संग्रहालय की धरोहर हैं। ये मृण्मूर्तियाँ पौराणिक देवी–देवताओं के साथ ही, जनजीवन की अनेक झांकियाँ प्रस्तुत करती हैं।

गुप्तकाल की शैव धर्म से सम्बन्धित राजस्थान की शैव मूर्तियाँ भी कम रोचक नहीं हैं। रंगमहल से प्राप्त एकमुखी शिवलिंग तथा उमा माहेश्वर की मृण्मूर्तियाँ विशेषतः उल्लेखनीय हैं। लिंग के मुख भाग में त्रिनेत्र एवं जटामुकुटधारी शिव की आकृति प्रदर्शित कर कुशल शिल्पकार ने लिंग तथा पुरुष विग्रह का एक साथ ही सुन्दर समावेश किया है।

प्रस्तर निर्मित अनेक महत्वपूर्ण गुप्तकालीन मूर्तियाँ राजस्थान से प्राप्त हुई हैं। ये सभी विष्णु की हैं तथा विशालकाय हैं। रूपावास (भरतपुर) की चक्रधर द्विभुजी विष्णु तथा सर्पफणा बलराम की विशालकाय प्रतिमाएँ गुप्तकाल की प्रस्तर निर्मित कला की श्रेष्ठताओं से युक्त है। इसके अतिरिक्त भीनमाल (जालौर), हेमावास (पाली) से प्राप्त विष्णु प्रतिमाएँ दर्शनीय हैं।

राजस्थान में गुप्तकाल से पूर्व की जैन प्रतिमाएँ नहीं मिली हैं। इस दृष्टि से भरतपुर संग्रहालय में प्रदर्शित तथा जमीना से प्राप्त तीर्थंकर आदिनाथ एवं नेमिनाथ की मूर्तियाँ विशेष महत्व की हैं। इन पर गुप्तकालीन कला परम्परा की स्पष्ट छाप है।

गुप्तोत्तर एवं पूर्व मध्यकाल में राजस्थान की मूर्तिकला ने परिपक्वता प्राप्त कर ली थी। देवी–देवताओं आदि की मूर्तियों का आधार गुप्तकालीन माधुर्य तथा कोमलता तो बनी रहीं, परन्तु उनमें शक्ति, शौर्य और भावुकता का सम्पुट जोड़ा गया। इस युग में देवी–देवताओं में विश्वास बढ़ने से उनका कई रूपों में अंकन किया गया। राजस्थान की इस युग की मूर्तियों में अलंकरण की प्रधानता, आकृतियों की बहुलता, देवरूपों की विविधता आदि देखने को मिलती हैं।

गुप्तोत्तर काल में कूसमा (सिरोही) तथा झालरापाटन (झालावाड़) में चन्द्रभागा के तट पर शिव मन्दिर निर्मित हुए, जो आज भी विद्यमान है। चन्द्रभागा का शीतलेश्वर महादेव का मन्दिर राजस्थान का प्राचीनतम तिथियुक्त (689 ई.) मंदिर है। इस युग की मेवाड़ (उदयपुर) तथा वागड़ (डूंगरपुर–बाँसवाड़ा) में अनेक शिव मूर्तियाँ उपलब्ध हैं। ये मूर्तियाँ प्रायः पत्थर की हैं। देव मूर्तियाँ अलंकृत प्रभामण्डल और चौकी सहित हैं। डूँगरपुर संग्रहालय में इनका समृद्ध संग्रह हैं। इस क्षेत्र के तनेसर से प्राप्त मूर्तियाँ राष्ट्रीय संग्रहालय (नई दिल्ली) तथा अमेरिका के संग्रहालयों तक में पहुँच चुकी हैं।

पूर्व मध्यकाल (8वीं से 13वीं शताब्दी) में मूर्तिकला अपने विकास की क्रमिक यात्रा करते हुए चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुई। इस युग में पूरे राजपूताना में मन्दिरों का जाल बिछा। राजपूताना में आज भी इस युग की कीर्ति का बखान करने वाले अनेक मन्दिर इसके प्रमाण हैं। इस युग की विरासत में मिली कला पराम्पराओं ने आवश्यकतानुसार परिवर्तन एवं विकास ही नहीं किया, वरन् देवी–देवताओं के विभिन्न स्वरूपों की शास्त्रानुसार परिकल्पना कर उन्हें मूर्तियों के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान की। मंदिर के बाह्य तथा आंतरिक सम्भाग देव मूर्तियों से ही नहीं, वरन् पौराणिक आख्यानों, सुर–सुन्दरियों, प्रणयलीन मूर्तियों तथा जन–जीवन की झांकी से परिपूर्ण हैं। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि इस काल की मूर्तियाँ पूर्ववर्ती प्रतिमाओं की अनुकृति मात्र नहीं हैं, वरन् अपने युग की धार्मिक चेतना एवं भाव–भूमि की वास्तविक प्रतिबिम्ब है। इस युग की धातु मूर्तियों ने मूर्तिकला को नये आयाम प्रदान कर कला का इतिहास रच दिया।

मारवाड़ में ओसियां, बाड़मेर में किराड़ू, नागौर में गोठ–मांगलोद, सीकर में हर्षनाथ, कोटा में कंसुआ, बांसवाड़ा में अर्थूणा, डूंगरपुर में देव सोमनाथ, झालवाड़ में झालरापाटन,

आबू पर्वत में देलवाड़ा, पाली में केकीन्द, भीलवाड़ा में बिजौलिया एवं मेनाल आदि ऐसे स्थल हैं, जहाँ के प्रसिद्ध मंदिरों में ऐतिहासिक, भव्य एवं कलात्मक मूर्तियाँ हैं। ये मन्दिर मूर्तिकला की खान हैं।

धार्मिक समभाव तथा सौहार्द राजस्थान की मध्ययुगीन कला का प्रमुख स्वर है। विभिन्न सम्प्रदायों के मध्य समन्वय यहाँ की विशिष्टता है। मन्दिर और मूर्तिकला इसके साक्ष्य हैं। ओसियां में वैष्णव, शैव, देवी तथा जैन मन्दिर साथ–साथ हैं। वैष्णव तथा शैव सम्प्रदायों की उदारता तथा सहिष्णुता के परिणामस्वरूप विष्णु तथा शिव के संयुक्त रूप हरिहर लोकप्रिय बने। शिव अपनी शक्ति से संपृक्त हो अर्द्धनारीश्वर बन गये। सूर्य तथा विष्णु का सयुक्त रूप सूर्यनारायण के रूप में अवतरित हुआ। धार्मिक सम्भाव के फलस्वरूप ही ब्रह्मा, विष्णु और महेश को समान धरातल पर कल्पित किया तथा उनमें कोई छोटा अथवा बड़ा नहीं है। लोद्रवा (जैसलमेर), बाड़ौली (चित्तौड़), झालरापाटन (झालावाड़) तथा कटारा (भरतपुर) में त्रिदेवों का अंकन हुआ है। ये मध्यकालीन मूर्तिकला की अनुपम निधियाँ हैं।

पूर्व मध्यकाल में गुर्जर–प्रतिहार शासक सभी धर्मों के प्रति उदार थे। स्वयं वैष्णव धर्मावलम्बी थे, किन्तु उन्होंने जैन धर्म को प्रश्रय दे रखा था। यही कारण रहा कि इस युग में जैन धर्म फला–फूला। अनेक सुन्दर जैन मन्दिरों का निर्माण तथा तीर्थंकरों की मूर्तियों का बहुतायत में मिलना इसका प्रमाण है। नाडोल (पाली), ओसियां (जोधपुर), देलवाड़ा (सिरोही), रणकपुर (पाली), झालरापाटन (झालावाड़), केशवरायपाठन (बूँदी), लाडनूं (नागौर), पल्लू (गंगानगर) आदि स्थलों में जैन देव प्रतिमाएं स्थापित हैं। ओसियां के सच्चिया माता मन्दिर के प्रांगण में स्थित प्रतिहारकालीन सूर्य मंदिर में जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ का अंकन धार्मिक सहिष्णुता का परिचायक है। देलवाड़ा के विमलवसही तथा लूणवसही मन्दिरों में कृष्णलीला का अंकन इसी भावना का सूचक है। इसी प्रकार हिन्दू प्रतिमाओं में सरस्वती का जो महत्व हैं, वही वाग्देवी सरस्वती का जैन सम्प्रदाय में है। पल्लू, लाडनूं, नाडोल तथा अर्थूणा की जैन सरस्वती प्रतिमाएँ राजस्थान की मध्यकालीन कला की उत्कृष्ट कृतियाँ हैं।

राजस्थान में 15 वीं शताब्दी से **सांस्कृतिक पुनरुत्थान** के युग की शुरुआत मानी जा सकती है। मेवाड़ में महाराणा कुम्भा का उदय सांस्कृतिक इतिहास की बड़ी घटना है। कुम्भा ने कुम्भलगढ़, चित्तौड़गढ़ और अचलगढ़ में कुम्भस्वामी नामक विष्णु मन्दिर बनवाये। कुम्भा द्वारा चित्तौड़गढ़ में निर्मित नौ मंजिला प्रसिद्ध कीर्तिस्तम्भ (जिसे विजय स्तम्भ के रूप में अधिक जाना जाता है) को भारतीय मूर्तिकला का शब्दकोश कहा जाता है। इतिहासकार गोपीनाथ शर्मा ने ठीक ही लिखा है, "जीवन के व्यावहासिक पक्ष को व्यक्त करने वाला यह स्तम्भ लोक जीवन का रंगमंच हैं।"

16 वीं–17वीं शताब्दियों में राजपूत एवं मुगलों के मध्य जिस मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध का श्रीगणेश हुआ, उसने मंदिर व उसकी मूर्तिकला को प्रभावित किया। अकबर के शासन काल में आमेर नरेश महाराजा मानसिंह ने वृंदावन (मथुरा) में गोविन्ददेव जी का मन्दिर बनवाया, जो मुगल साम्राज्य में बना सर्वोत्कृष्ट और भव्य देवालय है। उसकी रानी कंकावती ने अपने दिवंगत पुत्र जगतसिंह की पुण्य स्मृति में आमेर में जगतशिरोमणि का भव्य वैष्णव मन्दिर बनवाया। मानसिंह ने बंगाल से पालयुगीन शिलादेवी की मूर्ति लाकर आमेर में प्रतिष्ठित करवाई। उदयपुर में 17वीं शताब्दी का निर्मित जगदीश मन्दिर एक अन्य महत्वपूर्ण वैष्णव मन्दिर है। जगदीश मन्दिर की मुख्य प्रतिमा भगवान जगदीश की काले पत्थर से निर्मित 5 फीट ऊँची प्रतिमा है, जिसके चारों हाथों में शंख, चक्र, गदा और पदम् सुप्रतिष्ठित है। इस मंदिर के गर्भग्रह के सामने गरूड़ की विशाल प्रतिमा है। लगभग इसी काल की वल्लभ सम्प्रदाय से सम्बन्धित मूर्तियाँ नाथद्वारा में श्रीनाथ जी, कांकरोली में द्वारिकाधीश, कोटा में मथुरेश जी, जयपुर में गोविन्द देव जी तथा बीकानेर में रत्नबिहारी की हैं।

इस प्रकार राजस्थान में मूर्तिकला की एक समृद्ध परम्परा रही। राजनीतिक उतार–चढ़ाव के बावजूद भी राजस्थान में मन्दिर निर्माण होता रहा और उनमें मूर्तियाँ

स्थापित होती रहीं। मध्यकालीन मूर्तियों में जीवन्तता, सौन्दर्य, अलंकारिता, कलात्मकता, गतिशीलता एवं समन्वयवादिता के दिग्दर्शन होते हैं।

राजस्थानी चित्रशैलियाँ

राजस्थानी चित्रशैली का पहला वैज्ञानिक विभाजन आनन्द कुमार स्वामी ने किया था। उन्होंने 1916 में 'राजपूत पेंटिंग' नामक पुस्तक लिखी। उन्होंने राजपूत पेंटिंग में पहाड़ी चित्रशैली को भी शामिल किया। परन्तु अब व्यवहार में राजपूत शैली के अन्तर्गत केवल राजस्थान की चित्रकला को ही स्वीकार करते हैं। वस्तुतः राजस्थानी चित्रकला से तात्पर्य उस चित्रकला से है, जो इस प्रान्त की धरोहर है और पूर्व में राजपूताना में प्रचलित थी।

राजस्थान चित्रशैली का क्षेत्र अत्यन्त समृद्ध है। उसकी समृद्धि के अनेक केन्द्र हैं। यह राजस्थान के व्यापक भू–भाग में फैली हुई है। राजस्थानी चित्रकला की जन्मभूमि मेदपाट (मेवाड़) है, जिसने अजन्ता चित्रण परम्परा को आगे बढ़ाया। राजस्थानी चित्रकला की प्रारम्भिक परम्परा के अनेक सचित्र ग्रंथ, लघु चित्र एवं भित्ति चित्र उपलब्ध होते हैं, जो उसके उद्भव को रेखांकित करने में सहायक हैं।

राजस्थानी चित्रकला पर प्रारम्भ में जैन शैली, गुजरात शैली और अपभ्रंश शैली का प्रभाव बना रहा, किन्तु बाद में राजस्थान की चित्रशैली मुगल काल से समन्वय स्थापित कर परिमार्जित होने लगी। सत्रहवीं शताब्दी से मुगल साम्राज्य के प्रसार और राजपूतों के साथ बढ़ते राजनीतिक और वैवाहिक सम्बन्धों के फलस्वरूप राजपूत चित्रकला पर मुगल शैली का प्रभाव बढ़ने लगा। कतिपय विद्वान 17वीं शताब्दी और 18वीं शताब्दी के प्रारम्भिक काल को राजस्थानी चित्रकला का स्वर्णयुग मानते हैं। आगे चलकर अंग्रेजों के बढ़ते राजनीतिक प्रभाव एवं लड़खड़ाती आर्थिक दशा से राजस्थानी चित्रकला को आघात लगा। फिर भी, कला किसी न किसी रूप में जीवित रही।

राजस्थानी चित्रशैलियों का वर्गीकरण

भौगोलिक एवं सांस्कृतिक आधार पर राजस्थानी चित्रकला को हम चार शैलियों (स्कूल) में विभक्त कर सकते हैं, एक शैली में एक से अधिक उपशैलियाँ हैं – जैसा कि आगे दर्शाया गया है –

(1) **मेवाड़ शैली –** चावंड, उदयपुर, नाथद्वारा, देवगढ़ आदि।

(2) **मारवाड़ शैली –** जोधपुर, बीकानेर, किशनगढ़ आदि।

(3) **हाड़ौती शैली –** बूँदी, कोटा आदि।

(4) **ढूँढाड़ शैली –** आम्बेर, जयपुर, अलवर, उणियारा, शेखावटी आदि।

विभिन्न शैलियों एवं उपशैलियों में परिपोषित राजस्थानी चित्रकला निश्चय ही भारतीय चित्रकला में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। अन्य शैलियों से प्रभावित होने के उपरान्त भी राजस्थानी चित्रकला मौलिक है।

विशेषताऐं

(1) लोक जीवन का सान्निध्य, भाव प्रवणता का प्राचुर्य, विषय–वस्तु का वैविध्य, वर्ण वैविध्य, प्रकृति परिवेश देश काल के अनुरूप आदि विशेषताओं के आधार पर इसकी अपनी पहचान है।

(2) धार्मिक और सांस्कृतिक स्थलों में पोषित चित्रकला में लोक जीवन की भावनाओं का बाहुल्य, भक्ति और श्रृंगार का सजीव चित्रण तथा चटकीले, चमकदार और दीप्तियुक्त रंगों का संयोजन विशेष रूप से देखा जा सकता है।

(3) राजस्थान की चित्रकला यहाँ के महलों, किलों, मंदिरों और हवेलियों में अधिक दिखाई देती है।

(4) राजस्थानी चित्रकारों ने विभिन्न ऋतुओं का श्रृंगारिक

चित्रण कर उनका मानव जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का अंकन किया है।

(5) मुगल काल से प्रभावित राजस्थानी चित्रकला में राजकीय तड़क–भड़क, विलासिता, अन्तःपुर के दृश्य एवं पतले वस्त्रों का प्रदर्शन विशेष रूप से देखने को मिलता है।

(6) चित्र संयोजन में समग्रता के दर्शन होते हैं। चित्र में अंकित सभी वस्तुएँ विषय से सम्बन्धित रहती हैं और उसका अनिवार्य महत्त्व रहता है। इस प्रकार इन चित्रों में विषय–वस्तु एवं वातावरण का सन्तुलन बना रहता है। मुख्य आकृति एवं पृष्ठभूमि की समान महत्ता रहती है।

(7) राजस्थानी चित्रकला में प्रकृति का मानवीकरण देखने को मिलता है। कलाकारों ने प्रकृति को जड़ न मानकर मानवीय सुख–दुःख से रागात्मक सम्बन्ध रखने वाली चेतन सत्ता माना है। चित्र में जो भाव नायक के मन में रहता है, उसी के अनुरूप प्रकृति को भी प्रतिबिम्बित किया गया है।

(8) मध्यकालीन राजस्थानी चित्रकला का कलेवर प्राकृतिक सौन्दर्य के आँचल में रहने के कारण अधिक मनोरम हो गया है।

(9) मुगल दरबार की अपेक्षा राजस्थान के चित्रकारों को अधिक स्वतन्त्रता थी। यही कारण था कि राजस्थानी चित्रकला में आम जन जीवन तथा लोक विश्वासों को अधिक अभिव्यक्ति मिली।

(10) नारी सौन्दर्य को चित्रित करने में राजस्थानी चित्रशैली के कलाकारों ने विशेष सजगता दिखाई है।

मेवाड़ शैली

राजस्थानी चित्रशैली में मेवाड़ शैली के अन्तर्गत पोथी ग्रंथों का अधिक चित्रण हुआ है। प्रारम्भिक चित्रित नमूनों में श्रावकप्रतिक्रमणसूत्रचूर्णी, सुपार्श्वनाथचरितम् हैं। महाराणा कुम्भा के समय कला की उल्लेखनीय प्रगति हुई। महाराणा प्रताप के समय छप्पन की पहाड़ियों में स्थित राजधानी चावण्ड में भी चित्रकला का विकास हुआ। इस काल की प्रसिद्ध कृति ढोलामारू (1592 ई.) है, जो राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली में सुरक्षित है। महाराणा अमरसिंह के समय का 1605 ई. में चित्रित 'रागमाला' मेवाड़ शैली का प्रमुख ग्रंथ है। इन चित्रों को निसारदीन नामक चित्रकार ने चित्रित किया। इन चित्रों में भारत की पन्द्रहवीं शताब्दी तक विकसित होने वाली पश्चिमी चित्रांकन शैली के अवशेषों के दर्शन होते हैं। चित्रकला की दृष्टि से महाराणा जगतसिंह प्रथम का काल स्वर्णयुग कहलाता है। इस समय साहबदीन कलाकार ने महाराणाओं के व्यक्ति चित्र बनाये। सत्रहवीं शताब्दी के अन्त तक मेवाड़ शैली में बड़ा निखार आया। जगतसिंह प्रथम के समय राजमहल में 'चितेरों की ओवरी' नाम से कला विद्यालय स्थापित किया गया। इसे 'तस्वीरां रो कारखानों' नाम से भी पुकारा जाता था। मेवाड़ शैली राजस्थानी चित्रकला की मूल शैली रही है मेवाड़ शैली में शिकार के दृश्यों में त्रिआयामी प्रभाव दर्शाया गया है।

नाथद्वारा शैली में श्रीनाथजी आकर्षण के प्रमुख केन्द्र हैं। अतः यहाँ श्रीनाथजी की विभिन्न झांकियों के चित्र विशेष रूप से बनाये गये हैं। श्रीनाथजी को यहाँ श्रीकृष्ण का प्रतीक मानकर पूजा की जाती है। इसी कारण विविध कृष्ण लीलाओं को चित्रों में अंकित करने की प्रथा यहाँ प्रचलित हुई है। मेवाड़ के अन्तर्गत नाथद्वारा में पुष्टिमार्गीय सम्प्रदाय की भारत प्रसिद्ध प्रमुख पीठ है, जो श्रीनाथजी की भक्ति का प्रमुख केन्द्र होने के कारण मेवाड़ की चित्र परम्परा में नया इतिहास जोड़ता है। श्रीनाथजी के स्वरूप के पीछे बड़े आकार के कपड़े पर जो पर्दे बनाये जाते हैं, उन्हें पिछवाई कहते हैं, जो नाथद्वारा शैली की मौलिक देन है। वर्तमान में इस शैली में श्रीनाथ जी के प्राकट्य एवं लीलाओं से सम्बन्धित असंख्य चित्र व्यावसायिक दृष्टि से कागज और कपड़े पर बनने लगे हैं। इस शैली की पृष्ठभूमि में सघन वनस्पति दर्शायी गयी है, जिसमें केले के वृक्ष की

प्रधानता है। अठारहवीं शताब्दी में बने नाथद्वारा शैली के चित्रों में अधिक कलात्मकता है, परन्तु बाद के चित्रों में व्यावसायिकता का अधिक पुट आ गया है।

जब महाराणा जयसिंह के राज्यकाल में रावत द्वारिका दास चूँडावत ने देवगढ़ ठिकाना 1680 ई. में स्थापित किया, तदुपरान्त, **देवगढ़ शैली** का जन्म हुआ। यहाँ के रावत 'सौलहवें उमराव' कहलाते थे, जिन्हें प्रारम्भ से ही चित्रकला में गहरी अभिरुचि थी। इस शैली में शिकार, हाथियों की लड़ाई, राजदरबार का दृश्य, कृष्ण–लीला आदि के चित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इस शैली के भित्ति चित्र 'अजारा की ओबरी' 'मोती महल', आदि में देखने को मिलते हैं। इस शैली को मारवाड़, ढूँढाड़ एवं मेवाड़ की समन्वित शैली के रूप में देखा जाता है। इस शैली में हरे, पीले रंगों का प्रयोग अधिक हुआ है।

मारवाड़ शैली

मारवाड़ शैली के विषय मूलरूप में अन्य शैलियों से भिन्न हैं। यहाँ मारवाड़ी साहित्य के प्रेमाख्यान पर आधारित चित्रण अधिक हुआ है। ढोलामारू रा दूहा, वेलि क्रिसन रूक्मिणी री, वीरमदे सोनगरा री बात, चन्द्रकुँवर री बात, मृगावती रास, फूलमती री वार्ता, हंसराज बच्छराज चौपाई आदि साहित्यिक कृतियों के चरित्र मारवाड़ चित्रकला के आधार रहे हैं। इस चित्र शैली में प्रेमाख्यानों के नायक–नायिकाओं के भाव–भंगिमाओं का सुन्दर चित्रण हुआ है। बारहमासा चित्रण तत्कालीन सांस्कृतिक परिवेश में नायक–नायिका के मनोभावों का सफल उद्घाटन करते हैं। मारवाड़ शैली में लाल, पीले रंग का बाहुल्य है। हाशिये में भी पीले रंग का प्रयोग किया गया है। वीरजी चित्रकार द्वारा 1623 ई. में निर्मित 'रागमाला चित्रावली' का ऐतिहासिक महत्त्व है। जोधपुर शैली में एक मोड़ महाराजा जसवन्तसिंह के समय में आया। कृष्ण चरित्र की विविधता और मुगल शैली का प्रभाव इस समय के चित्रों में दृष्टव्य है। उन्नीसवीं शताब्दी में मारवाड़ नाथ सम्प्रदाय से प्रभावित रहा। अतः राजा मानसिंह के समय चित्रकला मठों में परिपोषित हुई।

मारवाड़ शैली के अन्तर्गत **बीकानेर शैली** का प्रादुर्भाव सोलहवीं शताब्दी के अन्त से माना जाता है। बीकानेर शैली के उद्भव का श्रेय यहाँ के उस्ताओं को दिया जाता है। निरन्तर अभ्यास व कला–कौशल के कारण इन मुस्लिम कलाकारों को उस्ताद कहकर सम्बोधित किया जाता था। कालान्तर में इन उस्तादों को उस्ता कहा जाने लगा। इन्होंने 'उस्ता कला' को जन्म दिया। ऊँट की खाल पर सोने का चित्रण 'उस्ता कला' कहलाती है। यह बीकानेर कला की एक अनौखी विशेषता है। अकबर ने स्वयं अपने दरबार में इन उस्ता कलाकारों को सम्मानजनक स्थान प्रदान किया। महाराजा अनूपसिंह के काल में विशुद्ध बीकानेर शैली के दिग्दर्शन होते हैं। इस काल में रसिक प्रिया, बारहमासा, भागवत पुराण से सम्बन्धित चित्र तैयार हुए। बीकानेर शैली में मुगल शैली एवं दक्कन शैली का समन्वय है।

राजस्थानी चित्रकला में **किशनगढ़ शैली** का विशिष्ट स्थान है। इस शैली पर वल्लभ सम्प्रदाय का अत्यधिक प्रभाव है। सावन्तसिंह उर्फ नागरीदास के शासनकाल से इस शैली को स्वतन्त्र स्वरूप प्राप्त हुआ। नागरीदास के काव्य प्रेम, गायन, बणी ठणी के संगीत प्रेम और कलाकार मोरध्वज निहालचंद के चित्रांकन ने किशनगढ़ की कला को सर्वोच्च स्थान प्रदान किया। इस शैली का प्रमुख चित्र बणी –ठणी हैं। नारी सौन्दर्य इस शैली की प्रमुख विशेषता है। राधा– कृष्ण की प्रेम लीला इस शैली का लक्षण है। काम और आध्यात्मिक प्रेम ने किशनगढ़ शैली की चित्रकला को जीवनदान दिया।

हाड़ौती शैली

हाड़ौती शैली के अन्तर्गत **बूँदी शैली** में पशु–पक्षियों के चित्रण की बहुलता है। यहाँ के शासक राव छत्रसाल ने प्रसिद्ध रंगमहल बनवाया, जो सुन्दर भितिचित्रों से सुसज्जित है। समय–समय पर बूँदी शैली में ग्रंथ चित्रण एवं लघु चित्रों के माध्यम से इतना चित्रण हुआ कि आज संसार भर के संग्रहालयों में बूँदी शैली के चित्रों की उपस्थिति है। यहाँ के

शासक भावसिंह की कलाप्रियता ने संगीत, काव्य और चित्रकला को उत्कृष्टता प्रदान की। सत्रहवीं सदी में बूँदी में उत्कृष्ट चित्र बने। बूँदी शैली के अन्तर्गत राव उम्मेदसिंह का जंगली सूअर का शिकार करते हुए बनाया चित्र (1750 ई.) प्रसिद्ध है। राजा उम्मेदसिंह के काल में बूँदी शैली में मोड़ आया, जिसमें भावनाओं की सहजता एवं प्रकृति की विविधता है। पशु–पक्षियों, सतरंगे बादलों तथा जलाशयों का इसमें चित्रण बहुलता से हुआ। बूँदी शैली मेवाड़ शैली से प्रभावित रही है। राग रागिनी, नायिका भेद, ऋतु वर्णन, बारहमासा, कृष्णलीला दरबार, शिकार, हाथियों की लड़ाई, उत्सव अंकन आदि बूँदी शैली के चित्राधार रहे हैं।

कोटा शैली में स्त्री आकृतियों का चित्रण अत्यन्त सुन्दर हुआ है। बूँदी कलम की ही शाखा कोटा शैली का स्वतन्त्र अस्तित्व स्थापित करने का श्रेय राजा रामसिंह को है। रामसिंह के पश्चात् महारावल भीमसिंह ने कोटा राज्य में कृष्ण भक्ति को विशेष महत्त्व दिया, जिसके फलस्वरूप कोटा की चित्रकला में वल्लभ सम्प्रदाय का पूर्ण प्रभाव अंकित हुआ। कोटा शैली में राजा उम्मेदसिंह के शासनकाल में एक मोड़ आया। उनके शिकार प्रेम के कारण कोटा शैली में इस समय शिकार का बहुरंगी वैविध्यपूर्ण चित्रण हुआ, जो कोटा शैली का प्रतीक बन गया। 1768 ई. में डालू नाम के चित्रकार द्वारा चित्रित रागमाला सैट कोटा कलम का सर्वाधिक बड़ा रागमाला सैट है।

ढूँढाड़ शैली

ढूँढाड़ शैली में मुगल प्रभाव सर्वाधिक है। रज्मनामा (महाभारत का फारसी अनुवाद) की प्रति अकबर के लिए इसी शैली के चित्रकारों ने तैयार की थी। इसमें 169 बड़े आकार के चित्र हैं। आमेर शैली के प्रारम्भिक चित्रित ग्रंथों में यशोधरा चरित्र है। मानसिंह के पश्चात् मिर्जा राजा जयसिंह ने आमेर चित्रशैली के विकास में योगदान दिया। इस समय बिहारी सतसई पर आधारित बहुसंख्य चित्र बने। आमेर शैली के चित्र रसिकप्रिया और कृष्ण–रूक्मणी नामक चित्रित ग्रंथों में देखने को मिलते हैं, जिनकी रचना मिर्जा राजा जयसिंह ने अपनी रानी चन्द्रावती के लिए करवाई थी। इस शैली की समृद्ध परम्परा भित्तिचित्रों के रूप में उपलब्ध है।

जयपुर शैली का विकास महाराजा सवाई जयसिंह द्वितीय के काल से शुरू होता हैं, जब 1727 ई. में जयपुर की स्थापना हुई। महलों और हवेलियों के निर्माण के साथ भिति चित्रण जयपुर की विशेषता बन गयी। सवाई जयसिंह के उत्तराधिकारी ईश्वरीसिंह के समय साहिबराम नामक प्रतिभाशाली चितेरा था, जिसने आदमकद चित्र बनाकर चित्रकला की नयी परम्परा डाली। ईश्वरीसिंह के पश्चात् सवाई माधोसिंह प्रथम के समय गलता के मन्दिरों, सिसोदिया रानी के महल, चन्द्रमहल, पुण्डरीक की हवेली में कलात्मक भिति चित्रण हुआ। इसके पश्चात् सवाई प्रतापसिंह के समय चित्रकला की विशेष उन्नति हुई। इस समय राधाकृष्ण की लीलाओं, नायिका भेद, रागरागिनी, बारहमासा आदि का चित्रण प्रमुखतः हुआ। बड़े–बड़े पोट्रेट (आदमकद या व्यक्ति चित्र) एवं भिति चित्रण की परम्परा जयपुर शैली की विशिष्ट देन है। उद्यान चित्रण में जयपुर के कलाकार दक्ष थे। जयपुर चित्रों में हाथियों की विविधता पायी जाती है।

ढूँढाड़ शैली के अन्तर्गत **अलवर शैली** के विकास में राव राजा प्रतापसिंह, बख्तावरसिंह एवं विनयसिंह ने विशेष योगदान दिया। अलवर की चित्रकला के उदय में विनयसिंह का वही योगदान है जो मुगल चित्रकला में अकबर का है। उन्होंने राज्य के कला संग्रह को वैभवशाली बनाया। इनके समय प्रमुख चित्रकार बलदेव था। विनयसिंह ने शेखसादी की गुलिस्ताँ की पाण्डुलिपि को बलदेव से चित्रित करवाया। अलवर शैली में ईरानी, मुगल और जयपुर शैली का उचित समन्वय है। वेश्याओं के चित्र केवल अलवर शैली में ही बने हैं। महाराव शिवदानसिंह के समय कामशास्त्र के आधार पर चित्रण हुआ। मूलचंद नामक चित्रकार हाथीदाँत पर चित्र बनाने में प्रवीण था। चिकने एवं उज्ज्वल रंगों का प्रयोग इस शैली में हुआ है। राजस्थान की विभिन्न शैलियों

के मध्य अपनी कमनीय विशेषताओं के कारण अलवर शैली के लघुचित्रण की अपनी पहचान है।

उणियारा एवं शेखावाटी चित्र शैली परम्परा ढूँढाड़ चित्रशैली की ही शाखाएँ हैं। उणियारा शैली पर जयपुर एवं बूँदी शैली का प्रभाव है। नरूका ठिकाने वंश ने इस शैली के विकास का मार्ग प्रशस्त किया। इस शैली के श्रेष्ठ कलाकार धीमा, मीरबक्स, काशी, रामलखन, भीम आदि हुए।

जयपुर शैली के भित्ति चित्रण का सर्वाधिक प्रभाव **शेखावटी** पर पड़ा है। उन्नीसवीं सदी के मध्य से लेकर बीसवीं सदी प्रारम्भ तक शेखावटी के श्रेष्ठीजनों ने बड़ी–बड़ी हवेलियाँ बनाकर इस कला को प्रोत्साहन एवं प्रश्रय प्रदान किया। नवलगढ़, रामगढ़, फतेहपुर, लक्ष्मणगढ़, मुकुन्दगढ़, मंडावा, बिसाऊ आदि स्थानों का भित्ति चित्रण विशेष दर्शनीय हैं। फतेहपुर स्थित गोयनका की हवेली भित्तिचित्रों की दृष्टि से उल्लेखनीय है। कम्पनी शैली का प्रभाव हवेली चित्रणों में देखने को मिलता है। शेखावटी शैली में तीज–त्योहार, होली–दीपावली के उत्सवों का अंकन, शिकार, महफिल, नायक–नायिका भेद एवं अन्य श्रृंगारी भावों का अंकन हुआ है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुविकल्पात्मक प्रश्न

1. किलों का सिरमौर किसे कहा गया है ?
   (अ) कुम्भलगढ़ (ब) मेहरानगढ़
   (स) गागरोन (द) चित्तौड़गढ़
2. अबुल फजल ने किस दुर्ग को 'बख्तरबंद' कहा है ?
   (अ) कुम्भलगढ़ (ब) शेरगढ़
   (स) रणथम्भौर (द) तारागढ़ (बूँदी)
3. जल दुर्ग का उदाहरण है –
   (अ) गागरोन (ब) नाहरगढ़
   (स) मेहारानगढ़ (द) लोहागढ़
4. लोहागढ़ कहाँ स्थित है ?
   (अ) अलवर (ब) भरतपुर
   (स) करौली (द) जालौर
5. कैलादेवी का प्रसिद्ध मंदिर किस जिले में स्थित है ?
   (अ) करौली (ब) भरतपुर
   (स) सवाईमाधोपुर (द) राजसमंद
6. जैन धर्म से सम्बन्धित निम्न में से कौन–सा मंदिर है ?
   (अ) जगतशिरोमणि (ब) बाड़ौली
   (स) अर्थूणा (द) रणकपुर
7. किराडू के मन्दिर किस जिले में स्थित है ?
   (अ) प्रतापगढ़ (ब) उदयपुर
   (स) बाड़मेर (द) डूँगरपुर
8. पिछवई चित्रांकन किस शैली की विशेषता है ?
   (अ) किशनगढ़ (ब) बूँदी
   (स) कोटा (द) नाथद्वारा
9. 'बणी–ठणी' किस चित्रशैली से सम्बन्धित है ?
   (अ) किशनगढ़ (ब) कोटा
   (स) मारवाड़ (द) चावण्ड
10. पटवों की हवेली कहाँ स्थित है ?
    (अ) सीकर (ब) नवलगढ़
    (स) जैसलमेर (द) मुकन्दगढ़

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. धान्वन दुर्ग किसे कहते हैं ?
2. वर्तमान में मैग्जीन किस किले को कहा जाता है और

इसे किसने बनवाया था ?

3. कटारगढ़ क्या है ?
4. जैसलमेर किले की कोई दो विशेषताएँ बताइये।
5. महाराणा कुम्भा द्वारा बनवाये गये किसी एक किले का नाम बताइये और वह कहाँ अवस्थित है?
6. किस इमारत को 'भारतीय मूर्तिकला का शब्दकोश' कहा गया है ?
7. ओसियाँ क्यों प्रसिद्ध है ?
8. बूँदी शैली की कोई दो विशेषता बताइये।
9. जैसलमेर की कोई दो हवेलियों के नाम बताइये।
10. रणथम्भौर किले में स्थित गणेश मन्दिर क्यों प्रसिद्ध है ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. 'राजस्थान में दुर्गों का जाल है।' कथन को स्पष्ट कीजिये।
2. चित्तौड़गढ़ दुर्ग की विशेषताएँ बताइये।
3. जूनागढ़ पर एक टिप्पणी लिखिये।
4. राजस्थान के प्रसिद्ध जैन मन्दिरों का परिचय दीजिये।
5. शेखावाटी की हवेलियों के बारे में आप क्या जानते हैं ?
6. नाथद्वारा चित्रशैली की विशेषताएँ बताइये।
7. राजस्थान की चित्रशैलियों का किस तरह वर्गीकरण किया जा सकता है ?
8. 'राजस्थान के मूर्तिकला के सन्दर्भ में 8 वीं से 13 वीं शताब्दी का समय उत्कर्ष का काल था' कथन को स्पष्ट कीजिये।

निबन्धात्मक प्रश्न

1. राजस्थान चित्रकला की विभिन्न शैलियों की विशेषताओं सहित विवेचना कीजिये।
2. राजस्थान के दुर्ग स्थापत्य को उदाहरण सहित समझाइये।
3. राजस्थान के मन्दिर शिल्प का परिचय देते हुए प्रमुख मन्दिरों का संक्षिप्त वर्णन कीजिये।
4. राजस्थान के स्थापत्य के सन्दर्भ में जल स्थापत्य एवं हवेली स्थापत्य का विवेचन कीजिये।

□□□

अध्याय – 3
राजस्थान की लोक कलाएँ

लोक कला की समस्त विधाओं में लोकनृत्यों, लोकनाट्यों, लोक वाद्यों, लोक संगीत इत्यादि का महत्वपूर्ण स्थान है। इन विधाओं में लोक जीवन, मनोरंजन और संस्कृति का अनुपम रूप निहारने को मिलता है। इन कलाओं के प्रणेता न ऋषि–मुनि थे और न ही इनके लिए कोई ग्रंथ रचे गये। मानव के क्रियाकलापों, सामुदायिक वातावरण और परम्परागत अभ्यास ने इन कलाओं को जन्म दिया तथा जीवित रखा। मौखिक स्मरण और लौकिक रूढ़ियों से ढली यह कलाएँ आज भी जीवित हैं। युग–युगान्तर से पनपी यह कलाएँ राजस्थान की संस्कृति की प्राण बनी हुई हैं। इन कला–विधाओं का संबंध ग्राम्य पृष्ठभूमि और आदिवासियों से होने के कारण इन्हें 'लोककलाएँ' कहा जाता है। इनमें राजस्थान के व्यावहारिक जीवन का जीवन्त रूप दिखाई देता हैं। यदि राजस्थान को लोक कलाओं का अजायबघर कहा जाये तो अतिशयोक्ति न होगी। राजस्थान के ठेठ ग्रामीण जीवन को समझना है तो आपको उनकी भाषा के साथ उनके मनोरंजन के तरीकों की जानकारी प्राप्त करनी होगी। लोक कलाओं ने उनको कभी भी अकेलापन महसूस नहीं होने दिया। जीवन में खुशी के क्षणों को राजस्थान के निवासियों ने लोक कलाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। यही कारण है कि विपरीत परिस्थितियों में भी उनकी जीने की इच्छा बनी रही।

लोक नृत्य

लोक नृत्यों से राजस्थान की पहचान पूरे देश में है। लोक नृत्यों में शास्त्रीय नृत्य की तरह ताल, लय आदि का कड़ाई से पालन नहीं होता। समय–समय पर प्रसंग विशेष के अनुरूप जनमानस द्वारा रचे गये लोक नृत्यों में मानव जीवन का सहज चित्रण होता है। लोकोत्सव, पर्व, तीज–त्योहार, लोकानुष्ठान आदि के मोकों पर रंग–बिरंगी वेशभूषा और स्थान विशेष की परम्पराओं के अनुसार लोकनृत्य परम्परा शताब्दियों से चली आ रही है। मारवाड़ का डांडिया, मारवाड़ व मेवाड़ का गैर, शेखावाटी का गीदड़, जसनाथी सिद्धों का अग्नि नृत्य, अलवर–भरतपुर का बम नृत्य, लगभग पूरे प्रदेश में प्रचलित घूमर, चंग एवं डांडिया राजस्थान के लोकप्रिय नृत्य हैं। राजस्थान की जनजातियों के लोक नृत्यों में भीलों के गवरी, गरासियों के वालर, गूजरों का चरी नृत्य, रामदेवजी के भोपों का तेरहताली नृत्य, पेशेवर लोकनर्तकों का भवाई नृत्य आदि रंग–बिरंगी छटा बिखरते हैं। राजस्थान में प्रचलित प्रमुख लोक नृत्यों का परिचय निम्नांकित है –

अग्नि नृत्य

'अग्नि नृत्य' जसनाथी सम्प्रदाय का प्रसिद्ध नृत्य है। इसका उद्‌गम स्थल बीकानेर जिले के कतरियासर गाँव में हुआ। यह मुख्यतः चूरू, नागौर और बीकानेर की जाट जाति का नृत्य है। यह नृत्य धधकते अंगारों पर पुरुषों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है, नृत्यकार अंगारों से 'मतीरा फोड़ना' का कार्य करते हैं। आग के साथ राग और फाग खेलना जसनाथी सम्प्रदाय के अलावा कहीं भी देखने को नहीं मिलता है।

ईडाणी नृत्य

ईडाणी कालबेलिया जाति का प्रसिद्ध नृत्य है। इसमें पूँगी व खंजरी वाद्य यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। यह गोलाकार आकृति में होता है। ईडाणी में औरतों की पोशाक व मणियों की सजावट कलात्मक होती है।

कच्छी घोड़ी

कच्छी घोड़ी शेखावाटी क्षेत्र का प्रसिद्ध नृत्य है। इसमें चार–चार व्यक्ति आमने–सामने खड़े होते हैं, जो आगे–पीछे बढ़ने का कार्य तीव्र गति से करते हैं। इस नृत्य

में पंक्ति का तीव्र गति से बनने का और बिखरने का दृश्य फूल की पंखुड़ियों के खुलने का आभास दिलाता है।

गरबा नृत्य

गरबा बाँसवाड़ा और डूँगरपुर क्षेत्र का प्रसिद्ध नृत्य है। इसका स्वरूप रास, डांडिया गवरी नृत्यों से अभिव्यक्त होता है। इसमें गीतों की लय भक्तिपूर्ण होती है। यह नवरात्रों में विशेष रूप से किया जाता है। इसमें समाज बिना भेदभाव से नृत्य का आनन्द लेता है। इसमें लोक जीवन, भक्ति एवं शक्ति का चित्रण किया जाता है।

गवरी नृत्य

गवरी मेवाड़ क्षेत्र के भीलों के द्वारा किया जाने वाला प्रसिद्ध नृत्य है। यह सावन–भादों माह में किया जाता है। इसमें पार्वती की पूजा की जाती है। इस नृत्य में मांदल और थाली के प्रयोग के कारण इसे 'राई नृत्य' के नाम से भी जाना जाता है। यह केवल पुरुषों का नृत्य है। शिवजी की अर्द्धांगिनी गौरी के नाम से इसका नाम गवरी पड़ा।

गीदड़ नृत्य

होली के अवसर पर किया जाने वाला 'गीदड़' शेखावाटी क्षेत्र का प्रसिद्ध नृत्य है। इसमें ताल, सुर और नृत्य का समन्वय देखने को मिलता है। इसे केवल पुरुष ही प्रस्तुत करते हैं। इस नृत्य के मुख्य वाद्य यंत्र नगाड़ा, ढोल, डफ व चंग हैं। नगाड़े की चोट पर पुरुष अपने दोनों हाथों के डण्डे को परस्पर टकराते हुए नृत्य करते हैं। यह नृत्य समाज की एकता का सूत्रधार है।

गैर नृत्य

गैर मेवाड़ क्षेत्र का प्रसिद्ध नृत्य है, इसकी लोकप्रियता बाड़मेर में भी है। यह होली के अवसर पर पुरुषों को उल्लास व स्फूर्ति प्रदान करता है। पुरुष लकड़ी की छड़ियाँ लेकर गोल घेरे में नृत्य करते हैं। घेरे में नृत्य करने के कारण इसे 'गैर' नाम से जाना जाता है। कृषक फसल काटने से नई फसल की बुवाई तक 'गैर' करते रहते है। यह मुख्यतः भील जाति की संस्कृति को प्रदर्शित करता है।

घुड़ला नृत्य

घुडला, जो अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त है, जोधपुर का प्रसिद्ध नृत्य है। इसमें जयपुर के मणि गांगुली और उदयपुर के देवीलाल सामर का मुख्य योगदान है। राजस्थान संगीत नाटक अकादमी के भूतपूर्व मंत्री कमल कोठारी ने घुड़ला को राष्ट्रीय मंच प्रदान किया, जिससे राजस्थानी कला आमजन में लोकप्रिय बनी। इसमें छिद्रित मटके में दीपक जलता रहता है, उसे स्त्री अपने सिर पर उठाकर और सुन्दर श्रृंगार से घूमर और पणिहारी अन्दाज में चक्कर बनाकर नृत्य करती है और साथ में गीत भी गाती है।

घूमर नृत्य

नृत्यों का सिरमौर घूमर राज्य नृत्य के रूप में प्रसिद्ध है। यह मांगलिक अवसरों, पर्वों आदि पर महिलाओं द्वारा किया जाता है। स्त्री–पुरुष घेरा बनाकर नृत्य करते हैं। लहंगे के घेरे को 'घूम्म' कहते हैं। इसमें ढोल, नगाड़ा और शहनाई आदि वाद्य यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। इस नृत्य में बार–बार घूमने के साथ हाथों का लचकदार संचालन प्रभावकारी होता है।

चंग नृत्य

चंग शेखावाटी क्षेत्र का प्रसिद्ध नृत्य है। इसमें प्रत्येक पुरुष चंग के साथ नृत्य करते हैं। यह मुख्यतः होली के दिनों में किया जाता है। चंग को प्रत्येक पुरुष अपने एक हाथ से थाम कर और दूसरे हाथ से कटरवे का ठेका बजाते हुए वृत्ताकार घेरे में नृत्य करते हैं। घेरे के मध्य में एकत्रित होकर धमाल और होली के गीत गाते हैं।

चकरी नृत्य

चकरी हाड़ौती क्षेत्र का प्रसिद्ध नृत्य है। यह कंजर, कालबेलिया और बेड़ियाँ जाति की कुंवारी लड़कियों द्वारा किया जाता है। इस नृत्य की प्रख्यात नृत्यांगना 'गुलाबो' है। गुलाबो ने 'पेरिस' में आयोजित 'भारतीय

उत्सव' में अपनी कला का प्रदर्शन किया था। इसमें नृत्य करने वाली लड़कियाँ चंग की ताल पर तेज गति से चक्राकार रूप में नृत्य करती हुई चकरी की तरह घूमती है।

चरी नृत्य

'चरी' किशनगढ़ (अजमेर) का प्रसिद्ध नृत्य है। चरी नृत्य में बांकिया, ढोल एवं थाली का प्रयोग किया जाता है। इसे गुर्जर जाति पवित्र मानती है। स्त्रियाँ अपने सिर पर सात चरियाँ रखकर नृत्य करती हैं। इनमें से सबसे ऊपर की चरी में काकड़ा के बीज में तेल डालकर जलाये जाते हैं।

डांडिया नृत्य

डांडिया मारवाड़ का प्रसिद्ध नृत्य है। यह होली के बाद किया जाता है। फाल्गुन की शीतल चाँदनी में नर्तक नगाड़ा लेकर मैदान में बैठ जाता है और इस मैदान के चौक के बीच में शहनाई वाले तथा गवैये (गायक) बैठते हैं। पुरुष 'लोक ख्यात' को लय से गाते हैं। नर्तक बराबर लय से डांडिया टकराते हुए वृत्त में आगे बढ़ते जाते हैं।

तेरहताली नृत्य

तेरहताली नृत्य में मंजीरा, तानपुर व चौतारा वाद्य यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। इसका प्रदर्शन उत्सवों व मेलों में देखने को मिलता है। नर्तकियाँ ध्वनि की लय को सुनने के पश्चात् बैठकर नृत्य करती हैं। इसमें तेरह मंजीरों की आवश्यकता होती है, जिसमें से नौ मंजीरे दायें पाँव पर, दो हाथों की कोहनी के ऊपर और एक–एक दोनों हाथों में होते हैं। हाथ वाले मंजीरे के टकराने से ध्वनि उत्पन्न होती है। यह नृत्य मुख्य रूप से रामदेव जी के मेले में देखने को मिलता है। कामड जाति तेरहताली नृत्य के साथ रामदेवजी का यशोगान करती है।

बम नृत्य

बम नृत्य भरतपुर और अलवर क्षेत्र का प्रसिद्ध नृत्य है। यह नई फसल आने और फाल्गुन की मस्ती पर गाँवों में पुरुषों द्वारा किया जाता है। इस नृत्य में नगाड़े, थाली, चिमटा, ढोलक आदि वाद्य यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। बम एक बड़ा नगाड़ा होता है, जिसे दोनों हाथों के मोटे डण्डे से बजाते हैं। बम की ध्वनि से रसिया गायन किया जाता है, जिसे बमरसिया भी कहा जाता है।

भवाई नृत्य

भवाई उदयपुर संभाग का प्रसिद्ध नृत्य है। यह शंकरिया, सूरदास, बीकाजी और ढोला मारू नाच के रूप में प्रसिद्ध है। इसमें अनूठी नृत्य अदायगी, शारीरिक क्रियाओं का अद्भुत चमत्कार और लयकारी की विविधता आकर्षक होती है। इसमें तेज लय के साथ सिर पर सात–आठ मठकी रखकर नृत्य करना, जमीन पर गिरे रूमाल को मुँह से उठाना, गिलासों पर नाचना, थाली के किनारों पर नृत्य करना आदि क्रियाएँ की जाती है।

वालर नृत्य

वालर सिरोही क्षेत्र का प्रसिद्ध नृत्य है। बिना वाद्य यन्त्रों के इसे गरासिया जाति के व्यक्ति करते हैं। यह नृत्य स्त्री–पुरुषों द्वारा विवाह के अवसर पर किया जाता है। इस वालर नृत्य का प्रारम्भ पुरुष अपने हाथों में तलवार या छाता लेकर करते हैं।

शंकरिया नृत्य

शंकरिया नृत्य कालबेलिया जाति के सपेरों द्वारा किया जाता है। यह प्रेम कहानी पर आधारित होने के कारण स्त्री–पुरुष दोनों के द्वारा प्रस्तुत किया जाता है। इसमें अंग संचालन अति सुन्दर होता है।

लोक नाट्य

राजस्थान में लोक जीवन के विभिन्न रूपों की अभिव्यक्ति के लिए लोक नाट्य रचे गये हैं और उनका अपने तरीके से मंचन किया जाता है। ये लोक नाट्य जन जीवन को आह्लादित करते रहे हैं। लोक नाट्यों में दर्शकों और अभिनेता के बीच दूरियाँ प्रायः नहीं होती है। गीतों एवं नृत्य की प्रधानता के लिए लोकनाट्यों में प्रतीकात्मक साज–सज्जा से ही पात्रों की पहचान हो जाती है। हाल ही के वर्षों में ऐतिहासिक, पौराणिक, लोक कथाओं के साथ

वर्तमान राजनीति एवं शासन व्यवस्था को भी लोक कलाकारों द्वारा लोक नाट्यों में व्यक्त किया जाने लगा है। अंचल विशेष की संस्कृति से जुड़े लोकनाट्यों में पुरुष अथवा स्त्रियाँ या दोनों भाग लेते हैं। कई बार पुरुष ही स्त्री की वेशभूषा–आभूषण धारण कर अभिनय करते हैं। अलवर और भरतपुर के लोक नाट्यों में हरियाणा तथा उत्तर प्रदेश की लोक संस्कृतियों का मिला–जुला रूप देखने को मिलता है। धौलपुर एवं सवाई माधोपुर के लोक नाट्यों पर स्पष्टतः ब्रजभूमि की संस्कृति का प्रभाव झलकता है। राजस्थान के रेगिस्तानी क्षेत्र में जीविका के लिए कठिन परिश्रम करने वाली जातियों में मनोरंजन का कार्य नट, भाट आदि पेशेवर जनजातियों के लोग करते हैं। इस क्षेत्र के लोगों के वार्तालाप व्यंग्य–विनोद प्रधान होते हैं, जिससे वे लोगों को हँसने के लिए मजबूर करते हैं। पहाड़ी इलाकों जैसे सिरोही, डूँगरपुर, उदयपुर, बारां आदि क्षेत्रों में रहने वाली गरासिया, भील, मीणा, बंजारे, सहरिया इत्यादि जनजातियाँ रंगमय संस्कृति की छवि प्रस्तुत करती हैं। राजस्थान में निम्न लोक नाट्य प्रचलन में हैं –

ख्याल

ख्याल 18वीं सदी के प्रारम्भ से ही राजस्थान के लोक नाट्यों में सम्मिलित हैं। इन ख्यालों की विषय–वस्तु पौराणिक है, जिनके वीराख्यान में ऐतिहासिक तत्त्व भी मिलते हैं। भौगोलिक अन्तर के कारण इन ख्यालों ने भी परिस्थितियों के अनुसार अलग–अलग रूप ग्रहण कर लिये हैं। इन ख्यालों में भाषा की भिन्नता नहीं है, लेकिन इनमें शैलीगत भिन्नता है। इन ख्यालों में संगीत के साथ–साथ नाटक, नृत्य एवं गीतों की भी प्रधानता है। गीत मुख्यतः लोकगीतों या शास्त्रीय संगीत पर आधारित होते हैं। ख्यालों में से कुछ की विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

(i) कुचामनी ख्याल

कुचामनी ख्याल के प्रवर्तक विख्यात लोक–नाट्यकार 'लच्छीराम्' है। इस ख्याल में उन्होंने अपनी शैली का समावेश किया। इस शैली की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं –

(i) इसका रूप गीत–नाट्य जैसा होता है।

(ii) इसमें लोकगीतों की प्रधानता है।

(iii) लय के अनुसार ही नृत्य में ताल होती है।

(iv) इसे खुले मंच पर प्रस्तुत किया जाता है।

(v) इनमें पुरुष पात्र ही स्त्री चरित्र का अभिनय करते हैं।

(vi) इस ख्याल में संगत के लिए ढोल एवं शहनाई वादक आदि सहयोगी होते हैं।

(vii) इसमें नर्तक ही गाने को गाते हैं। इस ख्याल में चाँद नीलगिरि, राब रिड़मल तथा मीरा मंगल प्रमुख है।

(ii) जयपुरी ख्याल

सभी ख्यालों की प्रकृति मिलती–जुलती है, परन्तु जयपुरी ख्याल की अपनी अलग विशेषता है, जो इस प्रकार है –

(i) इसमें स्त्री पात्रों की भूमिका स्त्रियाँ भी निभाती हैं।

(ii) इस ख्याल में नये प्रयोगों की महती संभावनाएँ हैं।

(iii) यह शैली रूढ़ नहीं है, मुक्त तथा लचीली है।

(iv) इसमें कविता, संगीत, नृत्य तथा गान व अभिनय का सुन्दर समावेश होता है।

(v) इस शैली के मुख्य लोकप्रिय ख्याल हैं – जोगी–जोगन, कान–गुजरी, मियाँ–बीबू, पठान, रसीली तम्बोलन।

(iii) तुर्रा कलंगी

मेवाड़ के शाह अली तथा तुकनगीर नामक संत पीरों ने तुर्रा कलंगी ख्याल की रचना की और इसे यह नाम दिया। इसमें 'तुर्रा' को महादेव 'शिव' तथा 'कलंगी' को पार्वती का प्रतीक माना जाता है।

तुकनगीर 'तुर्रा' के पक्षकार थे और शाह अली 'कलंगी' के। इनके माध्यमों से 'शिव–शक्ति' के विचार लोगों तक पहुँचे। इनके प्रचार का मुख्य माध्यम काव्यमय रचनाएँ थी, जिसे लोक समाज में 'दंगल' के नाम से जानते हैं। तुर्रा कलंगी का ख्याल राजस्थान और मध्यप्रदेश में लोकप्रिय है। इस ख्याल की मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

(i) इसकी प्रकृति गैर व्यावसायिक है।

(ii) इसमें रंगमंच की भरपूर सजावट होती है।

(iii) इसमें नृत्य की ताल सरल होती है।

(iv) इसके बोल लयात्मक एवं नये है।

(v) तुर्रा कलंगी ऐसा लोक नाट्य है, जिसमें दर्शकों के भाग लेने की अधिक सम्भावना होती है।

(vi) 'तुर्रा कलंगी' के मुख्य केन्द्र घोसुण्डा, चित्तौड़, निम्बाहेड़ा तथा नीमच हैं। इन्हीं स्थानों पर इसके सर्वश्रेष्ठ कलाकार चेतराम, हमीद बेग, ताराचन्द तथा ठाकुर ओंकारसिंह आदि हैं। 'सोनी जयदयाल' इसके सर्वाधिक लोकप्रिय कलाकार थे।

(iv) शेखावाटी ख्याल

इस शैली के मुख्य खिलाड़ी 'नानूराम' थे। वे अपने पीछे स्वरचित ख्यालों की एक धरोहर छोड़ गए हैं। उनमें से कुछ नाम इस प्रकार हैं – हीर रांझा, हरीचन्द, भर्तृहरि, जयदेव कलाली, ढोला मरवण तथा आल्हादेव।

इस लोक–नाट्य शैली की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

(i) प्रभावी चंचल संचालन।

(ii) शैली, भाषा, मुद्रा और गीत गायन में दक्षता।

(iii) वाद्यवृन्द की उचित संगत, जिसमें मुख्य हारमोनियम, सारंगी, शहनाई, बाँसुरी, नगाड़ा तथा ढोलक का प्रयोग होता है।

शेखावाटी में यह ख्याल साहित्यिक एवं रंगमंच के रूप में लोकप्रिय है। इन ख्यालों से लाखों लोग मनोरंजन करते है। नाथूराम के शिष्य दूलिया राणा के परिवार के व्यक्ति ही इन ख्यालों में होने वाले व्यय को वहन करते है और श्रेष्ठ खिलाड़ियों को पुरस्कार वितरण करते हैं।

नौटंकी

नौटंकी का शाब्दिक अर्थ है 'नाटक का अभिनय करना।' नौटंकी की करौली, भरतपुर, धौलपुर, अलवर, गंगापुर तथा सवाई माधोपुर आदि क्षेत्रों में प्रस्तुत की जाती है। इस नाट्य को भरतपुर में हाथरस शैली में प्रस्तुत करते हैं तथा इसमें सारंगी, शहनाई, ढपली आदि वाद्य यन्त्रों का प्रयोग किया जाता है। इसे पुरुष एवं महिलाएँ प्रस्तुत कर सकती हैं। इन नाट्यों में अमर सिंह राठौड़, आल्हा–ऊदल, हरिश्चन्द्र तारामती, सत्यवान–सावित्री एवं लैला–मंजनू आदि नाटकों के मंचन किये जाते हैं। नौटंकी गाँवों में अधिक लोकप्रिय है। इसे सामाजिक उत्सवों, मेलों एवं शादियों के अवसर पर प्रस्तुत किया जाता है।

रम्मत

बीकानेर तथा जैसलमेर क्षेत्रों में होली और सावन के अवसर पर होने वाली लोक काव्य प्रतियोगिताओं से रम्मत नाट्य का उद्‌भव हुआ। इसमें राजस्थान के सुविख्यात लोक नायकों एवं महापुरुषों की ऐतिहासिक–धार्मिक काव्य रचना को मंच पर प्रस्तुत किया जाता है। इन रम्मतों के रचयिता मनीराम व्यास, तुलसीदास, फागु महाराज, सुआ महाराज और तेज कवि (जैसलमेरी) हैं।

तेज कवि ने रंगमंच को क्रान्तिकारी नेतृत्व प्रदान किया। उसने अपनी रम्मत का अखाड़ा श्री कृष्ण कम्पनी से शुरू किया। 1943 ई. में तेजकवि ने 'स्वतंत्र बावनी' की रचना कर इसे महात्मा गाँधी को भेंट किया। तेज कवि पर ब्रिटिश सरकार ने निगरानी रखी तथा कुछ समय पश्चात् उन्हें गिरफ्तार करने का वारन्ट जारी कर दिया। जब उन्हें गिरफ्तारी के वारन्ट की सूचना मिली, तो वह पुलिस

कमिश्नर के घर गए और वहाँ जाकर उन्होंने ओजस्वी वाणी में कहा –

कमिश्नर खोल दरवाजा,
हमें भी जेल जाना है।
हिन्द तेरा है न तेरे बाप का,
हमारी मातृभूमि पर लगाया बन्दी खाना है।

रम्मत के मुख्य वाद्य नगाड़ा एवं ढोलक हैं। इसमें कोई भी रंगमंचीय सजावट नहीं होती है। इस मंच का स्तर ऊँचा होने के कारण बैठकर गीत गाये जाते हैं। इनका सम्बन्ध निम्नांकित विषयों से है –

चौमासा – वर्षा ऋतु का वर्णन

लावणी – देवी–देवताओं की पूजा से सम्बन्धित गीत

गणपति वंदना – गणपति की वन्दना।

रामदेव जी के भजन – रम्मत शुरू होने से पूर्व बाबा रामदेव का भजन गाया जाता हैं।

स्वांग

लोक–नाट्यों में स्वांग अधिक प्रसिद्ध है। इसका शाब्दिक अर्थ है किसी विशेष ऐतिहासिक, पौराणिक, लोक प्रसिद्ध या समाज में मान्य चरित्र तथा देवी–देवताओं की हूबहू वेश–भूषा धारण करते हुए उनके चरित्र की नकल करना। राज्य की कुछ जनजातियाँ स्वांग को अपना व्यवसाय मानती हैं। इसके कलाकार को बहरूपिया कहा जाता है। स्वांग का गाँवों में अधिक प्रचलन है। इसके प्रसिद्ध कलाकार जानकी लाल भांड (भीलवाड़ा) हैं।

फड़

भीलवाड़ा जिले का शाहपुरा कस्बा राजस्थान की परम्परागत लोक नाट्य एवं चित्रकला की विशिष्ट शैली 'फड़' के कारण राष्ट्रीय स्तर पर पहचाना जाता है। शाहपुरा के छीपा जाति के जोशी इस पट–चित्रण (फड़) में सिद्धहस्त हैं। भीलवाड़ा जिले के श्री लाल जोशी ने 'फड़' चित्रकला को राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान दी है। लोक देवता देवनारायण की जीवनगाथा पर आधारित इनका संग्रह अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त है। 'फड़' कपड़े पर बने हुए चित्र होते हैं, जिनके माध्यम से किसी घटना या कथा का प्रस्तुतीकरण किया जाता है। फड़ का निर्माण 30 फुट लम्बे और 5 फुट चौड़े कपड़े पर किया जाता है। भोपा इस फड़ को दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत करते हैं तथा भोपी इस फड़ के समक्ष नृत्य करती है। वह जो नृत्य करती है, उसके बारे में फड़ पर बने चित्र की ओर संकेत करती रहती है। इस समय भोपा रावणहत्था बजाता है। फड़ में अधिकतर लोक देवताओं, पाबूजी, देवनारायण जी, रामदेवजी व कृष्ण एवं माता दुर्गा के जीवन की घटनाओं व चमत्कारों पर आधारित विषयों का चित्रण होता है।

फड़ का वाचन राजपूत, गुर्जर, जाट, कुम्भकार व बलाई जाति के चारण भोपे करते हैं। ये फड़ को लकड़ी पर लपेट कर गाँव–गाँव जाकर पारम्परिक वस्त्र एवं वाद्य यंत्र के साथ थिरकते हुए वाचन करते है। यह कला परम्परा लोक नाट्य, गायन, वादन, मौखिक साहित्य, चित्रकला व लोकधर्म का एक संयोजन है। फड़ ग्रामीणों के सरलतम, विवरणात्मक व क्रमबद्ध कथन का माध्यम है।

लोक वाद्य

राजस्थान में लोक संगीत, लोक नृत्य एवं लोक नाट्यों का प्रचलन सम्भवतः सैकड़ों वर्षों से है। बिना वाद्य के संगीत सूना है। प्राचीन काल से ही वाद्य यन्त्रों का सम्बन्ध देवी–देवताओं के साथ स्थापित किया जाता रहा है, जैसे कृष्ण के साथ बांसुरी, सरस्वती के साथ वीणा, शिव के साथ डमरू, नारद के साथ एकतारा आदि। हमारे लिए यह उचित होगा कि हम राजस्थान के ग्रामीण अंचलों में सुदीर्घ काल से प्रचलित वाद्य यन्त्रों का परिचय प्राप्त करें।

अलगोजा

अलगोजा राजस्थान का राज्य वाद्य है। यह बाँसुरी

की तरह होता है। यह बाँस, पीतल और अन्य किसी भी धातु से बनाया जा सकता है। अलगोजा में स्वरों के लिए छः छेद होते हैं, जिनकी दूरी स्वरों की शुद्धता के लिए निश्चित होती है। वादक दो अलगोजे अपने मुँह में रखकर एक साथ बजाता है, एक अलगोजे पर स्वर कायम रखते हैं और दूसरे पर स्वर बजाये जाते है। जयपुर के पद्मपुरा गाँव के प्रसिद्ध कलाकार "रामनाथ चौधरी" नाक से अलगोजा बजाते हैं। अलगोजा जैसलमेर, जोधपुर, बाड़मेर, बीकानेर, जयपुर, सवाई माधोपुर एवं टोंक आदि क्षेत्रों में मुख्य रूप से बजाया जाता है। अलगोजा को वीर तेजाजी की जीवन गाथा, डिग्गीपुरी का राजा, ढोला मारू नृत्य और चक्का भवाई नृत्य में भी बजाया जाता है। इसका प्रयोग भील और कालबेलियाँ जातियाँ अधिक करती हैं।

इकतारा

इकतारा गोल तुम्बे में बाँस की डंडी फँसाकर बनाया जाता है। तुम्बे का एक हिस्सा काटकर इसे बकरे के चमड़े से मढ़कर निर्मित किया जाता है। बाँस पर दो खूँटियाँ होती हैं, जिन पर ऊपर–नीचे दो तार बँधे रहते हैं। इसका वादन तार पर उंगली से ऊपर–नीचे करके किया जाता है। इसको कालबेलियाँ, नाथ, साधु–संन्यासी आदि बजाते हैं।

कामायचा

कामायचा जैसलमेर और बाड़मेर क्षेत्र का प्रसिद्ध वाद्य है। यह सारंगी के समान होता है। इसकी तबली चौड़ी व गोल होती है। तबली पर चमड़ा मढ़ा होता है। कामायचा की ध्वनि में भारीपन और गूँज होती है। इसका प्रयोग मुस्लिम शेख अधिक करते है, जिन्हें 'मांगणियार' कहा जाता है।

खड़ताल

खड़ताल शब्द करताल से बना है। बाड़मेर क्षेत्र के प्रसिद्ध कलाकार सद्दीक खाँ खड़ताल बजाने में दक्ष हैं, इन्हें खड़ताल का जादूगर भी कहा जाता है। खड़ताल कैर व बबूल की लकड़ी से बना होता हैं। इसमें दो लकड़ी के टुकड़ों के बीच में पीतल की छोटी–छोटी तश्तरियाँ लगी रहती हैं। खड़ताल को इकतारा से बजाया जाता है। भक्तजनों व साधु–संतों द्वारा खड़ताल का प्रयोग किया जाता है।

चंग

शेखावाटी क्षेत्र में होली के अवसर पर चंग वाद्य बजाया जाता है, जो लकड़ी के गोल घेरे के रूप में होता है। चंग में एक तरफ बकरे की खाल होती है, जिसे दोनों हाथों से बजाया जाता है। चंग को कालबेलियाँ जाति के व्यक्ति बजाते हैं।

जंतर

जंतर वीणा के प्रारम्भिक रूप जैसा है। इसके दो तुम्बे होते हैं, जिसकी डाँड बाँस की बनी होती है, जिसमें मगर की खाल के 22 पर्दे मोम से चिपकाते हैं। इसके परदों के ऊपर पाँच या छः तार लगे होते हैं, जिन्हें हाथ की अंगुली एवं अंगूठे से बजाते हैं। इसे खड़े होकर गले में लटकाकर बजाते हैं। इसका बगड़ावतों की कथा कहने वाले भोपे प्रयोग करते हैं। इनके चित्र पर्दे को चित्रित कर संगत के साथ गाकर कहानी कहते हैं। इसे लोक देवता देवनारायणजी के भजन व गीत गाते समय प्रयोग करते हैं। इसका प्रचलन मेवाड़ क्षेत्र में अधिक है।

झांझ

यह शेखावाटी क्षेत्र का प्रसिद्ध वाद्य है। इसका आकार मंजीरे से बड़ा होता है। इसे कच्छी घोड़ी नृत्य में ताशे के साथ बजाते हैं।

ढोल

राजस्थानी लोक वाद्यों में ढोल महत्वपूर्ण है। इसके लोहे या लकड़ी के गोल घेरे पर दोनों ओर चमड़ा मढ़ा होता है। ढोल पर लगी रस्सी को कड़ियों के सहारे खींचकर कसा जाता है। वादक ढोल को अपने गले में लटकाकर लकड़ी के डण्डे से बजाता है। इसे मांगलिक अवसरों पर अधिक बजाते हैं। भीलों के गैर नृत्य, शेखावाटी

के कच्छी घोड़ी नृत्य और जालौर के ढोल नृत्य में विशेष रूप से इसका प्रयोग होता है।

तंदूरा

तंदूरा चार तार का होता है, जिसे चौतारा भी कहा जाता है। इसका निर्माण लकड़ी से होता है। इसके साथ मंजीरा, खड़ताल, चिमटा आदि वाद्य बजाये जाते हैं। इसका रामदेवजी के भोपे एवं कामड़ जाति के लोग अधिक प्रयोग करते हैं।

ताशा

ताशा को ताँबे की चपटी परात पर बकरे का पतला चमड़ा मढ़कर बनाया जाता है और इसे बाँस की खपच्चियों से बजाया जाता है। इसे मुसलमान लोग अधिक बजाते हैं।

नगाड़ा

नगाड़ा दो प्रकार का होता है छोटा और बड़ा। लोक नाट्यों में नगाड़े के साथ शहनाई बजायी जाती है। लोक नृत्यों में नगाड़ा की संगत के बिना रंगत नहीं आती है। यह युद्ध के समय अधिक बजाया जाता था।

पूंगी

पूंगी घीया तुम्बे की बनी होती है, तुम्बे का ऊपरी हिस्सा लम्बा और पतला तथा नीचे का हिस्सा गोल होता है। तुम्बे के निचले गोल हिस्से में से दो नलियाँ लगाई जाती है। इन नलियों में स्वरों के छेद होते है, जिनमें एक नली में स्वर कायम व दूसरी में स्वर निकाले जाते हैं। यह कालबेलियों व आदिवासी भील जातियों का प्रसिद्ध वाद्य है।

भपंग

भपंग मेवात क्षेत्र का प्रसिद्ध वाद्य है। इसका आकार डमरूनुमा होता है, जिसको एक ओर चमड़े से मढ़ते है तथा दूसरी ओर खुला छोड़ दिया जाता है। इसे चमड़े में छेद कर तार को एक खूँटी से बाँध देते हैं। वर्तमान में इसे प्लास्टिक के तंतु से बनाते हैं। इसे कांख में दबाकर बजाते हैं। इसमें तान को ढीला करके विभिन्न ध्वनियाँ निकालते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त जहुर खाँ इसके प्रसिद्ध कलाकार हैं।

मंजीरा

मंजीरा डूंगरपुर क्षेत्र का प्रसिद्ध वाद्य यंत्र है। यह पीतल व कांसे की मिश्रित धातु का गोलाकार रूप होता है। दो मंजीरों को आपस में घर्षित करके ध्वनि उत्पन्न की जाती है। यह निर्गुण भजन और होली के गीत के साथ तथा तन्दूरे एवं इकतारे के साथ भी बजाया जाता हैं। रामदेवजी के भोपे, कामड़ जाति एवं तेरह ताली नृत्य में मंजीरों का प्रयोग किया जाता है।

मशक

मशक चमड़े की सिलाई कर बनाया जाता है। इसमें एक ओर से मुँह से हवा भरी जाती है तथा दूसरी ओर नली के छेदों से स्वर निकाले जाते हैं। वादक एक ओर मुँह से हवा भरता है तथा दूसरी ओर दोनों हाथों की उंगलियों से स्वर निकालता है। इसकी ध्वनि पूँगी की तरह है। इसका प्रयोग भैरुजी के भोपे अधिक करते हैं।

मादल

मादल की आकृति मृदंग के समान होती है, जो मिट्टी से निर्मित होता है। इसे हिरण या बकरे की खाल से मढ़ा जाता है। मादल का एक मुँह छोटा और दूसरा मुँह बड़ा होता है। इसे मढ़ी खाल पर जौ का आटा चिपकाकर बजाया जाता है और साथ में थाली भी बजायी जाती है। भील गवरी नृत्य में इसको बजाते हैं।

रावण हत्था

रावण हत्था भोपों का मुख्य वाद्य है। पाबूजी की फड़ को बाँचते समय भोपें रावण हत्था का प्रयोग करते हैं। बनावट में यह बिलकुल सरल किंतु स्वर में सुरीला होता है।

इसे बनाने के लिए नारियल की कटोरी पर खाल मढ़ी जाती है, जो बांस के साथ लगी होती है। बांस में जगह–जगह खूंटियाँ लगा दी जाती हैं, जिनमें तार बंधे होते हैं। यह वायलिन की तरह गज से बजाया जाता है। रावण हत्था को ढफ भी कहा जाता है।

शहनाई

शहनाई शीशम या सागवान की लकड़ी से बनी होती है। यह आकार में चिलम के समान होती है। इसमें आठ छेद होते हैं। इसका पत्ता ताड़ के पत्ते से बना होता है। शहनाई को बजाने के लिए निरन्तर नाक से श्वास लेना पड़ता है। यह मांगलिक अवसरों पर विशेष रूप से बजाई जाती है। कभी–कभी लोक नाट्यों के साथ भी बजाई जाती है। मांगी बाई मेवाड़ की प्रसिद्ध शहनाई वादिका और मांड गायिका है।

सारंगी

बाड़मेर और जैसलमेर क्षेत्र की लंगा जाति द्वारा सारंगी का प्रयोग किया जाता है। सारंगी तत् वाद्य यन्त्रों में सर्वश्रेष्ठ है। यह सागवान, तून, कैर या रोहिड़े की लकड़ी से बनाई जाती है। इसमें 27 तार होते हैं तथा ऊपर की तांते बकरे की आंतों से बने होते है। इसका वादन गज से होता हैं, जो घोड़े की पूंछ के बालों से निर्मित होता है। इसे बिरोजा पर घिसकर बजाने पर ही तारों से ध्वनि उत्पन्न होती है। मारवाड़ के जोगियों द्वारा गोपीचन्द, भृर्तहरि, निहालदे आदि के ख्याल गाते समय इसका प्रयोग किया जाता है। मिरासी, लंगा, जोगी, मांगणियार आदि राजस्थानी कलाकार सारंगी के साथ ही गाते हैं।

लोक संगीत

लोक संगीत जन समुदाय के स्वाभाविक उद्गारों का प्रतिबिम्ब है। कवीन्द्र रवीन्द्रनाथ टैगोर ने लोक गीतों को संस्कृति का सुखद सन्देश ले जाने वाली कला कहा है। महात्मा गाँधी के शब्दों में "लोक गीत ही जनता की भाषा है, लोक गीत हमारी संस्कृति के पहरेदार हैं।"

राजस्थान के विशिष्ट एवं विविध भौगोलिक परिवेश ने इस प्रदेश के लोक जीवन को सतरंगी स्वरूप प्रदान किया है। मध्यकाल में राजपूत राजाओं के संरक्षण में लोक कलाओं का निरन्तर विकास होता रहा है। लोक संगीत में यहाँ के लोक जीवन के सामाजिक व नैतिक आदर्शों, इतिहास के लोक नायकों, धार्मिक जीवन के नानाविध अंगों, विश्वासों, मूल्यों आदि का प्रकटीकरण देखा जा सकता है। जीवन का शायद ही प्रसंग होगा, जिससे सम्बन्धित लोक गीत यहाँ उपलब्ध न हो।

लोक संगीत का मूलाधार लोक गीत है, जिन्हें विभिन्न अवसरों एवं अनुष्ठानों पर सामूहिक रूप से गाया जाता है। लोक वाद्यों की संगति इनके माधुर्य की वृद्धि करती है। कभी गीत के भावों को नृत्य द्वारा भी साकार किया जाता है। कई बार शासक अथवा प्रश्रयदाता की प्रशस्ति में भी गीत रचे गये। कई जातियों ने व्यावसायिक दृष्टि से गीत रचने एवं गाने में विशिष्ट दक्षता प्राप्त कर ली है।

राजस्थान में लोक संगीत में राग–सौरठ, देश आदि का अधिक प्रयोग हुआ है। तालों में दादरा, रूपक, कहरवा ही अधिक प्रयोग में लायी जाती है। यद्यपि लोक गीतों में रागों का पूर्ण दिग्दर्शन नहीं हो पाता, फिर भी इनकी प्रस्तुति में अद्भुत लयात्मकता होती है।

लोक गीत कई विषयों से सम्बन्धित है, जैसे – संस्कार, त्योहार–पर्व, ऋतु, देवी–देवता इत्यादि। संस्कारों में ज्यादातर गर्भधारण, जन्म, विवाह, विशिष्ट मेहमानों का विशेष अवसरों पर पधारना आदि को शामिल किया जा सकता है। पाणिग्रहण संस्कार पर सर्वाधिक गीत गाये जाते हैं।

विवाह से पूर्व दुल्हा–दुल्हन की प्रेमाकांक्षा की व्यंजना 'बना–बनी' के गीतों में मिलती है। वर निकासी के समय 'घुड़–चढ़ी' की जो रस्म होती है, उसे राजस्थान में लोक गीतों के माध्यम से सुन्दर अभिव्यंजना दी गई है। वधू के घर की स्त्रियों द्वारा वर की बारात का डेरा देखने

जाने का प्रसंग राजस्थान के 'जला' गीतों में देखने को मिलता है। परिवार में बालक जन्म के अवसर पर गाये जाने वाले गीत 'जच्चा' कहे जाते हैं। इनमें साधारणतः गर्भिणी की प्रशंसा, वंशवृद्धि का उल्लास और शिशु के लिए मंगलकामना की जाती है।

त्योहार व पर्व–गीतों में गणगौर, तीज, होली, राखी, मकर संक्रान्ति, दीपावली आदि के अवसर पर गाये जाने वाले अनेक गीत हैं। गणगौर व तीज राजस्थान के विशेष पर्व हैं और अत्यधिक उल्लास–उमंग से मनाये जाते हैं। गणगौर का पर्व होलिका दहन के पश्चात् चैत्रमास में 16 दिन तक कुँवारी कन्याओं व सधवा स्त्रियों द्वारा अनुष्ठानपूर्वक आयोजित किया जाता है। लड़कियाँ प्रातः काल की वेला में जलाशय से जल भरकर लाती है और जल एवं फूलों से गणगौर की पूजा करके अपने भावी जीवन में सुख–सौन्दर्य की कामना करती हैं। गौर पार्वती का ही रूप है जिसे पूजकर सुहागन स्त्रियाँ अखण्ड सौभाग्य की कामना करती है। गणगौर का प्रसिद्ध गीत इस प्रकार है।

खेलण दो गणगौर भँवर म्हानें खेलण दो गणगौर,
म्हारी सखियाँ जोवे बाट हो भँवर म्हाने खेलण दो गणगौर।

गणगौर व तीज के समय घूमर नृत्य राजस्थान की पहचान बन गया है। रंग–बिरंगे लहरियों से सुसज्जित स्त्रियों का घूमर नृत्य देखते ही बनता है, गीत इस प्रकार है –

म्हारी घूमर छे नखराली ए मा गोरी
घूमर रमवा म्हे जास्याँ ।

शेखावाटी एवं बीकानेर क्षेत्र के होलिकात्सव के गीत अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। गीदड़ एवं गैर नृत्यों के साथ होलिकात्सव के गीत गाया जाना सर्वविदित है।

लोक देवताओं में तेजाजी, देवजी, पाबूजी, गोगाजी आदि ऐसे ऐतिहासिक वीर पुरुष माने जाते हैं, जिन्होंने परमार्थ के लिए अपना सब कुछ न्योछावर कर दिया। अतः उनके गुणगान करते हुए अनेक भजन–गीत तन्मयता से गाये जाते हैं। मीरां के भजनों की लोकप्रियता से सभी परिचित हैं। भरतपुर क्षेत्र में ब्रज संस्कृति के प्रभाव से कृष्ण लीलाओं के गान और करौली क्षेत्र में केलादेवी भक्ति के लांगुरिया गीत लोकप्रिय हैं। लोक गीतों के सम्बन्ध में यह खोजपरक तथ्य है कि इन गेय पदों के द्वारा अनपढ़ ग्राम्य जन भी ज्ञान के गूढ़ रहस्यों एवं गीत में समाहित संगीत लहरियों को सहज ही हृदयगंम कर लेता हैं।

स्वर, ताल और लय में बद्ध होकर लोकसंगीत की धुनें मिलन–विरह, हास्य–व्यंग, रोष–भय, घृणा–प्रेम, राग–वैराग्य, वीरता–भीरुता आदि सूक्ष्म मनोभावों की मनोहारी अभिव्यक्ति करती है।

लोक संगीत में पेशेवर जातियों के अन्तर्गत लंगा जाति की विशिष्ट पहचान दूर–दराज तक है। बाड़मेर, जैसलमेर, जोधपुर आदि जिलों से सम्बद्ध लंगा जाति के लोकनायक अपने पारम्परिक वाद्यों के साथ प्रस्तुति देते हैं तो श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते हैं। सारंगी से मिलता–जुलता वाद्य कामायचा लंगाओं का प्रमुख वाद्य है। लंगा मांड शैली में अपने गीतों की प्रस्तुति देते हैं। लंगाओं का 'निंबूड़ा' तो अब इनकी पहचान से जुड़ गया है। स्वरों का सहज उतार–चढ़ाव और ताल की गूढ़ शिक्षा इन कलाकारों की धरोहर है।

राजस्थान में मांड गायन लोक संगीत की पहचान है। मांड शैली की सुविख्यात लोकनायिका पद्मश्री अल्लाह जिल्लाई बाई की आवाज से गूँजा 'पधारों म्हारे देस' पर्यटकों को खुला निमंत्रण है।

लोक संगीत की अन्य पेशेवर जातियों में ढोली, मिरासी, भोपा, जोगी, भवई मांगणियार, रावल, कंजर आदि प्रमुख हैं। संगीत द्वारा जीविकोपार्जन का उद्देश्य होने के कारण ही इन जातियों ने अपने गीतों को आकर्षक रूप प्रदान किया। शास्त्रीय संगीत की भाँति इन पेशेवर गायकों के गायन में स्थायी व अन्तरों का स्वरूप नहीं दिखायी देता

बल्कि ख्याल और झूमरी की तरह इन्हें छोटी–छोटी तानों, मुरकियों एवं विशेष झटकों से भी सजाया जाता है। स्वर माधुर्य के कारण राजस्थान के लोक संगीत एवं लोक वाद्यों का प्रयोग फिल्मी जगत एवं छोटे पर्दे के कार्यक्रमों में भी देखने को मिलता है।

हस्त शिल्प

राजस्थान में मानव सभ्यता के काल से ही हस्तशिल्प के प्रमाण मिलते हैं, जिनमें तीसरी शताब्दी ई. पू. के कलात्मक स्तम्भ शामिल हैं। मानव के विकास की यात्रा के साथ ही राजस्थान में हस्तशिल्प फला–फूला है। इतना ही नहीं, अपने बहुविविध स्वरूप के कारण राजस्थान को हस्तशिल्प का संग्रहालय कहा जा सकता है। प्राचीन ऐतिहासिक स्थलों जैसे कालीबंगा, आहड़ आदि के पुरातात्त्विक अवशेषों से तत्कालीन हस्तशिल्प जैसे मिट्टी की चूड़ियाँ, पॉलिश किये गये चमकदार बर्तन, औजार, वस्त्राभूषण आदि पर प्रकाश पड़ता है। आज राजस्थान के हस्तशिल्प ने अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप प्राप्त कर लिया है।

राजस्थान की बुनाई, छपाई, रंगाई, जवाहरात की कटाई, मीनाकारी, आभूषण निर्माण, बंधेज, गलीचा एवं नमदा की बुनाई, संगमरमर, हाथीदाँत, चंदन, लाख व काष्ठ के कलात्मक कार्य, चीनी मिट्टी का काम, धातु की कारीगरी, चमड़े की जूतियाँ व थैले, पुस्तकों पर कलात्मक लेखन, चूड़ियाँ निर्माण कार्य, टेराकोटा (मिट्टी से बनी वस्तुएँ जैसे मूर्तियाँ बर्तनादि) इत्यादि प्रसिद्ध है। राजस्थान में प्रचलित हस्तशिल्पों का परिचय निम्नांकित है :

मंसूरिया साड़ी

कोटा से 15 किमी. दूर बुनकरों का एक गाँव है, कैथून। कैथून के बुनकरों ने चौकोर बुनाई जाने वाली सादी साड़ी को अनेक रंगों और आकर्षक डिजाइनों में बुना है तथा सूती धागे के साथ रेशमी धागे, और जरी का प्रयोग करके साड़ी की अलग ही डिजाइन बनाई है। साड़ी का काम बुनकर अपने घर में खड्डी लगाकर करते है। पहले सूत का ताना बुना जाता है। फिर सूत या रेशम को चरखे पर लपेटकर लच्छियाँ बनाई जाती हैं। धागे को लकड़ियों की गिल्लियों पर लपेटा जाता है, फिर ताना–बाना डालकर बुनने का काम किया जाता है। वर्तमान में कोटा डोरिया साड़ी का निर्यात भी विदेशों में किया जा रहा है।

गलीचे और दरियाँ

जयपुर और टोंक का गलीचा उद्योग प्रसिद्ध है। सूत और ऊन के ताने–बाने लगाकर लकड़ी के लूम पर गलीचे की बुनाई की जाती है। बुनाई में जितना बारीक धागा और गाँठें होती हैं, गलीचा उतना ही खूबसूरत एवं मजबूत होता है। जयपुर के गलीचे गहरे रंग, डिजाइन और शिल्प कौशल की दृष्टि से प्रसिद्ध है। गलीचा महंगा होने के कारण आजकल दरियों का प्रचलन अधिक है। जयपुर और बीकानेर की जेलों में दरियाँ बनाई जाती हैं। जोधपुर, नागौर, टोंक, बाड़मेर, भीलवाड़ा, शाहपुरा, केकड़ी और मालपुरा दरी–निर्माण के मुख्य केन्द्र हैं। जोधपुर जिले के सालावास गाँव की दरियाँ बड़ी प्रसिद्ध है।

ब्ल्यू पॉटरी

जयपुर में ब्ल्यू पॉटरी निर्माण की शुरुआत का श्रेय महाराजा रामसिंह (1835–80 ई.) को है। उन्होंने चूड़ामन और कालू कुम्हार को पॉटरी का काम सीखने दिल्ली भेजा और प्रशिक्षित होने पर उन्होंने जयपुर में इस हुनर की शुरुआत की। बाद में कृपालसिंह शेखावत ने इस कला को देश–विदेश में पहचान दिलाई। ब्ल्यू पॉटरी के निर्माण के लिए पहले बर्तनों पर चित्रकारी की जाती है, फिर इन पर एक विशेष घोल चढ़ाया जाता है। यह घोल हरा काँच, कथीर, साजी, क्वार्ट्ज पाउडर और मुल्तानी मिट्टी से मिलाकर बनाया जाता है। चित्रकारी का प्रारूप तो बर्तनों पर पहले ही हाथ से बना लेते हैं, किन्तु यदि लाइनें खीचनीं हों तो चाक, पर रखकर ही लाइनें खींची जाती है। ब्ल्यू पॉटरी के रंगों में नीला, हरा, मटियाला और ताम्बाई रंग ही विशेष रूप से काम में लेते हैं।

बादले

जोधपुर के पानी भरने के बर्तन जो मैटल के बने होते हैं और जिन पर कपड़े या चमड़े की परत चढ़ाई जाती है, बादले कहलाते हैं। खूबसूरत रंगों और डिजाइन में बने बादले आकर्षक होते है।

टेराकोटा

पक्की मिट्टी का उपयोग करके मूर्तियाँ आदि बनाने की कला को टेराकोटा के नाम से जाना जाता है। लोक देवताओं की पूजा के साथ–साथ मिट्टी के खिलौने व मूर्तियाँ बनाने का काम पूरे प्रदेश में वर्षों से चल रहा है। नाथद्वारा के पास स्थित मोलेला गाँव इस कला का प्रमुख केन्द्र बना हुआ है। इसी प्रकार हरजी गाँव (जालौर) के कुम्हार मामाजी के घोड़े बनाते हैं। मोलेला तथा हरजी दोनों ही स्थानों में कुम्हार मिट्टी में गधे की लीद मिलाकर मूर्तियाँ बनाते हैं व उन्हें उच्च ताप पर पकाते हैं।

जड़ाई

जयपुर कीमती और अर्द्ध–कीमती पत्थरों की कटाई और जड़ाई के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ नगों की कटाई व जड़ाई पर मुगल और राजपूत शैली का प्रभाव है। अधिकतर जड़ाई का काम मुस्लिम जाति के कारीगरों के हाथ में है। इनका कौशल प्रशंसनीय है।

थेवा कला

थेवा कला काँच पर सोने का सूक्ष्म चित्रांकन है। काँच पर सोने की अत्यन्त बारीक, कमनीय एवं कलात्मक कारीगरी को 'थेवा' कहा जाता है। इसके लिए रंगीन बेल्जियम काँच का प्रयोग किया जाता है। थेवा के लिए चित्रकारी का ज्ञान आवश्यक होता है। अलग–अलग रंगों के काँच पर सोने की चित्रकारी इस कला का आकर्षण है। थेवा कला में नारी श्रृंगार के आभूषण एवं अन्य उपयोगी वस्तुएँ बनायी जाती है। विभिन्न देवी–देवताओं की प्रतिमाएँ भी थेवा कला से अलंकृत की जाती हैं। थेवा कला से अलंकृत आभूषणों का मूल्य धातु का न होकर कलाकार की कला का होता है। इस कला में सोना कम एवं मेहनत अधिक होती है। थेवा कला विश्व में केवल प्रतापगढ़ तक ही सीमित है।

दाबू प्रिन्ट

चित्तौड़गढ़ जिले का आकोला गाँव दाबू प्रिन्ट के लिए प्रसिद्ध है। रंगाई–छपाई में जिस स्थान पर रंग नहीं चढ़ाना हो, उसे लई या लुगदी से दबा देते हैं। यही लुगदी या लई जैसा पदार्थ 'दाबू' कहलाता है, क्योंकि यह कपड़े के उस स्थान को दबा देता है, जहाँ रंग नहीं चढ़ाना होता है। सवाई माधोपुर में मोम का, बालोतरा में मिट्टी का तथा सांगानेर व बगरू में गेहूँ के बींधण का दाबू लगाया जाता है। आकोला में रंगाई–छपाई के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ हैं। पानी, मिट्टी और वनस्पति जैसी आवश्यकताएँ स्थानीय रूप से उपलब्ध हैं आकोला के दाबू प्रिन्ट के बेडशीट, कपड़ा, चून्दड़ी व फेंटिया देश–विदेश में प्रसिद्ध हैं। चून्दड़ी एवं फेंटिया ग्रामीण क्षेत्रों में पसंद किया जाता है।

बंधेज

जयपुर का बंधेज प्रसिद्ध है। मनपसंद रंगों के डिजाइन प्राप्त करने के लिए कपड़े को बाँधकर फिर रंगा जाता है। बंधेज खोलने पर तरह–तरह के डिजाइन बन जाते है। यह कला 'बांधों और रंगों' (Tie & Die) के नाम से प्रसिद्ध है। राज्य में अनेक प्रकार के बंधेज प्रचलित हैं। चून्दरी और साफे पर बन्धेज का कार्य लोकप्रिय है।

चित्तौड़ में जाझम की छपाई की जाती है, जो पूरे राज्य में प्रसिद्ध है। यहीं गाड़िया लोहारों के लिए घाघरे–ओढ़नी भी तैयार किए जाते हैं। गोटे का काम जयपुर और खंडेला (सीकर) का प्रसिद्ध है। जरी के काम में भी जयपुर की पहचान है।

ऊस्तां कला

ऊँट की खाल पर स्वर्ण मीनाकारी और मुनव्वत का

कार्य 'ऊस्तां कला' के नाम से जाना जाता है। इस कला का विकास पदम्श्री से सम्मानित बीकानेर के हिस्सामुद्दीन उस्तां ने किया। ऊस्तां द्वारा बनाई गई कलाकृतियाँ देश–विदेश में प्रसिद्ध हैं। ऊँट की खाल से बनी कुप्पियों पर स्वर्ण दुर्लभ मीनाकारी का कलात्मक कार्य आकर्षक और मनमोह लेने वाला होता है। शीशियों, कुप्पियों, आइनों, डिब्बों, मिट्टी की सुराहियों पर यह कला उकेरी जाती है। बीकानेर का 'कैमल हाइड ट्रेनिंग सेंटर' ऊस्तां कला का प्रशिक्षण संस्थान है।

मीनाकारी

ज्वैलरी पर मीनाकारी के लिए जयपुर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विशिष्ट पहचान रखता है। जयपुर में मीनाकारी की कला महाराजा मानसिंह प्रथम (1589–1614 ई.) द्वारा लाहौर से लाई गई। परम्परागत रूप से सोने पर मीनाकारी के लिए काले, नीले, गहरे, पीले, नारंगी और गुलाबी रंग का प्रयोग किया जाता है। लाल रंग बनाने में जयपुर के मीनाकार कुशल हैं। मीनाकारी का कार्य मूल्यवान, अर्द्धमूल्यवान रत्नों तथा सोने–चांदी के आभूषणों पर किया जाता है। मीनाकारी में फूल–पत्ती, मोर आदि का अंकन प्रायः किया जाता है। सोने के आभूषणों के अतिरिक्त चाँदी के खिलौनों व आभूषणों पर भी मीनाकारी की जाती है। नाथद्वारा भी मीनाकारी का प्रसिद्ध केन्द्र है। कोटा के रेतवाली क्षेत्र में कांच पर विभिन्न रंगों से मीनाकारी का काम किया जाता है। बीकानेर और प्रतापगढ़ में भी यह काम दक्षता के साथ किया जाता है।

लाख का काम

सवाई माधोपुर, लक्ष्मणगढ़ (सीकर) व इन्द्रगढ़ (बून्दी) लकड़ी के खिलौने व अन्य वस्तुओं पर लाख के काम के लिए प्रसिद्ध हैं। लाख से चूड़ियाँ, चूड़े, पशु–पक्षी, पेन्सिलें, पैन, काँच जड़े लाख के खिलौने, बिछिया आदि तैयार किए जाते हैं।

रंगाई–छपाई

सांगानेर में छपाई का कार्य चूनड़ी, दुपट्टा, गमछा, साफा, जाजम, तकिया आदि पर किया जाता है। सांगानेरी छपाई लट्ठा या मलमल पर की जाती है। तैयार कपड़े पर विभिन्न डिजाइनों की छपाई की जाती है। इन छपे वस्त्रों को नदी में धोया जाता है। सांगानेर के पास अमानीशाह के नाले से अप्रत्यक्ष रूप से जुड़ी प्रिन्ट में प्रायः काला और लाल दो रंग ही ज्यादा काम आते है। सांगानेरी प्रिन्ट को विदेशों में लोकप्रिय बनाने का श्रेय मुन्नालाल गोयल को है।

बगरु (जयपुर) की छपाई आजकल काफी लोकप्रिय है। यह प्रिन्ट सांगानेरी प्रिंट की ही तरह है परन्तु सांगानेरी छापे में आंगन सफेद होता है, जबकि बगरु प्रिन्ट का आंगन हरापन लिए होता है। बगरु की छपाई में रासायनिक रंगों का प्रयोग नहीं होता है।

बाड़मेर अजरक प्रिन्ट के लिए प्रसिद्ध है। अजरक प्रिंट में अधिकांश लाल और नीले रंगों से छपाई कार्य होता है। रंगाई–छपाई की दृष्टि से महिलाओं के लिए जोधपुर की चुनरी तथा जयपुर का लहरिया प्रसिद्ध है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुविकल्पात्मक प्रश्न

1. गरासिया जनजाति का प्रमुख नृत्य कौन सा है ?

   (अ) घुड़ला नृत्य (ब) वालर नृत्य

   (स) गैर नृत्य (द) गवरी नृत्य

2. किस क्षेत्र की रम्मतें अधिक प्रसिद्ध हैं ?

   (अ) जालौर (ब) जोधपुर

   (स) बीकानेर (द) नागौर

3. तलवार की धार पर नाचना, काँच के टुकड़ों पर नाचना, जमीन से मुँह द्वारा रूमाल उठाना किस नृत्य की विशेषता है ?

   (अ) ईडाणी (ब) शंकरिया

   (स) भवाई (द) पणिहारी

4. जानकी लाल भांड किस कला के प्रसिद्ध कलाकार हैं ?

(अ) स्वांग (ब) फड़

(स) तमाशा (द) ख्याल

5. भैरुजी के भोपे प्रमुख रूप से किस वाद्य यंत्र को बजाते हैं ?

(अ) मशक (ब) भपंग

(स) मंजीरा (द) मादल

6. फड़ बाँचते समय किस वाद्य यंत्र का प्रयोग किया जाता है ?

(अ) रावणहत्था (ब) कामायचा

(स) चिंकारा (द) अलगोजा

7. थेवा कला कहाँ की प्रसिद्ध है ?

(अ) प्रतापगढ़ (ब) कुशलगढ़

(स) माण्डलगढ़ (द) बसन्तगढ़

8. राज्य में रत्न उद्योग के लिए प्रसिद्ध केन्द्र है –

(अ) जयपुर (ब) जोधपुर

(स) उदयपुर (द) राजसमन्द

9. 'रम्मत' क्या है ?

(अ) लोकनाट्य (ब) लोक वाद्य

(स) लोक गीत (द) लोक शिल्प

10. ब्ल्यू पोटरी कला कहाँ की प्रसिद्ध है ?

(अ) किशनगढ़ (ब) जयपुर

(स) बालोतरा (द) अकोला

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. राजस्थान के चार लोक नृत्यों के नाम बताइये ?
2. तेरहताली नृत्य के नामकरण को स्पष्ट कीजिये ?
3. 'ख्याल' क्या है ?
4. फड़ में सामान्यतः किन लोक देवी–देवताओं का चित्रण मिलता है ?
5. ऊस्ता कला के दो प्रमुख बिन्दु बताइये।
6. राजस्थान के प्रसिद्ध त्योहार तीज एवं गणगौर पर किये जाने वाले नृत्य के दौरान गाये जाने वाले गीत के बोल बताइये।

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. राजस्थान में रंगाई–छपाई के क्षेत्र में सांगानेर, बगरू एवं बाड़मेर का क्या महत्त्व है ?
2. थेवा कला को स्पष्ट कीजिये।
3. मोलेला क्यों प्रसिद्ध है ?
4. घूमर नृत्य की विशेषताएँ बताइये।
5. निम्न पर टिप्पणियाँ लिखिये –

   (i) गवरी नृत्य (ii) भवाई नृत्य

   (iii) रावण हत्था (iv) रम्मत

निबन्धात्मक प्रश्न

1. राजस्थान में प्रचलित लोक नाट्य कला का परिचय देते हुए चार प्रमुख लोक नाट्य कला का विस्तार में वर्णन कीजिये।
2. 'राजस्थान का हस्तशिल्प ऐतिहासिक एवं बहुविविध स्वरूप लिये हुए है।' कथन को स्पष्ट कीजिये।

□□□

अध्याय–4

राजस्थान के प्राकृतिक संसाधन एवं उनका संरक्षण

मानव जीवन का अस्तित्व, प्रगति एवं विकास संसाधनों पर निर्भर है। आदिकाल से मनुष्य प्रकृति से विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त कर अपनी आवश्यकताओं को पूर्ण करता आ रहा है। प्रकृति ने अनेक प्रकार के जैविक तथा अजैविक पदार्थ दिये हैं उन्हें मानव अपने ज्ञान एवं तकनीक से अपने उपयोग में लेता है। वे सभी प्रकृति प्रदत्त पदार्थ जिन्हें मानव अपने उपयोग में लेता है, वे **'प्राकृतिक संसाधन'** **(Natural Resources)** कहलाते हैं। प्रकृति अथवा प्राकृतिक वातावरण न केवल इन संसाधनों को उत्पन्न करती है अपितु उन्हें निरन्तर बनाये रखने का भी कार्य करती है। किन्तु जब इनका अत्यधिक शोषण होने लगता है तब इनके समाप्त होने का संकट आ जाता है। इसी कारण इनके संरक्षण की आवश्यकता होती है, जिससे न केवल वर्तमान की आवश्यकता पूर्ण हो अपितु ये संसाधन भविष्य के लिये भी बचे रहें।

प्रस्तुत अध्याय में राजस्थान के प्राकृतिक संसाधनों के अन्तर्गत वन, मृदा, जल, वन्य जीव एवं खनिज संसाधनों का राज्य में वर्तमान स्वरूप एवं उनके संरक्षण का संक्षिप्त विवेचन किया जा रहा है।

वन संसाधन

वन अथवा प्राकृतिक वनस्पति प्रकृति प्रदत्त सम्पदा है जो एक ओर मानव के अनेक उपयोग में आते हैं तो दूसरी ओर पर्यावरण के सन्तुलन को बनाये रखने में सहायक होते हैं। वनों से अनेक प्रकार की उपयोगी वस्तुएँ जैसे इमारती लकड़ी, जलाऊ लकड़ी, लकड़ी का कोयला, प्लाइवुड, बांस, बेंत, लुग्दी, शहद, सेल्योलाज, पशुओं का चारा, गोंद, रबर, लाख, कत्था, रेशेदार पदार्थ, अनेक प्रकार की औषधियां आदि तो प्राप्त होती है साथ में ये अनेक जीव–जन्तुओं एवं वनस्पति समूहों को प्रश्रय देकर उनकी अनेक प्रजातियों को नष्ट होने से बचाती है।

राजस्थान की प्राकृतिक संरचना इस प्रकार की है कि यहाँ भारत के अन्य राज्यों की तुलना में वनों का विस्तार अपेक्षाकृत कम है। राजस्थान में वन क्षेत्र का विस्तार 32,701 वर्ग किलो मीटर के क्षेत्र है जो राज्य के कुल क्षेत्र का 9.55 प्रतिशत है। यह प्रतिशत राष्ट्रीय वन नीति द्वारा निर्धारित 33.33 प्रतिशत से बहुत कम है। राज्य में वन क्षेत्रों के सीमित विस्तार का कारण यहाँ कम वर्षा होना, उच्च तापमान, मरूस्थली क्षेत्रों का अधिक विस्तार, अनियन्त्रित पशुचारण तथा मानव द्वारा किया जाने वाला वनोन्मूलन है। किन्तु इससे यह तात्पर्य नहीं कि यहाँ वनों का क्षेत्र कम हो रहा है। अपितु 15 वर्षों में यहाँ के वन क्षेत्र में वृद्धि हुई है। वर्ष 1990–91 में जहाँ राज्य में वन क्षेत्र का प्रतिशत 6.87 था वह वर्ष 31 मार्च 2003 में 9.55 प्रतिशत हो गया।

प्रदेश में सर्वाधिक वन क्षेत्र उदयपुर जिले में 4141 वर्ग किमी है। उसके बाद बारां जिले में है जिसका विस्तार 2239 वर्ग किमी है। इसके पश्चात् चितोड़गढ़ एवं करौली जिलें है। सबसे कम वन क्षेत्र चूरू जिले में है, जिसका विस्तार 71 वर्ग किमी में है। राज्य के 500 वर्ग किमी से कम वन क्षेत्र वाले जिले हैं : झुन्झुनू, जोधपुर, दौसा, भरतपुर, हनुमानगढ़, जालोर, नागौर, टोंक एवं राजसमन्द।

प्रशासनिक दृष्टि से राज्य के वनों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया गया है, ये हैं –

(i) **आरक्षित वन (Reserved Forest)** – जिन पर पूर्ण सरकारी नियंत्रण होता है।

(ii) **सुरक्षित वन (Protected Forest)** – इनमें लकड़ी काटने, पशुचारण की सीमित सुविधा दी जाती है तथा इनको संरक्षित रखने का भी प्रयत्न किया जाता है।

(iii) **अवर्गीकृत वन (Unclassified Forest)** – इनमें

शेष वन सम्मिलित किये जाते है, जिन पर सरकार का कोई नियंत्रण नहीं होता।

भौगोलिक दृष्टि से वनों की प्रकृति एवं उनमें उपलब्ध वनस्पति समूहों के आधार पर राजस्थान के वनों को निम्नलिखित तीन वृहत् श्रेणियों में विभक्त किया जाता है–

(i) **उष्ण कटिबंधीय कँटीले वन** – इस प्रकार के वन पश्चिमी राजस्थान के शुष्क एवं अर्द्ध–शुष्क प्रदेशों में है। इनमें काँटेदार वृक्ष एवं झाड़ियाँ प्रमुख होती है। इन वनों में खेजड़ा, रोहिड़ा, बेर, बबूल, कैर आदि के वृक्ष मिलते है। इनमें **खेजड़ा** एक बहु–उपयोगी वृक्ष है, जिसे राज्य वृक्ष का दर्जा दिया गया है।

(ii) **उष्ण–कटिबंधीय शुष्क पतझड़ वाले वन** – इस प्रकार के वन अरावली पर्वत श्रेणी के उत्तरी और पूर्वी ढालों पर विशेषकर विस्तृत है। इसके अतिरिक्त दक्षिणी एवं दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान में भी इन वनों का विस्तार है। इन वनों में धोकड़ा, गूलर, आम, बरगद, पलाश, बांस, आंवला, ओक, थोर, कैर, सेमल आदि मिलते हैं। दक्षिणी राजस्थान में सागवान की उपयोगी लकड़ी इन्हीं वनों से प्राप्त होती है।

(iii) **उप–उष्ण पर्वतीय वन** – इस प्रकार के वन राजस्थान में केवल सिरोही जिले के आबू पर्वतीय क्षेत्र में है। इन वनों में सदाबहार एवं अर्द्ध–सदाबहार वनस्पति होती है।

सामान्य रूप से राजस्थान में शुष्क सागवान वन, सालर वन, ढाक अथवा पलाश के वन, मरूस्थली वनस्पति, शुष्क पतझड़ वन तथा मिश्रित वन मिलते है। गंगानगर हनुमानगढ़ जिलों में शीशम के वृक्ष भी पर्याप्त है।

वन संसाधनों का प्राकृतिक एवं आर्थिक महत्व

वन एक प्राकृतिक संसाधन है जिनका बहुमुखी उपयोग है। वन पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी संतुलन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वनों का पर्यावरणीय महत्त्व निम्न तथ्यों से है –

(i) प्राकृतिक सुंदरता में अभिवृद्धि करते हैं।
(ii) पर्यावरण को शुद्ध रखते हैं।
(iii) जलवायु को सम बनाते हैं, तापमान में वृद्धि रोकते हैं।
(iv) आर्द्रता में वृद्धि कर वर्षा में सहायक है।
(v) जलवायु परिवर्तन को रोकते है।
(vi) मिट्टी के कटान को रोकते है।
(vii) जैव–विविधता को संरक्षित रखते हैं।

वनों का आर्थिक महत्व भी अत्यधिक है। राज्य में वनों से लगभग 45 हजार व्यक्तियों को प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रोजगार मिलता है। राजस्थान के वनों से जो मुख्य उपजें प्राप्त होती हैं वे हैं– इमारती लकड़ी (सागवान, धोकड़ा, सालर, शीशम, बबूल, आदि से), ईंधन हेतु लकड़ी और कोयला, तेंदू पत्ता (जिसका उपयोग बीड़ी बनाने में होता है), बाँस, गोंद, कत्था एवं लाख, घास, खस, महुआ एवं अनेक प्रकार की ओषधियों के स्त्रोत है। इसके अतिरिक्त वनों से आँवला, कैर, बैर, शहद, मोम, तेंदू तथा अनेक कन्दमूल प्राप्त होते है। वास्तव में वनों का उपयोग बहुमुखी है और प्राकृतिक संसाधनों में एक मूल्यवान संसाधन है।

वन संरक्षण की आवश्यकता

राजस्थान में वनों की सीमित उपलब्धता एवं उनके तीव्र गति से हो रहे विनाश के कारण निम्नांकित समस्याओं का जन्म हो रहा है–

(i) पारिस्थितिकी असंतुलन उत्पन्न होना।
(ii) वायु मण्डल में नमी धारण करने की क्षमता में कमी।
(iii) तापमान में वृद्धि।
(iv) वर्षा में कमी।
(v) मृदा अपरदन में वृद्धि।
(vi) बाढ़ प्रकोप में वृद्धि।
(vii) भूमि उर्वरता में कमी।
(viii) वन जीव–जन्तुओं की प्रजातियों का नष्ट होना।
(ix) पर्यावरण प्रदूषण में वृद्धि।
(x) वनों से प्राप्त पदार्थों का उपलब्ध न होना, आदि उपर्युक्त कारणों से वनों का राज्य में संरक्षण अति आवश्यक है।

वनों का संरक्षण एवं संवर्धन

वनों का संरक्षण अथवा उनका विकास और विस्तार वर्तमान की प्रमुख आवश्यकता है। इस दिशा में अनेक सरकारी प्रयत्न किये जा रहे है साथ में सामाजिक एवं व्यक्तिगत स्तर पर भी प्रयत्न करने की आवश्यकता है। वन संरक्षण हेतु कतिपय उपाय निम्नांकित है –

1. **नियन्त्रित एवं उचित विधि से कटाई –** वनोन्मूलन का प्रमुख कारण अनियन्त्रित कटाई है। वनों की कटाई इस प्रकार की जानी चाहिये जिससे वनों का विनाश भी न हो और लकड़ी आदि पदार्थ भी प्राप्त होते रहे। इसके लिये परिपक्व वृक्षों की कटाई, वृक्षों की शाखाओं की कटाई, के पश्चात् वृद्धि के लिये छोड़ना तथा वनों का आनुपातिक विकास आवश्यक है।

2. **वनों का आग से बचाव।**
3. **कृषि, आवास एवं अन्य विकास कार्यों हेतु वनों के विनाश पर रोक।**
4. **बांधों से वनों के जल मग्न होने से बचाव।**
5. **वनों का पर्यटन स्थलों के रूप में विकास।**
6. **वृक्षारोपण अर्थात् पुनः वन लगाना।**
7. **वनों में अनियंत्रित पशु चारण पर रोक।**
8. **वन संरक्षण में प्रशासन की सक्रीय भूमिका –** प्रशासन द्वारा ही वन संरक्षण सम्भव है क्योंकि सरकारी विभागों को ही वन संरक्षण का उत्तरदायित्व सौंपा जाता है। प्रशासन वन संरक्षण में निम्न कार्य सम्पादित कर सकता है– वन सम्बन्धित कानूनों को लागू करना, वनों का सर्वेक्षण करना, वन विकास के क्षेत्रों का निर्धारण करना, वनों को आग से बचाना, वृक्षारोपण कार्यक्रम का सफल क्रियान्वन करना, वन उत्पादनों पर सरकारी नियंत्रण, वन संरक्षण हेतु जागरूकता जागृत करना तथा प्रोत्साहन देना आदि।

9. **सामाजिक एवं स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा वन संरक्षण –** वन संरक्षण में सामाजिक एवं स्वयं सेवी संस्थाओं द्वारा जन जागृति पैदा करना, वृक्षा रोपण तथा वृक्षों की उचित देखभाल करके वन संरक्षण में महती भूमिका निभा सकती है। सरकार द्वारा चलाये जा रहे **'सामाजिक वानिकी'** एवं **'हरित राजस्थान'** कार्यक्रमों को स्वयंसेवी संस्थायें सफल बना सकती है।

10. **उचित वन प्रबन्धन –** द्वारा वन संरक्षण एवं संवर्धन किया जा सकता है। इसके लिये आवश्यक है– **वन सर्वेक्षण, वनों का वर्गीकरण, वनों का उचित आर्थिक उपयोग, वनों की प्रशासनिक व्यवस्था, पर्यटन हेतु वनों का उपयोग, सामाजिक वानिकी, वन अवबोध कार्यक्रम, वन अनुसन्धान तथा वन विकास हेतु मास्टर प्लान तैयार करना** आदि।

उपर्युक्त तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुए राजस्थान में सरकार ने वनों के संरक्षण एवं विकास के लिये अनेक प्रयत्न किये है। इसके अन्तर्गत वनोन्मूलन पर रोक, वृक्षारोपण (जिसमें अरावली वृक्षारोपण कार्यक्रम महत्त्वपूर्ण है), सामाजिक वानिकी का विस्तार, मरूस्थली क्षेत्रों में **'काजरी'** (शुष्क क्षेत्र अनुसंधान केन्द्र जो जौधपुर में स्थित है) की सहायता से उपयुक्त वृक्षों को लगाना, ग्राम्य वन सुरक्षा प्रबन्ध समितियों का गठन, वन विकास अभिकरणों का गठन, प्रकृति पर्यटन को प्रोहोत्सान तथा हाल ही में चलाये जा रहे 'हरित राजस्थान' कार्यक्रम महत्त्वपूर्ण हैं।

मृदा संसाधन

'मृदा' (Soil) जिसे सामान्य रूप से मिट्टी कहा जाता है भूमि की ऊपरी सतह होती है, जो चट्टानों के टूटने–फूटने एवं विघटन से उत्पन्न सामग्री तथा उस पर पड़े जलवायु, वनस्पति एवं जैविक प्रभावों से विकसित होती है। यह एक अनवरत प्रक्रिया का प्रतिफल होती है। इस प्रक्रिया में अनेक भौतिक एवं रासायनिक परिवर्तन होते हैं तथा उसमें जीव अंश एवं वनस्पति के अंश सम्मिलित होकर उसे एक निश्चित स्वरूप प्रदान करते है जो कृषि विकास के लिये आधार होती है, अतः यह एक प्राकृतिक संसाधन है।

राजस्थान की अधिकांश मृदा जलोढ़ अर्थात् जल द्वारा बहा कर लाई गई मिट्टी एवं वातोढ़ अर्थात् वायु द्वारा जमा की गई मिट्टी है। अरावली की ढालों पर कंकड़ युक्त सतह है जबकि दक्षिणी–पूर्वी पठार के भाग में काली एवं लाल मृदा है। राजस्थान की मृदाओं का उनके उपजाऊपन,

कृषि के लिये उपयुक्तता एवं अन्य विशेषताओं के आधार पर निम्नांकित प्रकारों में विभक्त किया जाता है–

1. **जलोढ़ मृदा** – पूर्वी राजस्थान में नदियों द्वारा जमा की गई मृदा है। इसका रंग कहीं लाल, कहीं भूरा है तथा उत्पादकता की दृष्टि से यह उत्तम है।

2. **लाल और पीली मिट्टी** – यह सवाई माधोपुर, भीलवाड़ा जिलों के पश्चिमी भाग में तथा अजमेर और सिरोही जिलो में पाई जाती है। इसमें लोह अंश की प्रधानता तथा कार्बोनेट की कमी होती है।

3. **लाल–लोमी मृदा** – यह मृदा उदयपुर जिले के मध्य और दक्षिणी भाग में और डूँगरपुर में मुख्यतः मिलती है। इसमें उत्पादकता सामान्य होती है।

4. **लाल और काली मृदा** – यह भीलवाड़ा, उदयपुर के पूर्वी भाग, चित्तोड़गढ़, डूँगरपुर, बाँसवाड़ा जिलों में विस्तृत है। यह लाल मृदा मालवा की काली मिट्टी का विस्तार है। यह कपास, मक्का आदि के लिये उपयुक्त होती है।

5. **मध्यम प्रकार की काली मृदा** – यह हाड़ौती के पठार में विस्तृत है। यह गहरे भूरे रंग से काले रंग तक होती है। यह कपास, मूंगफली तथा दालों के लिये उपयुक्त होती है।

6. **रेतीली मृदा** – यह पश्चिमी राजस्थान के मरूस्थली प्रदेश में विस्तृत है। इसमें फॉस्फेट की मात्रा पर्याप्त होती है और पानी उपलब्ध होने पर अच्छी फसल देती है।

मृदा संरक्षण

मृदा किसी भी प्रदेश अथवा क्षेत्र के कृषि विकास का आधार है। सामान्यतया यह माना जाता है कि मृदा एक ऐसा संसाधन है जो कभी समाप्त नहीं होता और प्रकृति इसे संरक्षित करती रहती है। किन्तु वास्तविक सत्य इससे भिन्न है अर्थात् मृदा का निरन्तर विनाश होता रहा है। प्राकृतिक एवं मानवीय कारणों से मृदा नष्ट होती जा रही है जो एक ऐसा संकट है जिसका निराकरण यदि समय पर नहीं हुआ तो विनाश का कारण बन जायेगा। इसी कारण मृदा का संरक्षण आवश्यक है।

मृदा की सबसे बड़ी समस्या **मृदा अपरदन** (Soil Erosion) है अर्थात् जल से, वायु से अथवा सामान्य प्रक्रिया से मृदा का कटान होता जाता है। राजस्थान के मरूस्थली क्षेत्रों में वायु अपरदन की समस्या है, तो चम्बल नदी के क्षेत्रों में जल अपरदन से हजारों हैक्टेयर भूमि **'बीहड़'** में बदल गई है। भूमि की लवणता एवं भूमि का जल प्लावित होना वर्तमान में नहरी सिंचित क्षेत्रों की प्रधान समस्या है। इसी प्रकार भूमि का उपजाऊपन कम हो जाना सम्पूर्ण राज्य की समस्या है। अतः भूमि का उचित संरक्षण अति आवश्यक है।

मृदा संरक्षण की प्रमुख विधियाँ निम्नलिखित है–

1. **वनस्पति आवरण का विकास** – मृदा के कटाव को रोकने के लिये भूमि को संगठित रखना आवश्यक है। इसका सबसे सार्थक उपाय वृक्षारोपण है क्योंकि वृक्षों की जड़े भूमि को संगठित रखती है और भूमि का कटाव नहीं होता। इसके लिये संरक्षी वृक्षारोपण किया जाना आवश्यक है। हरित पेटियों का विकास एक उपयुक्त कदम है।

2. **पट्टीदार कृषि (Strip Cropping)** – विधि से फसलों को समोच्च रेखाओं पर पंक्तियों में इस प्रकार बोया जाता है कि प्रवाहित जल का वेग कम हो जाता है तथा प्रवाहित मृदा अपरदन रोधी पट्टिकाओं में जमा हो जाती है।

3. **फसल चक्रीकरण (Crop-Rotation)** – यदि एक प्रकार की फसल निरन्तर उगाई जायगी तो भूमि के अनेक रासायनिक एवं जैविक तत्व कम हो जाते है और भूमि की उर्वरा शक्ति समाप्त हो जाती है। यदि फसलों को बदल–बदल कर बोया जायगा तो भूमि की उर्वरा शक्ति बनी रहती है।

4. **पशुचारण पर नियंत्रण** – अनियन्त्रित पशुचारण भूमि कटाव का प्रमुख कारण है इसे नियन्त्रित किया जाना आवश्यक है।

5. **रासायनिक उर्वरकों का सीमित प्रयोग** – निरंतर रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से भूमि की उर्वरा शक्ति कम होने लगती है। अतः रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैविक उर्वरकों का प्रयोग उत्तम रहता है।

उपर्युक्त विधियों के अतिरिक्त **बाढ़ नियंत्रण,**

स्थानान्तरण कृषि पर प्रतिबन्ध, अवनालिया नियंत्रण, उचित भूमि उपयोग तथा **मृदा प्रबन्धन** किया जाना आवश्यक है।

जल संसाधन

जल एक ऐसा प्राकृतिक संसाधन है जिस पर केवल मानव ही नहीं अपितु वनस्पति एवं सम्पूर्ण जीव जगत निर्भर है। राजस्थान जैसे राज्य के लिये जल का महत्त्व और भी अधिक हो जाता है, क्योंकि इसका आधे से अधिक भाग शुष्क एवं अर्द्धशुष्क है, जहाँ वार्षिक वर्षा का औसत 25 से. मी. से कम है। इस प्रदेश में सूखा और अकाल सामान्य है और प्रत्येक वर्ष कुछ–न–कुछ जिले सूखे की चपेट में आ जाते है। अनेक मरूस्थली क्षेत्रों में पेयजल उपलब्ध होने में भी कठिनाई होती है। स्वतंत्रता के पश्चात् राज्य के जल संसाधनों के विकास हेतु समुचित प्रयत्न किये गये और वर्तमान में भी किये जा रहे हैं, किन्तु राज्य की प्राकृतिक परिस्थितियों, विशेषकर जलवायु की प्रतिकूलता के कारण इसमें कठिनाई आ रही है। वर्तमान में राज्य न केवल स्वयं के जल संसाधनों का उपयोग कर रहा है, अपितु पड़ौसी राज्यों से भी जल प्राप्त कर रहा है।

राजस्थान में जलापूर्ति के लिये जो जल–संसाधन उपलब्ध हैं, उनमें नदियाँ, झीलें, तालाब एवं भूमिगत जल प्रमुख हैं। राज्य के जल संसाधनों का संक्षिप्त विवेचन निम्नांकित हैं–

सतही जल संसाधन –

राजस्थान के सतही जल संसाधनों में नदियाँ, झीलें तथा तालाब प्रमुख है। ये स्त्रोत प्राकृतिक है, किन्तु इनसे नहरें निकाल कर इनके जल का व्यापक क्षेत्रों में उपयोग किया जाता है।

नदियों की दृष्टि से राजस्थान की स्थिति अन्य राज्यों की तुलना में अच्छी नहीं है। क्योंकि यहाँ नदियाँ कम है और चम्बल के अतिरिक्त कोई भी नदी वर्ष पर्यन्त प्रवाहित नहीं होती। चम्बल के अतिरिक्त अन्य सभी नदियों में जल प्रवाह सीमित है तथा वे वर्षा काल में ही प्रवाहित होती है। राज्य की प्रमुख नदियाँ – **चम्बल, बनास, लूनी, माही, बाणगंगा, बेड़च, साबरमती, गम्भीरी, सूकड़ी, काली सिन्ध, पार्वती, परवन**, **मेज** आदि हैं। इन नदियों का जल प्रयोग सीधे नदियों से तथा इन पर बनाये गये बांधों से निकाली गई नहरों के माध्यम से किया जा रहा है। राज्य में नदियों की उपलब्ध मात्रा का लगभग 40 प्रतिशत जल का ही उपयोग किया जा रहा है।

झीलें राजस्थान में जलापूर्ति का माध्यम हैं और यह सतही जल संसाधनों में महत्त्वपूर्ण है। राजस्थान में दो प्रकार की झीलें है एक खारे पानी की, दूसरी मीठे पानी की। इसमें मीठे पानी की झीलें पेय जल एवं सिंचाई हेतु जल प्रदान करती है। राज्य की प्रमुख मीठे पानी की झीलें हैं – **जयसमन्द, पिछोला, फतेहसागर** (उदयपुर), **राजसमंद** (राजसमंद), **आना सागर, पुष्कर** (अजमेर), **सिलीसेढ़** (अलवर), **कोलायत** (बीकानेर), **नवलखा झील** (बूंदी), **गोव सागर** (डूंगरपुर), **कायलाना, बालसमंद झील** (जोधपुर), **बैरठा बांध** (भरतपुर), **राजगढ़,** (जयपुर), **नक्की झील** (माउण्ट आबू, सिरोही) आदि। इसके अतिरिक्त राजस्थान में अनेक छोटी भी झीलें हैं जो जल उपलब्ध कराती है।

तालाब राजस्थान में जल का एक अच्छा स्त्रोत है जिसमें वर्षा का जल एकत्र कर उसका उपयोग सिंचाई एवं पेय जल के रूप में किया जाता है। राज्य में लगभग 450 तालाब एवं जलाशय हैं।

भू–जल संसाधन

राजस्थान के जल संसाधनों में भू–जल महत्त्वपूर्ण है और इनका उपयोग सदियों से जल प्राप्ति में किया जाता है। यद्यपि राज्य में भू–जल की उपलब्धता सीमित है और जल स्तर भी नीचा है। राज्य में अजमेर, अलवर, भीलवाड़ा, जयपुर, उदयपुर जिलों में 50 प्रतिशत से अधिक उपलब्ध भूमि जल को उपयोग में लिया जा रहा है। दूसरी ओर जैसलमेर, बीकानेर, चूरू में जल स्तर कम हो रहा है। वर्तमान में ट्यूब वैल द्वारा गहराई से भू–जल निकाल कर सिंचाई की जा रही है। राज्य में लगभग 70 प्रतिशत सिंचाई नल एवं नलकूप से की जा रही है। केन्द्रीय भू–जल विभाग के आंकड़ों के अनुसार राज्य में 88632 लाख क्यूबिक मीटर

प्रतिवर्ष भूमि जल उपलब्धता की सम्भावना है।

भू–जल का एक अन्य पहलू यह है कि तीव्र गति से हो रहे शोषण के परिणाम स्वरूप जल स्तर निरन्तर नीचे गिरता जा रहा है। भू–जल उपलब्धता एवं जल स्तर के आधार पर राज्य को 595 खण्डों में विभक्त किया गया है। इसमें 206 ब्लाक चिन्ताजनक स्थिति में है तथा इनकी संख्या निरंतर अधिक होती जा रही है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि राजस्थान में जल संसाधन सीमित है अतः उनका संरक्षण एवं उचित उपयोग अति आवश्यक है।

जल संरक्षण

राजस्थान में जल संरक्षण हेतु निम्नलिखित विधियाँ उपयोगी रहेगी–

1. **सिंचाई हेतु नवीन पद्धतियों को अपनाना –** पानी बचाने के लिये अतिआवश्यक है कि सिंचाई के लिये नवीन एवं आधुनिक तकनीक को अपनाया जाय। इसके लिये **फव्वारा** (Sprinkler) तथा **बूंद–बूंद सिंचाई** (Drip Irrigation) विधियाँ सर्वोत्तम हैं। इससे 50 प्रतिशत पानी की बचत हो सकती है। इसी प्रकार खेतों में रबर के पाइप से पानी पहुंचाने पर व्यर्थ होने वाले पानी को बचाया जा सकता है। इस दिशा में सरकार पर्याप्त प्रयास कर रही है तथा इसके लिये अनुदान भी दिया जा रहा है।

2. **भूमिगत जल का विवेकपूर्ण उपयोग –** राज्य के अनेक भागों में भूमिगत जल ही मुख्य स्त्रोत है, अतः इसका अत्यधिक दोहन न करके उचित उपयोग किया जाना चाहिए।

3. **वनस्पति विनाश पर नियंत्रण –** वनस्पति जल चक्र को चलाने में सहयोगी होती है। वनों के विनाश से सूखा पड़ता है। वन वायुमण्डल में नमी बनाये रखने में सहायक होते है तथा वर्षा में सहायक होते है। अतः वनस्पति विनाश को रोकना जल संरक्षण हेतु आवश्यक है।

4. **वर्षा जल का संचयन अर्थात् रेनवाटर हार्वेस्टिंग–** अधिकांश तथा वर्षा का जल व्यर्थ चल जाता है अतः इसका संचय आवश्यक है। इसका सबसे उत्तम उपाय है वर्षा के जल को भवनों की छत पर एकत्र कर उसे सुरक्षित रखना। रेनवाटर हर्विस्टिंग विशेषज्ञों के अनुसार इसके पांच तरीके निम्नलिखित हैं–

(अ) सीधे जमीन के अन्दर– इसमें बरसाती पानी को एक गड्ढे के जरिये सीधे भूगर्भीय भण्डार में उतार दिया जाता है।

(ब) खाई बना कर रिचार्जिंग– बड़े संस्थानों के परिसर में बाउंड्री वाल के पास बड़ी नालियाँ बनाकर जमीन के भीतर उतारा जाता है।

(स) कुओं में पानी उतारना– छत के पानी को पाइप द्वारा घर या पास स्थित कुएं में उतारा जाता है, इस तरीके कुआं रिचार्ज होता है तथा भूमिगत जल स्तर में सुधार होता है।

(द) ट्यूबवेल में पानी उतारना– एक पाइप के द्वारा छत पर जमा बरसाती पानी को सीधे ट्यूबवेल में उतारा जा सकता है।

(य) टेंक में जमा करना– छत से बरसाती पानी को सीधे किसी टेंक में जमाकर उसका उपयोग किया जा सकता है जैसा कि राजस्थान के मरूस्थली क्षेत्रों में सदियों से किया जाता रहा है।

हाल ही में राज्य सरकार ने भवनों के लिये एक नियम बनाया है जिसके अन्तर्गत 300 वर्ग मीटर या इससे अधिक क्षेत्र के आवास/प्रतिष्ठान/होटल आदि के लिये वर्षा जल संचयन अनिवार्य कर दिया है।

5. **अपिशिष्ट जल का शौधन एवं उपयोग –** नगरों एवं कस्बों में अत्यधिक मात्रा में अपशिष्ट जल व्यर्थ हो जाता है। इसे एकत्र कर शोधन किया जाय और उसका उपयोग कृषि, उद्योग आदि में किया जा सकता है।

6. **कृषि पद्धति एवं फसल प्रतिरूप में परिवर्तन –** पानी की कमी को दृष्टिगत रखते हुए राज्य में यह आवश्यक है कि शुष्क एवं अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में **शुष्क कृषि** (Dry Farming) अपनाई जाय। इसी प्रकार ऐसी फसलों का

उत्पादन किया जाय जिन्हें कम पानी की आवश्यकता होती है।

7. छोटे बाँधों, तालाबों एवं एनिकट आदि का निर्माण – द्वारा स्थानीय स्तर पर जल संग्रहण किया जा सकता है।

8. जर्जर नहरी तंत्र की मरम्मत एवं वितरिकाओं एवं नालों को पक्का करना – राज्य में पुरानी नहरों में जल रिसाव से पानी व्यर्थ होता है इनकी मरम्मत की जानी चाहिये। इसी प्रकार वितरिकाओं को पक्का कर तथा खेतों में पक्के नालों से पानी देने पर जल बचाया जा सकता है। यह कार्य जन सहयोग से सम्भव किया जा सकता है।

9. जल प्रबन्धन – जल संरक्षण हेतु जल प्रबन्ध अति आवश्यक है। इसके अन्तर्गत निम्न प्रावधान आवश्यक है –

(i) उपलब्ध जल का सर्वेक्षण
(ii) जल स्त्रोतों का उचित रख–रखाव
(iii) सिंचाई की नवीन तकनीकों का उपयोग
(iv) जल दुरूपयोग पर नियंत्रण
(v) जल प्रदूषण पर नियंत्रण
(vi) पेय जल को बचाना
(vii) जल वितरण की उचित व्यवस्था
(viii) जलोत्थान की तात्कालिक एवं दीर्घकालिन योजना तैयार करना, आदि।

10. परम्परागत जल संरक्षण विधियों का प्रयोग – राजस्थान में सदियों से जल संरक्षण किया जाता रहा है। उन परम्परागत विधियों को आज भुला दिया गया है। उन्हें पुनः विकसित करके जल संरक्षण करना आवश्यक है। इसके अन्तर्गत झीलों, तालाबों एंव कुओं का उपयोग सर्व प्रचलित है। इसके अतिरिक्त राजस्थान में प्रचलित **नाड़ी, बावड़ी, टोबा, खड़ीन, टांका या कुंडी, कुंई** आदि से जल संरक्षण परम्परागत रूप में किया जाता रहा है, इनके पुनः प्रचलन द्वारा जल संरक्षण किया जाना आवश्यक है। इस दिशा में राज्य सरकार भी वर्तमान में अत्यधिक ध्यान दे रही है।

11. झील संरक्षण योजना – इस योजना में केन्द्र सरकार ने झीलों के संरक्षण हेतु तथा उनके जल की गुणवत्ता तथा उनके सौन्दर्यकरण के लिये वित्त व्यवस्था की है। इस योजना के अन्तर्गत पिछोला, फतेहसागर, पुष्कर, आना सागर और नक्की झील हेतु अनुदान दिया है तथा अन्य प्रमुख झीलों हेतु प्रस्तावित किया गया है।

राजस्थान के लिये जल संरक्षण सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण है इसके लिये राज्य सरकार भी पर्याप्त ध्यान दे रही है। सरकार के साथ जन भागीदारी भी आवश्यक है क्योंकि जल संरक्षण का सम्बन्ध प्रत्येक व्यक्ति से है और यह अभियान तभी सफल हो सकता है जब प्रत्येक व्यक्ति अपने उत्तरदायित्व को पूर्ण करे।

वन्य जीव

वन्य जीव वनों में निवास करने वाले जीव हैं जो प्राकृतिक पर्यावरण के अभिन्न अंग है तथा जैव–विविधता के प्रतीक हैं। राजस्थान के भौगोलिक वातावरण की विविधता के कारण यहाँ वन्य जीवों में विविधता है। राज्य में एक ओर विभिन्न प्रकार के जंगली जानवर है तो दूसरी ओर शाकाहारी जीव तथा रेंगने वाले जीव तथा विविध प्रकार के पक्षी है।

मांसाहारी पशुओं में बाघ, तेंदुआ, जरख, जंगली बिल्ली, बिज्जू, भेड़िया, सियार, लोमड़ी, जंगली कुत्ता आदि हैं। **बाघ** मुख्यतया सवाई माधोपुर, धौलपुर, अलवर, करौली, कोटा, सिरोही, चित्तोड़गढ़, उदयपुर, बूंदी तथा डूँगरपुर के जंगलों में पाये जाते हैं। जब कि **चीते** सिरोही, उदयपुर, भीलवाड़ा, डूँगरपुर, करौली, प्रतापगढ़, कोटा तथा अजमेर जिलो में मिलते हैं।

शाकाहारी पशुओं में काला हिरण, चिंकारा, साँभर, नील गाय, चीतल, चौसिंधा, भालू, जंगली सूअर, खरगोश, बंदर, लंगूर प्रमुख है।

काला हिरण – भरतपुर, सिरोही, जयपुर, बाड़मेर, अजमेर, कोटा जिले में।

चिंकारा – भरतपुर, सवाई माधोपुर, जालौर, सिरोही, जयपुर, जौधपुर में।

साँभर – भरतपुर, अलवर, सवाई माधोपुर, उदयपुर, चित्तोड़गढ़, कोटा, झालावाड़, जयपुर, बाड़मेर, अजमेर, डूँगरपुर, बाँसवाड़ा में।

नील गाय – अजमेर, करौली, भरतपुर, झालावाड़, कोटा, गंगानगर, हनुमानगढ़ में।

चीतल – भरतपुर में।

राजस्थान का राज्य पक्षी **गोंडावन** है, जो दुर्लभ प्रजाति की श्रेणी में है। यह बाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर क्षेत्रों में है। इसके अतरिक्त मोर, तीतर, काला तीतर, तिजौर, बटेर, सारस, बुलबुल, नीलकंठ, बाज, गिद्ध, मैना, तोता, कबूतर, कौआ आदि अनेक पक्षी है। घना के पक्षी विहार को **पक्षियों का स्वर्ग** कहा जाता है, यहाँ का मुख्य आकर्षण प्रवासी **साइबेरियन क्रेन** है, जो यहाँ शीतकाल में आते हैं। इसी प्रकार फलौदी के निकट खींचन में **कुरजा** पक्षियों का प्रवास पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र है।

वन्य जीव संरक्षण, राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्य जीव अभयारण्य

वन्य जीव प्राकृतिक धरोहर है तथा पारिस्थितिक दृष्टि से उनका अत्यधिक महत्त्व है। वन्य जीवों की निरन्तर कमी आज विश्वव्यापी समस्या है। राजस्थान में भी वन्य जीवों की संख्या में कमी हो रही है तथा अनेक प्रजातियों के विलुप्त होने का संकट है। वन्य जीवों की कमी होने के प्रमुख कारण है। 1. वनों की कमी होना, 2. जलवायु परिवर्तन, 3. वन्य जीवों के प्राकृतिक आवासों का नष्ट होना, 4. वन्य जीवों का शिकार, 5. जल स्त्रोतों का सूखना, आदि। वन्य जीव पारिस्थितिक तन्त्र के अभिन्न अंग हैं अतः वन्य जीवों का संरक्षण आवश्यक है।

वन्य जीवों के संरक्षण हेतु राजस्थान में सर्वप्रथम 1951 में वन्यजीव एवं पक्षी संरक्षण नियम द्वारा इस दिशा में पहला कदम उठाया गया था। 1972 में भारतीय वन्य जीव संरक्षण एक्ट तथा 1986 में पर्यावरण संरक्षण एक्ट द्वारा वन्य जीवों की सुरक्षा एवं संरक्षण हेतु कानूनी प्रावधान किये गये। अनेक स्वयं सेवी संस्थाएं एवं सामाजिक संस्थाएं भी वन्य जीवों के संरक्षण में अच्छा कार्य कर रहे है। विश्नोई समाज के लोग वन्य जीवों की रक्षा हेतु प्रतिबद्ध है। वन्य जीवों के संरक्षण हेतु राज्य में सबसे महत्त्वपूर्ण कदम राष्ट्रीय उद्यान, टाइगर प्रोजेक्ट, अभयारण्य एवं सुरक्षित क्षेत्र बना कर किया गया है। इनका संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है–

रणथम्बोर राष्ट्रीय उद्यान – सवाई माधोपुर के निकट रणथम्बोर के चारों ओर के क्षेत्र में फेला यह राष्ट्रीय उद्यान बाघ संरक्षण स्थल है। यहाँ बाघ के अतरिक्त बघेरे, रीछ, सांभर, चीतल, नीलगाय आदि अनेक वन्य जीव निवास करते हैं।

केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान – भरतपुर के निकट यह एशिया में पक्षियों का सबसे बड़ा प्रजनन क्षेत्र माना जाता है। घना के नाम से विख्यात इस क्षेत्र में 113 प्रजातियों के विदेशी प्रवासी पक्षी और 392 प्रजातियों के भारतीय स्थानीय पक्षियों को हर वर्ष देखा जा सकता है। यहाँ साइबेरियन क्रेन (सफेद सारस) सर्दी में प्रवास करते हैं।

राष्ट्रीय मरू उद्यान, जैसलमेर – वर्ष 1981 में जैसलमेर में 'राष्ट्रीय मरू उद्यान' (National Desert Park) की स्थापना इस क्षेत्र की प्राकृतिक वनस्पति एवं करोड़ो वर्षों से भूमि में दबे जीवाश्मों के संरक्षण हेतु की गई। इसे **जीवाश्म उद्यान** (Fossil Park) भी कहा जाता है। यहाँ जीवाश्म एवं वनस्पति संरक्षण के अतरिक्त यहाँ चिंकारा, चौसिंधा, काला हिरण एवं गोंडावन का भी संरक्षण किया जाता है।

इसके अतिरित कोटा जिले में मुकन्दरा हिल्स को भी राष्ट्रीय उद्यान का स्तर देना स्वीकार किया गया है।

सरिस्का टाइगर प्रोजेक्ट – अलवर से 35 किमी. दूर सरिस्का नामक स्थान पर **'बाघ परियोजना'** के रूप में 'राष्ट्रीय उद्यान' का स्तर दिया गया है। यहाँ बाघ के अतिरिक्त अनेक वन्य जीव निवास करते हैं। किन्तु सरिस्का का कटु सत्य यह है कि यहाँ वर्तमान में बाघ समाप्त हो गये है। पुनः बाघों को बसाने के लिये अन्य क्षेत्रों से बाघ लाये जा रहे हैं।

वन्य जीव अभयारण्य

राजस्थान में वन्य जीवों के संरक्षण हेतु अभयारण्यों को बनाया गया है। राज्य के प्रमुख अभयारण्य हैं – **नाहरगढ़** (जयपुर), **जमवारामगढ़** (जयपुर) **तालछापर**

कृष्ण मृग (चूरू), **जयसमंद** (उदयपुर), **सीता माता** (चित्तोड़गढ़), **बस्सी** (चित्तोड़गढ), **फूलवाड़ी की नाल** (उदयपुर), **भैंसरोड़गढ़** (चित्तोड़गढ़), **सज्जनगढ़** (उदयपुर), **जवाहर सागर** (कोटा), **शेरगढ़** (बांरा), **टाडगढ़** (ब्यावर के निकट), **चम्बल** (कोटा), **रामगढ़ विषधारी** (बूंदी), **बन्ध बारेठ** (भरतपुर), **सवाई मान सिंह** (सवाई माधोपुर), **केला देवी** (करौली), **राम सागर** (धौलपुर), **आबू पर्वत** (सिरोही), **कुम्भलगढ़–राणकपुर** (उदयपुर)।

मृगवन –

राजस्थान में निम्नलिखित मृगवन हैं : **अशोक विहार मृगवन** (जयपुर), **माचिया सफारी पार्क** (जोधपुर, कायलाना झील के पास), **चित्तौड़गढ़ मृगवन, पुष्कर मृगवन, संजय उद्यान मृगवन** (शाहपुरा–जयपुर), एवं **सज्जनगढ़ मृगवन** (उदयपुर)।

आखेट निषिद्ध क्षेत्र :

वन्य जीव सुरक्षा अधिनियम 1972 की धारा 37 के अनुसार राज्य में 33 क्षेत्रों को आखेट निषिद्ध क्षेत्र घोषित किया गया है। इन क्षेत्रों में रहने वाले वन्य प्राणियों की सुरक्षा की जाती है तथा यहाँ शिकार वर्जित होता है।

राजस्थान में वन्य जीवों के संरक्षण एवं उनके आवास स्थलों को सुरक्षित रखने के लिये एक रिर्पोट तैयार की गई है तथा उसको लागू करते हुए एक कमेटी गठित की गई है। प्रदेश में वन्य जीवों का आकलन कराया जा रहा है। रणथम्बोर एवं सरिस्का बाघ परियोजना क्षेत्र को सुरक्षित रखने हेतु अनेक प्रयास किये जा रहे हैं। इस सम्बन्ध में वन्य जीव प्रबन्धन पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, विशेषकर वनों को सुरक्षित रखना, तथा वन्य जीवों के शिकार पर पूरी तरह रोक लगाना अतिआवश्यक है। वन्य जीवों की विलुप्त होती प्रजातियों का समुचित ज्ञान प्राप्त करना तथा उनके संरक्षण की व्यवस्था करके उन्हें विलुप्त होने से बचाया जा सकता है।

खनिज संसाधन

खनिज संसाधनों में राजस्थान एक समृद्ध राज्य है क्योंकि यहाँ अनेक प्रकार के खनिज उपलब्ध है। इसी कारण भूगर्भवेत्ताओं ने इसे **'खनिजों का संग्रहालय'** (Museum of Minerals) कहा है। यहाँ की प्राचीन एवं विविधतापूर्ण भूगर्भिक संरचना ने खनिज संसाधनों में भी विविधता को जन्म दिया है।

भारत में राजस्थान का खनिज उत्पादन में विशेष महत्त्व है। जेस्पार, गार्नेट, वोलस्टोनाइट और पन्ना का राजस्थान देश का एकमात्र उत्पादक राज्य है। देश में उत्पादित जस्ता का 99 प्रतिशत, जिप्सम का 93 प्रतिशत, ऐस्बस्टोस का 89 प्रतिशत, घिया पत्थर (सोप स्टोन) का 85 प्रतिशत, सीसा का 77 प्रतिशत, रॉक फास्फेट का 75 प्रतिशत, फेल्सपार का 70 प्रतिशत, बुल्फेमाइट का 50 प्रतिशत, तांबा का 36 प्रतिशत तथा अभ्रक का 22 प्रतिशत भाग राजस्थान का है। इसके अतिरिक्त इमारती पत्थर विशेषकर संगमरमर के उत्पादन में भी राजस्थान का विशेष महत्व है।

राज्य के खनिजों को तीन श्रेणियों में विभक्त किया जाता है–

1. धात्विक खनिज (Metallic Minerals)
2. अधात्विक खनिज (Non – metallic Minerals)
3. ऊर्जा उत्पादक खनिज (Power Producing Minerals)

1. धात्विक खनिज : राजस्थान के धात्विक खनिजों में **लोहा–अयस्क, मैंगनीज, तांबा, सीसा, जस्ता, चांदी, बैरेलियम, टंगस्टन** तथा **केडमियम** प्रमुख है। राज्य के धात्विक खनिजों के वितरण को मानचित्र 4.1 में प्रदर्शित किया गया है–

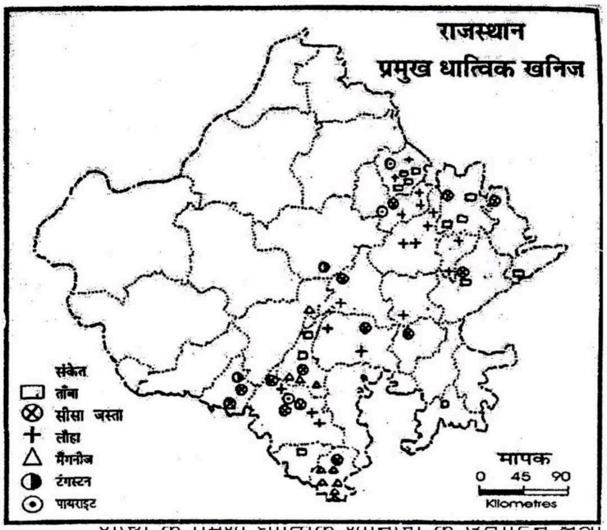

राज्य के प्रमुख धात्विक खनिजों के उत्पादन क्षेत्रों का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

मानचित्र 4.1
राजस्थान के प्रमुख धात्विक खनिज

लौह अयस्क – लौह अयस्क में राजस्थान महत्त्वपूर्ण नहीं है। राज्य में जयपुर, सीकर के कुछ क्षेत्रों में बूंदी से भीलवाड़ा, कांकरोली, उदयपुर, डूँगरपुर होती हुई बांसवाड़ा की पेटी में लोहा अयस्क के भण्डार है, किन्तु राज्य में व्यापारिक स्तर पर इसका खनन लाभकारी नहीं है।

मैंगनीज – राजस्थान में बांसवाड़ा जिले के लीलवानी, नरडिया, सिवोनिया, कालाखूंटा, सागवा, इटाला, काचला, तलवाड़ा आदि में निकाला जाता है। जयपुर, उदयपुर, और सवाई माधोपुर में भी मैंगनीज पाया जाता है।

सीसा और जस्ता – राजस्थान सीसा–जस्ता उत्पादन में अग्रणी है। सीसा–जस्ता उत्पादक क्षेत्रों में चाँदी भी मिलती है। राज्य के प्रमुख सीसा–जस्ता के साथ ही चाँदी भी मिलती है। राज्य के प्रमुख सीसा–जस्ता उत्पादक क्षेत्र दक्षिणी–पूर्वी राजस्थान में उदयपुर, राजसमंद, डूँगरपुर, बाँसवाड़ा और भीलवाड़ा में स्थित है। प्रमुख जस्ता–सीसा उत्पादक क्षेत्र है– जावर, राजपुरा–दरीबा एवं आगूचा–गुलाबपुरा।

ताँबा– ताँबा राजस्थान के कई स्थानों पर मिलता है, इनमें झुंझुनू जिले में खेतड़ी, सिंघाना तथा अलवर जिले में खो–दरीबा क्षेत्र महत्वपूर्ण हैं। खेतडी क्षेत्र में लगभग 8 करोड़ टन ताँबें के भण्डार का अनुमान है। अलवर में खो–दरीबा के अतिरिक्त थानागाजी, कुशलगढ़, सेनपरी तथा भगत का बास में भी ताँबे की खाने मिली है।

टंगस्टन– राज्य में डेगाना (नागौर जिला) क्षेत्र में टंगस्टन के भण्डार है। डेगाना स्थित खान देश में एक मात्र खान है, जहाँ टंगस्टन का उत्पादन हो रहा है।

चाँदी– राजस्थान में सीसा–जस्ता के साथ मिश्रित रूप में चाँदी का उत्पादन होता है। उदयपुर तथा भीलवाड़ा जिलों की सीसा–जस्ता खदानों से चाँदी प्राप्त होती है, वार्षिक उत्पादन लगभग तीस हजार किलोग्राम है।

अधात्विक खनिज

राजस्थान अधात्विक खनिजों के उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान रखता है, इन्हें निम्न श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है–

उर्वरक खनिज– जिप्सम, रॉक फास्फेट, पाईराइट।

बहुमूल्य पत्थर– पन्ना, तामड़ा, हीरा।

आणविक एवं विद्युत उपयोगी– अभ्रक, यूरेनियम।

ऊष्मारोधी, उच्चताप सहनीय एवं मृतिका खनिज– एस्बेटास, फेल्सपार, सिलिका सेण्ड, क्वार्ट्ज, मेगनेसाइट, वरमेकुलेट, चीनी मिट्टी, डोलोमाइट आदि।

रासायनिक खनिज– नमक, बेराइट, ग्रेनाइट, स्लेट आदि।

अन्य खनिज– घीया पत्थर, केल्साइट, स्टेलाइट आदि।

प्रमुख अधात्विक खनिजों का वितरण मानचित्र 4.2 में प्रदर्शित है–

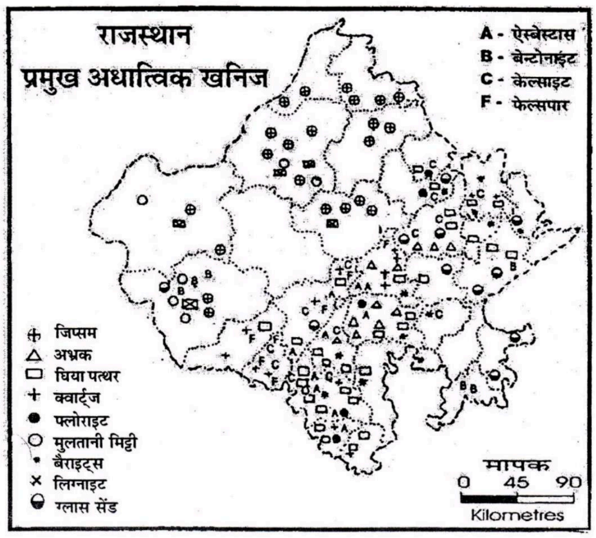

प्रमुख अधात्विक खनिजों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत है–

ऐस्बेस्टॉस– राजस्थान ऐस्बेस्टास का प्रमुख उत्पादक है और भारत का 90 प्रतिशत भाग उत्पादित करता है। ऐस्बेस्टास के प्रमुख उत्पादक जिले उदयपुर, डूँगरपुर है तथा अजमेर, उदयपुर तथा जौधपुर में सीमित उत्पादन होता है।

फेल्सपार– राजस्थान भारत का 60 प्रतिशत फेल्सपार का उत्पादन करता है। राज्य का अधिकांश फेल्सपार अजमेर जिले से प्राप्त होता है। जयपुर, पाली, टोंक, सीकर, उदयपुर, और बाँसवाड़ा में भी सीमित मात्रा में फेल्सपार मिलता है।

अभ्रक– राजस्थान में अभ्रक उत्पादन की तीन

पेटियाँ–जयपुर–टोंक पेटी, भीलवाड़ा–उदयपुर पेटी और अन्य में सीकर में तोरावाटी तथा अजमेर, राजसमंद, अलवर तथा पाली जिलों में हैं।

जिप्सम– राजस्थान भारत का 90 प्रतिशत जिप्सम उत्पादित करता है। इसके प्रमुख उत्पादक क्षेत्र है– बीकानेर, हनुमानगढ़, चूरू क्षेत्र, नागौर क्षेत्र, जैसलमेर–बाड़मेर, पाली– जौधपुर क्षेत्र हैं।

रॉक फास्फेट– राजस्थान देश का लगभग 56 प्रतिशत रॉक फास्फेट उत्पादित करता है। इसके उत्पादक जिले उदयपुर, बाँसवाड़ा, जैसलमेर और जयपुर है।

डोलोमाइट– राज्य के बाँसवाड़ा, उदयपुर और राजसमंद जिलों में प्रमुखता से तथा अलवर, झुंझुंनु, सीकर, भीलवाड़ा, नागौर जिलों में सीमित उत्पादन होता है।

घिया पत्थर– राजस्थान में देश का 90 प्रतिशत घिया पत्थर उत्पादित होता है। राज्य में राजसमंद, उदयपुर, दौसा, अजमेर, अलवर, डूँगरपूर, बाँसवाड़ा, करौली एवं भीलवाड़ा जिलों से घिया पत्थर का उत्पादन होता है।

इमारती पत्थर– राजस्थान इमारती पत्थर के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है। यहाँ का संगमरमर प्रसिद्ध है। इसके लिए मकराना भारत भर में प्रसिद्ध है। संगमरमर के अन्य उत्पादक क्षेत्र किशनगढ़, अलवर, सीकर, उदयपुर, राजसमंद, बाँसवाड़ा में है। जालौर, पाली, बूंदी, अजमेर में भी संगमरमर सीमित खनन हो रहा है।

चूना पत्थर सिराही, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, बूंदी, कोटा, जैसलमेर, बाँसवाड़ा, अजमेर, अलवर, जयपुर, नागौर और जौधपुर जिलों में मिलता है। **सेण्ड स्टोन** अर्थात **बालुआ पत्थर** जौधपुर, कोटा, बूंदी, भीलवाड़ा, जिलों में प्रमुखता से मिलता है। अन्य इमारती पत्थरों में **ग्रेनाइट, सिस्ट, क्वार्टजाइट, स्लेट, कॉजला** भी राजस्थान में मिलता है।

बहुमूल्य पत्थर

राजस्थान बहुमूल्य पत्थरों के उत्पादन के लिये भी प्रसिद्ध है। यहाँ पन्ना और तामड़ा प्रमुख रूप से उत्पादित होते हैं। **पन्ना** एक सुन्दर हरे रंग का चमकीला रत्न होता है। पन्ना मुख्यत : उदयपुर जिले के उत्तर में एक पेटी में मिलता है जिसका विस्तार देवगढ़ से कॉकरोली, राजसमंद जिले तक है। अजमेर के राजगढ़ से क्षेत्र में भी पन्ना मिलता है। **तामड़ा** भी एक बहुमूल्य पत्थर है जो लाल, गुलाबी रंग का पारदर्शी रत्न है। राजस्थान में टोंक, अजमेर, भीलवाड़ा, सीकर तथा चित्तोड़गढ़ में तामड़ा निकाला जाता है। तामड़ा उत्पादन में राजस्थान का एकाधिकार है।

अन्य अधात्विक खनिजों में राजस्थान में **केल्साइट, बेण्टोनाइट, नमक, पाइराइट** आदि का उत्पादन होता है। ऊर्जा संसाधनों में कोयला बीकानेर के पलाना में और खनिज तैल बाड़मेर, जैसलमेर में निकाला जाता है। इनका विवरण अगले अध्याय में किया जायेगा।

खनिज संरक्षण

राजस्थान में जिस गति से खनिजों का शोषण हो रहा है, वह दिन दूर नहीं, जब ये खनिज समाप्त हो जाएंगे। खनिज एक प्राकृतिक सम्पदा है, यदि इसे अनियन्त्रित और अनियोजित तरीके से निकाला गया तो यह समाप्त हो सकता है। जब एक बार खनिज समाप्त हो जाते है तो इन्हे पुनः प्राप्त नहीं किया जा सकता क्योंकि लाखों वर्षों की प्रक्रिया से खनिज अस्तित्व में आते है। अतः खनिजों का संरक्षण अति आवश्यक है। खनिज संरक्षण हेतु प्रमुख उपाय निम्नलिखित हैं–

(1) खनिज का बहुउद्देशीय उपयोग

(2) उत्खतित खनिजों से अधिकतम धातु प्राप्त करना

(3) खनिजों के विकल्पों की खोज

(4) खनिजों का नियोजित खनन

(5) धातु का बारम्बर प्रयोग

(6) गहराई तक खनन

(7) भूगर्भिक सर्वेक्षण एवं दूर संवेदन तकनीक से नए खनिजों की खोज

(8) खनिज खनन पर सरकारी नियन्त्रण

(9) उचित खनिज प्रबन्धन के अन्तर्गत निम्न कार्य किये जाने आवश्यक हैं –

(i) सर्वेक्षण

(ii) खनिज उपयोग प्राथमिकता का निर्धारण

(iii) अनियन्त्रित खनन पर रोक

(iv) खनन में उन्नत तकनीक का प्रयोग

(v) सामरिक एवं अल्प उपलब्ध खनिजों के उपयोग पर नियन्त्रण

(vi) दीर्घकालीन योजना द्वारा खनिजों के उचित उपयोग

(vii) आधुनिक तकनीकों के माध्यम से नवीन खनिज भण्डारों का पता लगाना

(viii) खनिज खनन से पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव न हो इसके लिये आवश्यक व्यवस्था करना आदि।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

(1) निम्नलिखित में प्राकृतिक संसाधन है –

(अ) प्राकृतिक वनस्पति (ब) मृदा

(स) जल (द) उपर्युक्त सभी

(2) राजस्थान में वनों के अर्न्तगत कितना प्रतिशत क्षेत्र है –

(अ) 9.54 (ब) 10.26

(स) 8.67 (द) 9.55

(3) जलोढ़ मृदा किसके द्वारा जमा की जाती है –

(अ) वायु द्वारा (ब) नदियों द्वारा

(स) जीवों द्वारा (स) लावा द्वारा

(4) राजस्थान की वर्ष भर बहने वाली नदी है –

(अ) बनास (ब) लूनी

(स) चम्बल (द) काली सिन्ध

(5) बालसमंद झील कहाँ स्थित है –

(अ) उदयपुर (ब) जोधपुर

(स) राजसमंद (द) जयपुर

(6) शुष्क कृषि हेतु उपयुक्त क्षेत्र है –

(अ) हाड़ौती का पठार

(ब) पूर्वी राजस्थान

(स) दक्षिणी राजस्थान

(स) पश्चिमी राजस्थान

(7) जल संरक्षण की परम्परागत विधि है –

(अ) खड़ीन (ब) टांका

(स) नाड़ी (द) उपर्युक्त सभी

(8) राजस्थान का राज्य पक्षी है –

(अ) सारस (ब) मोर

(स) गोंडावन (द) बुलबुल

(9) घना पक्षीविहार कहाँ स्थित है –

(अ) जयपुर (ब) भरतपुर

(स) अजमेर (द) बीकानेर

(10) जीवाश्म उद्यान कहाँ स्थित है –

(अ) नागौर (ब) जैसलमेर

(स) बाड़मेर (द) बीकानेर

(11) राजस्थान में टंगस्टन कहाँ पाया जाता है –

(अ) देबारी (ब) खेतड़ी

(स) डेगाना (द) पलाना

अतिलघूरात्मक

1. आरक्षित वन किसे कहते हैं ?
2. कौनसा वृक्ष राजस्थान का राज्य वृक्ष है ?
3. राजस्थान में सागवान कहाँ अधिक मिलता है ?
4. वनोन्मूलन किसे कहते है ?
5. उदयपुर नगर की प्रमुख झीलें कौन सी है ?
6. सरिस्का टाइगर प्रोजेक्ट कहाँ स्थित है ?
7. राज्य में संगमरमर उत्पादन का प्रसिद्ध क्षेत्र कौन सा हैं ?
8. राजस्थान में कौन से बहुमूल्य पत्थर निकलते है ?

लघू उत्तरात्मक

1. राजस्थान में कितने प्रकार के वन मिलते है ?
2. वनों का जलवायु पर प्रभाव बताइये ?
3. सामाजिक वानिकी से क्या तात्पर्य है ?
4. वन प्रबन्धन से क्या तात्पर्य है ?
5. 'हरित राजस्थान' कार्यक्रम से क्या तात्पर्य है ?
6. मृदा अपरदन किसे कहते है ?
7. राजस्थान में जल संसाधन की परम्परागत चार विधियों का नाम लिखिये ?
8. सिंचाई की पानी बचाते हुए कौन सी विधि उपयुक्त होती है ?
9. राजस्थान में वर्षा जल संचयन क्यों आवश्यक है ?
10. राजस्थान के राष्ट्रीय उद्यानों के नाम लिखिए ?
11. राजस्थान को खनिजों का संग्रहालय क्यों कहा जाता है ?

निबन्धात्मक

1. वनों का प्राकृतिक एवं आर्थिक महत्व स्पष्ट करते हुए इनके संरक्षण की आवश्यकता का विवेचन कीजिये।
2. वन संरक्षण एवं संवर्धन की विधियों का वर्णन कीजिये।
3. राजस्थान के मृदा संसाधनों का वर्णन कीजिये तथा इसके संरक्षण के उपाए बताइये।
4. राजस्थान में जल संरक्षण के उपायों का विवेचन कीजिये।
5. राजस्थान के वन्य जीवों के संरक्षण हेतु किये जा रहे उपायों का वर्णन कीजिये।
6. राजस्थान के खनिज संसाधनों का वर्णन कीजिये।

□□□

अध्याय–5
राजस्थान के ऊर्जा संसाधान

ऊर्जा संसाधन अथवा ऊर्जा की आपूर्ति वर्तमान युग की प्राथमिक आवश्यकता है क्योंकि ऊर्जा की उपलब्धता ही आर्थिक विकास को नियन्त्रित एवं निर्धारित करती है। वर्तमान में उद्योग, परिवहन, कृषि से लेकर घरेलू कार्यों आदि सभी क्रियाओं में ऊर्जा की आवश्यकता होती है, क्योंकि वर्तमान युग मशीनी युग है और मशीनों को चलाने हेतु ऊर्जा की आवश्यकता होती है। ऊर्जा स्त्रोतों को दो भागों में विभक्त किया जाता है–

(1) परम्परागत ऊर्जा स्त्रोत जैसे कोयला (थर्मल पावर) खनिज तेल (पेट्रोलियम), जल विद्युत एवं अणु शक्ति।

(2) गैर–परम्परागत अथवा ऊर्जा के वैकल्पिक स्त्रोत जैसे सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, बायो गैस आदि।

राजस्थान में उपर्युक्त दोनों प्रकार के ऊर्जा स्त्रोत उपलब्ध है। राज्य में विगत दशकों में ऊर्जा संसाधनों के विकास में प्रगति की है और वर्तमान सरकार भी ऊर्जा उत्पादन वृद्धि पर अत्यधिक ध्यान दे रही है। राजस्थान के परम्परागत और गैर–परम्परागत ऊर्जा संसाधनों का संक्षिप्त विवरण द्वारा राज्य के ऊर्जा संसाधनों के वर्तमान स्वरूप एवं विकास की दिशा को स्पष्ट किया जा सकता है।

कोयला

ऊर्जा के प्राथमिक और प्रारम्भिक स्त्रोतों में कोयला प्रमुख है, जिसका उपयोग प्राचीन काल से किया जाता रहा है। वर्तमान में कोयला का उपयोग तापीय ऊर्जा (Thermal Power) उत्पादित करने में किया जाता है। राजस्थान राज्य कोयला प्राप्ति की दृष्टि से निर्धन है और यहाँ केवल **लिग्नाइट** प्रकार का कोयला प्राप्त होता है। इसे **भूरा कोयला** भी कहा जाता है। इसमें कार्बन की मात्रा 45 से 55 प्रतिशत तक होती है और यह धुआं अधिक देता है, अतः इसका औद्योगिक उपयोग नहीं होता।

राजस्थान में लिग्नाइट कोयला बीकानेर जिले के पलाना क्षेत्र में प्राप्त होता है। पलाना के अतिरिक्त खारी, चान्नेरी, गंगा सरोवर, मुंध, बरसिंगसर आदि में भी कोयला मिलता है। बीकानेर क्षेत्र में लगभग 56,000 टन कोयला प्रतिवर्ष निकाला जाता है। पलाना क्षेत्र में टर्शरी कोयला जमाव है तथा यहाँ ओसतन 6 मीटर मोटाई की कोयला परते हैं। यहाँ कोयला खनन कूपक शोधन (Sinking Shaft) विधि से निकाला जाता है, तत्पश्चात इसका शौधन कर तापीय विद्युत गृहों आदि में उपयोग हेतु भेजा जाता है। एक अनुमान के अनुसार पलाना क्षेत्र में लगभग दो करोड़ टन कोयले के सुरक्षित भण्डार का अनुमान है। भूगर्भिक सर्वेक्षणों द्वारा बीकानेर के अतिरिक्त नागौर और बाड़मेर जिलों में भी लिग्नाइट के भण्डारों का पता चला है।

तापीय विद्युत

कोयले द्वारा उत्पादित विद्युत तापीय विद्युत (Thermal Power) कहलाती है। इसके लिये उत्तम कोटि के कोयले की आवश्यकता होती है जो राजस्थान में उपलब्ध नहीं है। अतः अन्य राज्यों से मंगाना पड़ता है। राजस्थान राज्य में तापीय विद्युत उत्पादन पर पर्याप्त ध्यान दिया जा रहा है और वर्तमान में कोटा सुपर थर्मल, सूरतगढ़ ताप परियोजना और छबड़ा थर्मल से तापीय विद्युत का उत्पादन हो रहा है और अन्य कुछ योजनायें निर्माणाधीन है।

कोटा सुपर थर्मल विद्युत परियोजना का प्रारम्भ 1978 में प्रारम्भ किया गया। इसके प्रथम चरण की इकाई में जनवरी, 1983 और द्वितीय चरण की इकाई ने जुलाई, 1983 में विद्युत उत्पादन प्रारम्भ हुआ। इसकी उत्पादन

क्षमता और इकाईयों की क्षमता में क्रमिक रूप से वृद्धि की जा रही है। अगस्त, 2009 में इसकी सातवीं इकाई से उत्पादन प्रारम्भ हो गया। वर्तमान में कोटा थर्मल राज्य को 630 मेगावाट विद्युत प्रदान कर रहा है, इसमें ओर अधिक वृद्धि की सम्भावना है।

सूरतगढ़ ताप विद्युत परियोजना राजस्थान की प्रमुख विद्युत परियोजना है। इसे गंगानगर जिले के सूरतगढ़ में स्थापित किया गया है। यहाँ वर्तमान में 6 इकाईयाँ विद्युत उत्पादन कर रही है, इनमें प्रत्येक की क्षमता 250 मेगावाट है।

छबड़ा ताप विद्युत परियोजना– बारां जिले के छबड़ा कस्बे में तापीय विद्युत परियोजना की प्रथम इकाई से सितम्बर, 2009 में विद्युत उत्पादन प्रारम्भ हो गया। इसकी द्वितीय इकाई से भी विद्युत उत्पादन प्रारम्भ हो चुका है।

सतपुड़ा विद्युतगृह से भी राजस्थान को विद्युत प्राप्त होती है। यह गुजरात, मध्य प्रदेश और राजस्थान का सम्मलित ताप विद्युतगृह है। इससे राजस्थान को 125 मेगावाट विद्युत प्राप्त होती है।

तापीय विद्युत उत्पादन के प्रति राज्य सरकार सचेत है। इस दिशा में किये जा रहे विशेष प्रयत्न हैं–

- बीकानेर के पलाना क्षेत्र में 60 मेगावाट क्षमता का ताप विद्युत गृह स्थापित करना।
- बीकानेर के ही बरसिंगपुर में 420 मेगावाट क्षमता की दो इकाईयों को स्थापित करने का कार्य नेवेली लिग्लाइट द्वारा सम्पन्न किया जाना है।
- धौलपुर में थर्मल गैस पावर प्रोजक्ट का कार्य प्रगति पर है।
- सूरतगढ़ और छबड़ा ताप विद्युत गृहों को 'सुपर क्रिटिकल' बनाने की घोषणा की गई है, जिससे इनकी क्षमता दुगनी हो जायगी।
- बाँसवाड़ा में एक **सुपर क्रिटिकल** श्रेणी का ताप विद्युत उत्पादन केन्द्र का निर्माण प्रस्तावित है।
- झालावाड़ में कालीसिंध नदी पर छह–छह सौ मेगावाट की दो इकाईयों का कार्य प्रगति पर है।

खनिज तेल/पैट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस

खनिज तेल अथवा पैट्रोलियम हाइड्रोकार्बन का यौगिक है जो अवसादी शैलों में विशिष्ट स्थानों पर पाया जाता है तथा प्राकृतिक गैस के साथ निकलता है। राजस्थान के भूगार्भिक एवं चुम्बकीय सर्वेक्षण से यह तथ्य स्पष्ट हुए कि पश्चिमी राजस्थान क्षेत्र में खनिज तेल और गैस के भण्डार हो सकते हैं। इसी आधार पर यहाँ पैट्रोलियम की खोज का कार्य आरम्भ हुआ। तेल और प्राकृतिक गैस आयोग ने फ्रेन्च विशेषज्ञों की देखरेख में जैसलमेर में भारती टीबा पर खुदाई का कार्य प्रारम्भ किया। सर्वप्रथम 1996 में जैसलमेर के उत्तर–पश्चिम में मनिहारी टीबा के पास **'कमली ताल'** में गैस निकली।

जैसलमेर के अनेक क्षेत्रों में तथा बाड़मेर–सांचोर बेसिन में केयर्न कम्पनी शैल और तेल तथा प्राकृतिक गैस आयोग के संयुक्त प्रयासों से बाड़मेर के **बायतू क्षेत्र** में तेल भण्डार को खोज निकाला। इसी के साथ राजस्थान में पैट्रोलियम के भण्डारों से कच्चा खनिज तेल निकलाने का रास्ता खुल गया। अकेले बायतू कुएं से प्रतिदिन पचास हजार बैरल कच्चा तेल प्राप्त किया जा सकता है।

इस प्रकार राजस्थान, गुजरात और असम के पश्चात् पैट्रोलियम उत्पादन करने वाला तीसरा राज्य बन गया है। बायतू के अतिरिक्त **नगर, कोसलू, गुढ़ा, बाड़मेर हिल, फतहगढ़** में भी तेल के भण्डारों का पता लगाया गया है। कम्पनी का अनुमान है कि बायतू–कवास ब्लाक में 45 करोड़ से 110 करोड़ बैरल तेल का भण्डार है। इसी प्रकार गुढ़ा मलानी क्षेत्र में उच्च गुणवत्ता वाला तेल का भण्डार मिला है। विशेषज्ञों का कहना है कि बोम्बे हाई और गोदावरी बेसिन के पश्चात् इस क्षेत्र में देश का सबसे बड़ा तेल का भण्डार हो सकता है। यहाँ न केवल तेल अपितु प्राकृतिक गैस का अपूर्व भण्डार है।

वर्तमान में यहाँ केयर्न कम्पनी तथा भारत की ओ.एन.जी.सी. ने पैट्रोलियम निकालने का कार्य प्रारम्भ कर दिया है। 29 अगस्त, 2009 को प्रधानमंत्री ने मंगला प्रोसेसिंग टर्मिनल राष्ट्र को समर्पित किया। इसी के साथ यहाँ तेल

उत्पादन का कार्य प्रारम्भ हो गया। यहाँ उत्पादित तेल को गुजरात में ले जाकर शोधन किया जा रहा। यद्यपि तेल शौधक संयन्त्र (रिफायनरी) राजस्थान में लगाने के प्रयत्न भी किये जा रहे हैं।

गैस आधारित विद्युत परियोजना

राजस्थान में गैस पर आधारित विद्युत परियोजना के अन्तर्गत **अन्ता विद्युत परियोजना** प्रारम्भ की गई। बारां जिले में अन्ता नामक कस्बे में गैस आधारित बिजलीघर की प्रथम इकाई का प्रारम्भ 21 जनवरी, 1989 को किया गया। इस इकाई से 88 मेगावाट बिजली उत्पादित होती है, यद्यपि इसकी कुल क्षमता 413 मेगावाट है।

इसी प्रकार बोम्बे हाई गैस पर आधारित दो संयन्त्र की स्थापना की योजना सवाई माधोपुर और बाँसवाड़ा में है। इनमें प्रत्येक की क्षमता 400 मेगावाट होगी। केन्द्रीय सरकार ने इन योजनाओं की स्वीकृति दे दी है।

जल विद्युत

जल विद्युत वर्तमान में राजस्थान का प्रमुख ऊर्जा का स्त्रोत है। यद्यपि राज्य की प्राकृतिक परिस्थितियाँ जलविद्युत उत्पादन के लिये उपयुक्त नहीं है फिर भी राज्य में विद्युत आपूर्ति का लगभग चालीस प्रतिशत जल विद्युत से ही प्राप्त होता है। राजस्थान में जहाँ राज्य की नदियों पर बांध बना कर विद्युत उत्पादित की जाती है वहीं अन्य राज्यों से भी बिजली प्राप्त की जाती है।

राज्य की प्रमुख जल विद्युत परियोजनायें निम्नलिखित है–

1. **चम्बल परियोजना–** यह राजस्थान और मध्य प्रदेश की सामूहिक योजना है। इसके अन्तर्गत विद्युत उत्पादन के लिये तीन बाँध–**गाँधी सागर, राणा प्रताप सागर** और **जवाहर सागर** बनाये गये हैं। जिन पर स्थापित विद्युत ग्रहों से जल विद्युत उत्पादित की जाती है। गाँधी सागर पर 23 मेगावाट के चार और 27 मेगावाट का एक संयन्त्र है। राणा प्रताप सागर पर चार संयन्त्र है, जिनमें से प्रत्येक की क्षमता 43 मेगावाट है। इसी प्रकार जवाहर सागर पर 35 मेगावाट क्षमता की तीन इकाईयाँ है।

2. **भाखड़ा–नांगल योजना–** यह पंजाब में भाखड़ा–नांगल पर स्थापित परियोजना है। इससे राजस्थान के गंगानगर, हनुमानगढ़, चूरू तथा बीकानेर जिलों को विद्युत प्रदान की जाती है। इस योजना से राजस्थान का 168.5 मेगावाट विद्युत प्राप्त होती है।

3. **माही विद्युत परियोजना–** बाँसवाड़ा जिले में माही नदी पर बनाए गए बाँध पर स्थापित विद्युत गृहों से बिजली उत्पादित की जाती है। इसके प्रथम और द्वितीय इकाई से राज्य को 140 मेगावाट विद्युत उपलब्ध होती है।

4. **व्यास परियोजना–** यह राजस्थान, पंजाब और हरियाणा की संयुक्त परियोजना है। इस परियोजना की चार इकाईयाँ हैं जिनकी प्रत्येक की क्षमता 165 मेगावाट है। राजस्थान को इस परियोजना से 408 मेगावाट विद्युत प्राप्त होती है।

5. **इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना–** यद्यपि यह परियोजना मूलतः सिंचाई परियोजना है, किन्तु इस पर कई जल विद्युत गृह स्थापित किए गए है, जिनमें 22 हजार किलोवाट विद्युत उत्पादित होती है। इनमें पूंगल पर दो, सूरतगढ़ पर दो तथा चारणवाली योजना पर एक विद्युत गृह बनाया है। अनूपगढ़ शाखा पर भी तीन मिनी हाइडल प्लान्ट बनाये जा रहे है। इनमें दो पूर्ण हो चुके है।

उपर्युक्त विद्युत योजनाओं के अतिरिक्त **नर्मदा–घाटी योजना** से राजस्थान को 100 मेगावाट विद्युत प्राप्त होगी, जिसका उपयोग सिरोही, जालौर, बाड़मेर जिलों में किया जा सकेगा। राज्य में कुछ अन्य छोटी जल विद्युत योजनायें भी विचाराधीन है।

परमाणु ऊर्जा

ऊर्जा की कमी को दूर करने हेतु भारत में परमाणु ऊर्जा के विकास को प्रारम्भ किया गया। इसके लिये सर्वप्रथम तारापुर में परमाणु केन्द्र स्थापित किया गया और दूसरा केन्द्र **'राजस्थान परमाणु शक्ति परियोजना'** के रूप में प्रारम्भ किया गया। इसकी स्थापना **रावतभाटा** नामक स्थान पर की गई जो चित्तौड़गढ़ जिले में हैं। इस परियोजना का निर्माण और प्रबन्ध भारतीयों द्वारा तथा डिजाइन और प्रारम्भिक इंजीनियरिंग कार्य कनाड़ा वैज्ञानिकों द्वारा किया गया।

राजस्थान परमाणु शक्ति परियोजना भारत की ऐसी पहली परियोजना है जो प्राकृतिक यूरेनियम, भारी जल एवं प्रशीतन द्वारा चालित है। इस केन्द्र के समस्त परमाणु उपकरण, कंक्रीट के बने विशेष गोलाकार रिएक्टर भवन में रखे गये हैं जिसका अर्द्ध व्यास 42 मीटर है। इसकी पहली इकाई 11 अगस्त, 1972 को प्रारम्भ की गई जिसकी क्षमता 400 मेगावाट की है। वर्तमान में इसकी 6 इकाइयों से विद्युत उत्पादन हो रहा है तथा 7 वीं और 8 वीं इकाई का निर्माण कार्य प्रारम्भ किया जा रहा है।

राजस्थान में विद्युत उत्पादन एवं उपभोग

राजस्थान में विद्युत उत्पादन में निरन्तर वृद्धि हो रही है। राज्य में जल विद्युत तापीय विद्युत, गैस तथा परमाणु विद्युत से आपूर्ति के उपरान्त भी खपत अधिक होने के कारण अन्य राज्यों से बिजली खरीदी जाती है। राज्य में विभिन्न स्त्रोतों से विद्युत उपलब्धता तालिका 5.1 से स्पष्ट है–

तालिका 5.1 – राजस्थान में विभिन्न स्त्रोतों से विद्युत उपलब्धता (2009–10)

	उत्पादन प्रकार	कुल विद्युत उत्पादन (दस लाख किलोवाट में)
1.	विद्युत उत्पादन	
	(अ) तापीय	20128.273
	(ब) जल विद्युत	2179.803
	(स) गैस द्वारा	328.479
2.	अन्तर राज्यीय परियोजनाओं में राजस्थान का हिस्सा	
	क्रयकी गई विद्युत वितरण हेतु	21568.276
	कुल उपलब्ध विद्युत	44204.831

स्त्रोत : स्टेटिस्किल एब्स्ट्रेक्ट, राजस्थान–2011, प. 259

राजस्थान में विद्युत उपभोग में अत्यधिक वृद्धि हो रही है क्योंकि कृषि, उद्योग, व्यापारिक प्रतिष्ठान एवं घरेलू उपयोग निरन्तर अधिक होता जा रहा है।

राजस्थान के विद्युत वितरण की एक अन्य विशेषता ग्रामीण क्षेत्रों में बिजली देना है अर्थात् **ग्रामीण विद्युतिकरण** पर पर्याप्त ध्यान दिया जा रहा है। उपलब्ध आकड़ों के अनुसार राज्य के 222 नगरों के अतिरिक्त 39810 ग्रामों को विद्युत पहुँचाई गई है और प्रतिवर्ष इसमें वृद्धि हो रही है। इसका उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युत पहुँचा कर कृषि विकास को अधिक लाभ पहुँचाना है।

ऊर्जा के गैर–परम्परागत अथवा वैकल्पिक स्त्रोत

ऊर्जा की मांग में निरन्तर हो रही वृद्धि और उसके अनुपात में उपलब्धता का कम होना आज एक विश्वव्यापी समस्या है। इस ऊर्जा संकट का एक समाधान गैर परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों अर्थात् सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, ज्वारीय ऊर्जा, भू–तापीय ऊर्जा, बायो गैस आदि का विकास कर ऊर्जा आपूर्ति करता है। यह इसलिये भी आवश्यक है क्योंकि परम्परागत स्त्रोत जैसे कोयला, पेट्रोलियम, परमाणु ईंधन समाप्त होने वाले संसाधन है जिनकी आपूर्ति पुनः संभव नहीं है। जब कि गैर–परम्परागत स्त्रोत प्रकृति से परिचालित हैं जिनका उपयोग निरन्तर सम्भव है। इनकी एक विशेषता यह भी है कि इनसे पर्यावरण प्रदूषित नहीं होता।

भारत में ऊर्जा संकट को दृष्टिगत रखते हुए गैर–परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों के विकास पर ध्यान दिया जा रहा है। राजस्थान में भी इस दिशा में विशेष प्रयत्न किये जा रहे है। इसके लिये राज्य सरकार ने **'राजस्थान ऊर्जा विकास एजेन्सी' (REDA)** का गठन 21 जनवरी, 1985 में किया जिसका उद्देश्य राज्य में गैर–परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों का समन्वित विकास करना है।

राजस्थान में ऊर्जा के गैर परम्परागत स्त्रोतों के विकास की अत्यधिक सम्भावना है विशेषकर सौर ऊर्जा एवं पवन ऊर्जा की। इसके अतिरिक्त बायो गैस का उपयोग भी किया जा रहा है।

सौर ऊर्जा

सौर ऊर्जा अर्थात् सूर्य से प्राप्त ऊर्जा, ऊर्जा का एक अनवरत स्त्रोत है। राजस्थान में सौर ऊर्जा की अपार सम्भावनायें हैं क्योंकि यहाँ वर्ष भर आकाश साफ रहता है और सूर्य का ताप प्राप्त होता रहता है। सौर ऊर्जा का उपयोग घरेलू कार्यो में, कृषि एवं उद्योगों में किया जा

सकता है। प्रकाश हेतु लाइटें, कुंओं से पानी खींचने, कृषि जिन्सो को सुखाने तथा शीत भण्डारण के अतिरिक्त खाना बनाने, तथा पानी गर्म करने आदि में इसका उपयोग किया जा सकता है। इसी के साथ कुटिर उद्योग में भी ऊर्जा हेतु इसका उपयोग सम्भव है।

सौर ऊर्जा का सीधा उपयोग नहीं होता अपितु इस संग्रहित करने हेतु **'सौर संग्राहक'** का प्रयोग किया जाता है। जोधपुर में एक 30 मेगावाट सौर ताप शक्ति उत्पादक पद्धति की प्रोजेक्ट को विश्व पर्यावरण फण्ड द्वारा विकसित तकनीक से लगाया गया जिसका उद्देश्य सौर ऊर्जा की उपयोगिता प्रदर्शित करना है। सौर ऊर्जा से प्रकाश प्राप्त करने के लिये **फोटोवोल्टिक तकनीक** का उपयोग होता है। सौर ऊर्जा से प्रकाश लाइटों के साथ ऊर्जा से चलने वाले पम्प लगाये जाते हैं। राजस्थान में अनेक ग्रामीण क्षेत्रों सौर लाइटें लगाई जा चुकी हैं, इसमें सीमावर्ती क्षेत्र भी सम्मलित है। सौर ऊर्जा में मुख्य समस्या इसकी अधिक लागत है। यद्यपि इस पर सरकार अनुदान देती है फिर भी लागत अधिक होती है। राजस्थान में सौर ऊर्जा निसन्देह ऊर्जा का एक ऐसा स्त्रोत है जो भविष्य में ऊर्जा की कमी को दूर करने में सहायक होगा।

पवन ऊर्जा

पवन ऊर्जा अर्थात् हवाओं द्वारा ऊर्जा प्राप्त करना सौर ऊर्जा के समान प्रकृति प्रदत्त है तथा विश्व के अनेक भागों में और अब भारत में भी इसका सफलतापूर्वक प्रयोग अनेक स्थानों पर किया जा रहा है। इनमें राजस्थान भी एक राज्य है जहाँ पवन ऊर्जा का विकास संभव है तथा इस दिशा में महत्वपूर्ण कदम भी उठाये जा रहे है।

पवन ऊर्जा प्राप्त करने हेतु **'पवन चक्की'** (Wind Mill) लगा कर इसे वायु से परिचलित किया जाता है और उससे उत्पन्न शक्ति को एकत्र कर जनरेटर चलाने, पम्पसेट चलाने, विद्युत व्यवस्था आदि में उपयोग में लिया जाता है। राजस्थान में विशेषकर पश्चिमी राजस्थान में इसका विकास सर्वाधिक किया जा सकता है क्योंकि यहाँ वायु की गति 20 से 40 किमी. होती है। केन्द्रीय सरकार ने इन्दिरा गाँधी नहर क्षेत्र में चारे और चरागाह विकास हेतु पवन चक्कियों से ऊर्जा प्राप्त करने का कार्यक्रम बनाया है। इसी प्रकार टाटा एनर्जी रिसर्च इन्स्टीट्यूट, दिल्ली ने राजस्थान में पवन ऊर्जा विकास हेतु दीर्घकालिन योजना तैयार की है। राज्य में मार्च, 2000 में पवन ऊर्जा विद्युत उत्पादन की नीति घोषित की गई। इस नीति के तहत सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र में पवन ऊर्जा की क्रमशः 6 और 8 परियोजनाओं में विद्युत उत्पादन प्रारम्भ हो गया है।

राज्य में पवन ऊर्जा विकास की निम्न योजनायें उल्लेखनीय है–

सार्वजनिजक क्षेत्र में :

(1) जैसलमेर में 2 मेगावाट की पहली पवन ऊर्जा परियोजना अगस्त, 1999 में राजस्थान स्टेट पावर कॉरपोरेशन ने प्रारम्भ की।

(2) चित्तौड़गढ़ जिले में देवगढ़ ग्राम में जून, 2000 में 2.25 मेगावाट पवन ऊर्जा परियोजना प्रारम्भ की गई।

(3) जौधपुर जिले के फलौदी में 2.10 मेगावाट की पवन ऊर्जा परियोजना का प्रारम्भ मार्च, 2001 में किया गया।

(4) जैसलमेर के बड़ाबाग में 4.9 मेगावाट का पवन ऊर्जा संयन्त्र लगाया गया।

(5) जौधपुर के मथानिया ग्राम में 140 मेगावाट क्षमता की एकीकृत और चक्रीय परियोजना स्थापित की गई।

निजी क्षेत्र में

राजस्थान में निजी क्षेत्र में पवन ऊर्जा के लिये गेल कालानी इंडस्ट्रीज लि., इन्दौर ने तथा विशाल ग्रुप अहमदाबाद द्वारा पवन ऊर्जा संयत्र लगाकर विद्युत उत्पादन किया जा रहा है। निजी क्षेत्र में अन्य परियोजनाओं को स्थापित करने की योजना है।

बायो गैस

बायो गैस पशुओं का गोबर, खेतिहर अपशिष्ट आदि से तैयार की जाती है। इसके लिये एक साधारण संयत्र लगाया जाता है उसमें ये अपशिष्ट डाल दिये जाते है, उससे जो गैस बनती है उसका उपयोग घरेलू ईधन, लाइटें जलाने आदि तथा 100 किलोवाट तक के विद्युत उपकरण

चलाने में किया जा सकता है। राजस्थान के ग्रामीण अंचलों में जहाँ गोबर तथा कृषि अपशिष्ट बहुतायत से होता है वहाँ ये संयत्र लगाये जा रहे है। राज्य में पचास हजार से भी अधिक बायों गैस संयत्र लगाये जा चुके है। इस कार्य में केन्द्र सरकार राष्ट्रीय बायों गैस विकास योजना के अन्तर्गत राज्य सरकार को सहायता देती है।

अन्य स्त्रोत

उपर्युक्त वर्णित वैकल्पिक स्त्रोतों के अतिरिक्त नगरीय एवं कृषि अपशिष्ट से ऊर्जा प्राप्त की जा सकती है। नगरों में प्रतिदिन निकलने वाले कूड़ा–करकट से विद्युत उत्पादन हेतु पाली और बालोतरा में 25 मेगावाट क्षमता की परियोजना लगाई गई है। कोटा के निकट कृषि अपशिष्ट से विद्युत उत्पादन योजना के अतिरिक्त अनेक अन्य प्रस्तावों पर कार्य चल रहा है।

अन्त में यह कह सकते है कि राजस्थान में यद्यपि ऊर्जा स्त्रोतों की कमी है, किन्तु ऊर्जा के उचित उपयोग तथा ऊर्जा के गैर–परम्परागत स्त्रोतों का अधिक से अधिक उपयोग कर इस कमी को दूर किया जा सकता है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान में परमाणु ऊर्जा केन्द्र कहाँ स्थित है?
   (अ) सूरतगढ़ (ब) रावतभाटा
   (स) छबड़ा (द) बरसिंहपुर
2. राजस्थान का प्राकृतिक गैस पर आधारित विद्युतगृह कहाँ है?
   (अ) बरसिंगपुर (ब) पलाना
   (स) अन्ता (द) फलौदी
3. इनमें से कौन–सा तापीय विद्युत केन्द्र नहीं है?
   (अ) कोटा (ब) रावतभाटा
   (स) सूरतगढ़ (द) छबड़ा
4. पवन ऊर्जा के विकास की उपयुक्त दशायें राजस्थान के किस क्षेत्र में सर्वाधिक है?
   (अ) पश्चिमी राजस्थान (ब) पूर्वी राजस्थान
   (स) दक्षिणी राजस्थान (द) हाड़ौती क्षेत्र
5. बाड़मेर जिले के किस क्षेत्र से कच्चा खनिज तेल निकाला जा रहा है।
   (अ) बयातू (ब) बोलोत्तरा
   (स) गुढ़ामलानी (द) रामगढ़
6. राज्य में गैर–परम्परागत किस ऊर्जा स्त्रोत के विकास की सर्वाधिक सम्भावना है?
   (अ) बायो गैस (ब) सौर–ऊर्जा
   (स) पवन ऊर्जा (द) भू–तापीय ऊर्जा

अतिलघू उत्तरात्मक

1. राजस्थान में तापीय विद्युत केन्द्रों के स्थानों के नाम लिखिये।
2. बायोगैस ऊर्जा किससे प्राप्त की जाती है?
3. राजस्थान में पवन ऊर्जा की सर्वाधिक सम्भावना किस क्षेत्र में हैं?
4. चम्बल नदी पर कौन से बाँधों से विद्युत उत्पादित होती है?
5. राजस्थान का परमाणु विद्युत केन्द्र कहाँ स्थित है।

लघू उत्तरात्मक

1. राजस्थान में कोयला उत्पादन कहाँ होता है?
2. राजस्थान में तापीय विद्युत उत्पादन का विवरण दीजिये।
3. राजस्थान में पेट्रोलियम कहाँ प्राप्त होता है?
4. राजस्थान में ऊर्जा के कौन से वैकल्पिक स्त्रोत है तथा कहाँ उनका विकास हो सकता है?
5. राजस्थान किन अन्तर–राज्य विद्युत परियोजनाओं से विद्युत प्राप्त करता है?
6. राजस्थान में गैस आधारित विद्युत परियोजना का विवरण दीजिये।

निबन्धात्मक

1. राजस्थान के परम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों का संक्षिप्त विवरण दीजिये।
2. राजस्थान में विद्युत उत्पादन के क्षेत्र में हो रही प्रगति का विवरण दीजिये।
3. राजस्थान में कोयला और पेट्रोलियम संसाधनों का वर्णन कीजिये।
4. राजस्थान में तापीय एवं परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में हुई प्रगति का विवरण दीजिये।
5. राजस्थान में ऊर्जा के गैर परम्परागत स्त्रोतों के विकास एवं उनकी संभावनाओं का वर्णन कीजिए।

□□□

अध्याय – 6
राजस्थान की अर्थव्यवस्था

राजस्थान की अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है क्योंकि राज्य की कुल जनसंख्या का 75.07 प्रतिशत भाग ग्रामीण जनसंख्या है जो कृषि एवं अन्य कृषि सम्बन्धी कार्यों में संलग्न है। इसके अतिरिक्त योजनाबद्ध विकास के प्रारंभिक दशकों में राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्र का योगदान अधिक था। स्थिर कीमतों (1999–2000) पर 1987–88 में सकल राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि क्षेत्र का भाग 37.78 प्रतिशत था। उल्लेखनीय है भारत में 1991–92 से आर्थिक उदारीकरण की शुरूआत की गई। राजस्थान में भी आर्थिक उदारीकरण को आत्मसात किया गया। राजस्थान में आर्थिक उदारीकरण प्रारंभ करने के बाद यहां की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण बदलाव की प्रवृत्ति देखने को मिल रही है। अर्थव्यवस्था में सबसे महत्वपूर्ण बदलाव यह हुआ है कि राज्य के सकल घरेलू उत्पादन में कृषि क्षेत्र की तुलना में सेवा क्षेत्र का योगदान बढ़ रहा है। राजस्थान की अर्थव्यवस्था में यह बदलाव भारत की अर्थव्यवस्था में हो रहे बदलाव के अनुरूप है अर्थात् सकल राज्य घरेलू उत्पादन में कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्र का योगदान तेजी से घट रहा है। अर्थव्यवस्था में हो रहा यह बदलाव एक प्रकार से विकसित देशों की भाँति अर्थव्यवस्था को दिशा देना जैसा है। सभी विकसित देशों में सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान कम है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में अर्थव्यवस्था में कृषि की भूमिका को घटाकर और सेवा क्षेत्र की भूमिका को बढ़ाकर विकास की दर को तेज करना संभव है। भारत की अर्थव्यवस्था इस मार्ग पर कदम बढ़ा चुकी है।

राजस्थान भी भारतीय अर्थव्यवस्था की भाँति इस दिशा में आगे बढ़ता दिख रहा है। विकसित देशों में सकल घरेलू उत्पाद में कृषि की भूमिका कम होने के साथ कृषि पर निर्भर जनसंख्या कम है जबकि भारत में स्थिति विपरीत है। भारत में सकल घरेलू उत्पाद में कृषि की भूमिका तो घट रही है, किन्तु कृषि पर निर्भर जनसंख्या कम नहीं हो रही है। राजस्थान के संदर्भ में भी कमोबेश यही बात लागू होती है। सन्तोष की बात यह है कि भारत में आर्थिक उदारीकरण के दौर में कृषि क्षेत्र और ग्रामीणों को महत्व दिया जा रहा है। बजट का बड़ा भाग ग्रामीण विकास पर आवंटित किया जा रहा है। आर्थिक उदारीकरण की समृद्धि का लाभ गांवों में पहुँचाया जा रहा है। गाँवों के सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए ग्रामीण विकास और गरीबी उन्मूलन की योजनाएं क्रियान्वित की जा रही है। मननरेगा इस दिशा में उल्लेखनीय है। इससे गांवों का कायाकल्प होना शुरू हो गया है।

राजस्थान की अर्थव्यवस्था की विशेषताएं

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यहां की अर्थव्यवस्था की प्रमुख विशेषताएं निम्नांकित हैः

1. **सकल घरेलू उत्पाद में विकास क्षेत्रों की भूमिका में बदलाव** – अर्थव्यवस्था के सभी विकास शीर्षों को विशेष रूप से कृषि क्षेत्र, उद्योग क्षेत्र और सेवा क्षेत्र में बाँटा जाता है। कृषि क्षेत्र में कृषि, पशु पालन, वानिकी (forestry), मत्स्य पालन, खनन को सम्मिलित किया जाता है। उद्योग क्षेत्र में निर्माण, विनिर्माण, विद्युत, रेल्वे तथा सेवा क्षेत्र में व्यापार, होटल, जलपानगृह, बैंकिंग, बीमा, आवास, वैधानिक, व्यापारिक सेवाएं, लोक प्रशासन आदि को सम्मिलित किया जाता है।

   राजस्थान की अर्थव्यवस्था कृषि क्षेत्र से उद्योग और सेवा क्षेत्र की ओर बढ़ रही है। सकल राज्य घरेलू उत्पाद में स्थिर कीमतों पर कृषि क्षेत्र का योगदान 1991–92 में 39.21 प्रतिशत था जो 2005–06 में घटकर 27.52 प्रतिशत तथा 2011–12 में और

घटकर 22.09 प्रतिशत (अग्रिम अनुमान) रह गया। राजस्थान में 1991–92 के बाद सेवा क्षेत्र की भूमिका तेजी से बढ़ी है। सकल राज्य घरेलू उत्पाद में सेवा क्षेत्र का योगदान 1991–92 में 39.53 प्रतिशत था जो बढ़कर 2005–06 में 42.76 प्रतिशत तथा 2011–12 में और बढ़कर 48.06 प्रतिशत (अग्रिम अनुमान) हो गया। सकल राज्य घरेलू उत्पाद में उद्योग क्षेत्र का योगदान 1991–92 में 21.27 प्रतिशत से बढ़कर 2005–06 में 29.72 प्रतिशत तथा 2011–12 में 29.85 प्रतिशत (अग्रिम अनुमान) हो गया। यहां उल्लेख करना समीचीन होगा कि राजस्थान की कृषि मानसून पर निर्भर है। इसलिए सकल राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि के योगदान में उच्चावचन की प्रवृत्ति रहती है।

2. **आर्थिक विकास दर** – राजस्थान की अर्थव्यवस्था ने विकास की गति पकड़ी है। सकल राज्य घरेलू उत्पाद में वृद्धि से आर्थिक विकास दर में बढ़ोतरी हुई है। आर्थिक वृद्धि दर स्थिर कीमतों पर 2005–06 में 6.70 प्रतिशत, 2006–07 में 7.81 प्रतिशत, 2007–08 में 7.11 प्रतिशत तथा 2008–09 में 5.48 प्रतिशत थी। वर्ष 2008–09 में धीमी आर्थिक वृद्धि दर का कारण ''वैश्विक मंदी 2008'' रहा। इस वर्ष भारत की ही नहीं विकसित देशों समेत पूरी विश्व की अर्थव्यवस्था की विकास दर घटी। राज्य की आर्थिक वृद्धि दर स्थिर 2004–05 कीमतों पर 2011–12 के दौरान 5.41 प्रतिशत कम हो गयी। राजस्थान ने आर्थिक विकास की ऊँची दर विषम भौगोलिक स्थिति और अकाल व सूखे के बावजूद अर्जित की है। इसलिए राजस्थान का आर्थिक विकास अन्य राज्यों की तुलना में अधिक मायने रखता है।

3. **प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि** – जैसे–जैसे राजस्थान विकास पथ पर आगे बढ़ रहा है वैसे–वैसे प्रति व्यक्ति आय में भी वृद्धि हो रही है। राजस्थान की प्रति व्यक्ति आय प्रचलित मूल्यों पर 1960–61 में 412 रूपये थी जो बढ़कर 2000–01 में 13020 रूपये, 2005–06 में और बढ़कर 17997 रूपये हो गई। प्रति व्यक्ति आय प्रचलित मूल्यों पर 2008–09 में 25654 रूपये हो गई। वर्ष 2011–12 में प्रति व्यक्ति आय चालू मूल्यों पर 47506 रूपये अनुमानित रही। स्थिर कीमतों (1999–2000) पर प्रति व्यक्ति आय 1960–61 में 6373 रूपये थी जो बढ़कर 2000–01 में 12840 रूपये तथा 2005–06 में बढ़कर 15541 रूपये हो गई। स्थिर कीमतों (2004–2005) पर प्रति व्यक्ति आय 2011–12 में 27421 रूपये हो गई।

4. **बड़ा राज्य बढ़ी भूमिका** – राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा राज्य है। राजस्थान का क्षेत्रफल 342239 वर्ग किलोमीटर है जो भारत के कुल क्षेत्रफल 3287263 वर्ग किलोमीटर का 10.41 प्रतिशत है। राजस्थान केवल क्षेत्रफल में ही बड़ा नहीं है अब इसकी भूमिका विकास के विभिन्न शीर्षों में काफी बढ़ गई है। कहने को तो राजस्थान मरूस्थलीय प्रदेश है, किन्तु यहाँ के रेत के धोरे अथाह सम्पदा और समृद्धि अपने में समेटे हुए हैं। राजस्थान खनिजों की बहुलता के कारण 'खनिजों के अजायबघर' के नाम से जाना जाता है। यहाँ निर्मित ''इन्दिरा गाँधी नहर परियोजना'' के कारण वैश्विक पहचान है। इस मरू गंगा ने थारवासियों का कायाकल्प किया है। अब बाड़मेर के खनिज तेल भण्डारों ने राजस्थान को राष्ट्रीय स्तर पर सुर्खियों में ला खड़ा किया है। अधात्विक खनिजों के मूल्यों में राजस्थान अग्रणी राज्य है। वर्ष 2005–06 में भारत के अधात्विक खनिज मूल्यों में राजस्थान का भाग 23.41 प्रतिशत था जो भारत में सबसे अधिक था। इस वर्ष धात्विक खनिज मूल्य में भी भारत में राजस्थान का भाग 5.77 प्रतिशत था जो छत्तीसगढ़, कर्नाटक, उड़ीसा, गोवा के बाद सबसे अधिक था।

5. **योजनाबद्ध विकास का मार्ग** – आर्थिक विकास की गति को बढ़ाने के लिए योजनाबद्ध विकास का मार्ग अपनाया गया। इसे एक अप्रेल 1951 से प्रारंभ

किया गया। राज्य में योजनाबद्ध विकास के 62 वर्ष पूर्ण हो चुके हैं। इस समयावधि में राज्य में ग्यारह पंचवर्षीय योजना, छह वार्षिक योजनाएं सम्पन्न हो चुकी है। वर्तमान में बारहवीं पंचवर्षीय योजना क्रियान्वयन में है। इसकी समयावधि एक अप्रेल 2012 से 31 मार्च 2017 तक है। योजनाबद्ध विकास में सामाजिक और आर्थक विकास हुआ। राजस्थान पिछड़े राज्य की श्रेणी से ऊपर उठकर विकासशील राज्य की श्रेणी में सम्मिलित हो गया है।

6. **उदारीकृत अर्थव्यवस्था** – भारत में योजनाबद्ध विकास के दौरान 1991–92 से आर्थिक उदारीकरण प्रारंभ किया गया। इसमें सार्वजनिक क्षेत्र की तुलना में निजी क्षेत्र की भूमिका बढ़ गई है। राजस्थान ने भी बदलते आर्थिक परिवेश के साथ अर्थव्यवस्था को समायोजित करने के लिए अर्थव्यवस्था में आर्थिक उदारीकरण की शुरूआत की। ऊर्जा क्षेत्र में आर्थिक उदारीकरण लागू कर राजस्थान महत्वपूर्ण राज्य के रूप में उभरा। आर्थिक उदारीकरण के बाद राज्य में विदेशी निवेशकों की भूमिका बढ़ने लगी है। राजस्थान सरकार ने विनिवेश (disinvestment) की दिशा में भी कदम बढ़ा दिये है। राज्य बजट 2010–11 में ''राजस्थान राज्य खान एवं खनिज निगम'' में दस प्रतिशत पूंजी के विनिवेश की घोषणा आर्थिक उदारीकरण की ओर बढ़ता कदम है।

7. **क्षेत्रीय असंतुलन**– राजस्थान में योजनाबद्ध विकास और आर्थिक उदारीकरण से विकास का वातावरण बना है। राज्य में आर्थिक विकास की गति बढ़ने के साथ–साथ क्षेत्रीय असंतुलन भी नजर आने लगा है। आर्थिक उदारीकरण में अधिकांश पूंजी निवेशक जयपुर, कोटा, अलवर, अजमेर, जोधपुर आदि जिलों में अधिक आकर्षित हुआ है। सवाई माधोपुर, टोंक, करौली, बारां तथा मरूस्थलीय जिले विकास की दौड़ में अपेक्षाकृत पीछे हैं।

8. **अकाल और सूखा**– राजस्थान का पश्चिमी भाग मरूस्थलीय है। कृषि उत्पादन मानसून पर निर्भर है। मानसून के अनुकूल नहीं होने की दशा में अकाल और सूखा की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। राजस्थान पशु सम्पदा में समृद्ध है, किन्तु अकाल और सूखे की मार मानव से ज्यादा पशुओं और वन्य जीवों पर पड़ती है। वर्ष 1981–82 से लेकर 2008–09 तक दो–तीन वर्षों (1983–84, 1990–91, 1994–95) को छोड़कर शेष सभी वर्षों में अकाल और अभाव से भारी क्षति हुई है। राज्य में अकाल के स्थायी समाधान की आवश्यकता है। इस दिशा में यहाँ पड़ने वाले सतत् अकाल, विषम भौगोलिक स्थिति को दृष्टिगत रखकर राजस्थान को विशेष दर्जा देने की दरकार है।

9. **ऋणग्रस्तता**– राजस्थान पर ऋण का बोझ है। राज्य जनसंख्या और आकार की दृष्टि से बहुत बड़ा राज्य है। फिर यहां की विषम भौगोलिक स्थिति है। अर्थव्यवस्था विकासशील अवस्था में है। ऐसी स्थिति में विकास को गति देने के लिए भारी वित्तीय संसाधनों की आवश्यकता होती है। राज्य सरकार के वित्तीय संसाधन सीमित है। इस कारण विकासगत जरूरतों को पूरा करने के लिए ऋण पर निर्भरता बढ़ गई है। बढ़ती ऋण ग्रस्तता का कारण राजस्व घाटा भी है। राजस्व घाटा 2005–06 में 660 करोड़ रूपये था जो 2010–11 के बजट अनुमानों में 1098 करोड़ रूपये जा पहुँचा। राजकोषीय घाटा उधार लेने की आवश्यकता को दर्शाता है। राजकोषीय घाटा 2005–06 में 5150 करोड़ रूपये था जो 2011–12 के बजट अनुमानों में 8063 करोड़ रूपये जा पहुँचा। राज्य पर कुल कर्जा 2009–10 के संशोधित अनुमानों में 90208 करोड़ रूपये था।

सार रूप में देखें तो राजस्थान की अर्थव्यवस्था आर्थिक पिछड़ेपन से पूर्ण रूप से उबर चुकी है। विभिन्न आर्थिक सूचकों में हुई प्रगति के आधार पर

राजस्थान को विकासशील अर्थव्यवस्था कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। आज राजस्थान में आधारभूत संरचना आर्थिक विकास को गति देने में अनुकूल है। सामाजिक विकास में भी राजस्थान प्रगति की ओर अग्रसर है। यहाँ कृषि और उद्योग क्षेत्र में विकास की असीम संभावनाएं हैं। सार्वजनिक क्षेत्र व्यय में अधिक वृद्धि हो और निजी निवेशकों को आकर्षित किया जाये तो राजस्थान विकसित राज्यों की श्रेणी में सम्मिलित हो सकता है।

राजस्थान की जनसंख्या

जनसंख्या आर्थिक विकास का एक निर्धारक तत्व है। जनसंख्या का अनुकूलतम् स्तर आर्थिक विकास में सहायक होता है। किसी राष्ट्र की स्वस्थ, बुद्धिमान, प्रगतिशील एवं सक्रिय जनसंख्या ही उसकी अमूल्य निधि एवं प्रेरक शक्ति है। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में देखें तो विकसित देशों में बढ़ती जनसंख्या ने विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके विपरीत विकासशील देशों में बढ़ती जनसंख्या विकास में अवरोध सिद्ध हुई। भारत में अधिक जनसंख्या योजनाबद्ध विकास के प्रारंभिक दशकों में आर्थिक पिछड़ेपन का बड़ा कारण बनी। वर्तमान में आर्थिक विकास की गति के बढ़ने के साथ जनसंख्या विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। यह तथ्य राजस्थान के संदर्भ में भी सत्य है। जनसंख्या के विकास में सहयोगी होने के लिए जनसंख्या में संख्यात्मक वृद्धि के स्थान पर गुणात्मक वृद्धि आवश्यक होती है।

राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से ही नहीं जनसंख्या के आकार की दृष्टि से भी बड़ा राज्य है। हालांकि जनसंख्या संबंधी सूचकों में राजस्थान की स्थिति अपेक्षाकृत कमजोर है, किन्तु हाल ही के वर्षों में राजस्थान में आर्थिक विकास का वातावरण बना है। इससे सामाजिक विकास के क्षेत्र में भी सुधार की प्रवृत्ति दृष्टिगोचर हो रही है।

राजस्थान की जनसंख्यकीय विशेषतायें निम्नांकित है–

1. **जनसंख्या का आकार** – वर्ष 2011 की ताजी जनगणना के अनुसार राजस्थान की जनसंख्या 6.86 करोड़ (प्रोविजनल) है। राजस्थान की जनसंख्या भारत की कुल जनसंख्या 121.02 करोड़ का 5.67 प्रतिशत है। जनसंख्या के आकार की दृष्टि से राजस्थान का भारत में महत्वपूर्ण स्थान है। राजस्थान में जयपुर जिले की जनसंख्या 66.64 लाख सबसे अधिक तथा जैसलमेर जिले की 6.72 लाख सबसे कम है। राजस्थान की जनसंख्या वृद्धि (1951 से 2011 तक) निम्न तालिका से स्पष्ट है :

राजस्थान की जनसंख्या

वर्ष	जनसंख्या(करोड़ में)	दशकीय वृद्धि (प्रतिशत में)
1951	1.60	15.20
1961	2.02	26.20
1971	2.58	27.83
1981	3.43	32.97
1991	4.40	28.44
2001	5.65	28.41
2011(प्रोविजनल)	6.86	21.44

2. **जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर** – राजस्थान में जनसंख्या तेज गति से बढ़ रही है। राज्य की जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर 1981 में 32.97 प्रतिशत थी। हालांकि बाद की जनगणनाओं में जनसंख्या वृद्धि दर कम हुई है। जनसंख्या की दशकीय वृद्धि दर 2001 में कुछ कम होकर 28.41 प्रतिशत रही इसके बावजूद भी यह भारत की 2001 की दशकीय वृद्धि दर 21.34 प्रतिशत से बहुत अधिक थी। राजस्थान की जनसंख्या दशकीय वृद्धि दर 2011 में कम होकर 21.44 प्रतिशत रह गई है। राजस्थान में 2001–11 के दशक में जनसंख्या वृद्धि दर में बाड़मेर जिले 32.55 प्रतिशत सबसे ज्यादा तथा गंगानगर जिले 10.06 प्रतिशत सबसे कम है।

3. **जनसंख्या घनत्व** – जनसंख्या घनत्व से अभिप्राय प्रति वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में निवास करने वाले व्यक्तियों की संख्या से है। राजस्थान के जनसंख्या घनत्व में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। जनसंख्या घनत्व में वृद्धि का प्रमुख कारण तीव्र ग्रति से बढ़ रही जनसंख्या

है। भारत के जनसंख्या घनत्व की तुलना में राजस्थान का जनसंख्या घनत्व सदैव कम रहा है। राजस्थान का जनसंख्या घनत्व 1951 में 47 व्यक्ति वर्ग किलोमीटर था जो बढ़कर 1991 में 129 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर तथा 2001 में और बढ़कर 165 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हो गया। राजस्थान का जनसंख्या घनत्व उत्तरोत्तर वृद्धि के बावजूद भारत के जनसंख्या घनत्व से कम है। भारत का जनसंख्या घनत्व 2001 में 324 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर था। राजस्थान का जनसंख्या घनत्व 2011 में तेजी से बढ़कर 201 प्रति व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर हो गया। राजस्थान के जिलों में जनसंख्या घनत्व के संबंध में भारी असमानता है। 2011 में जयपुर जिले का जनसंख्या घनत्व 598 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर राज्य में सबसे अधिक था जबकि जैसलमेर जिले का 17 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर जनसंख्या घनत्व सबसे कम था।

4. **लिंगानुपात** – लिंगानुपात से आशय प्रति हजार पुरूषों के पीछे महिलाओं की संख्या से है। राजस्थान में प्रति हजार पुरूषों के पीछे महिलाओं की संख्या कम है। राजस्थान में 1991 में प्रति हजार पुरूषों के पीछे महिलाओं की संख्या 910 थी जो 2001 में बढ़कर 921 हो गई। राज्य का लिंगानुपात 2011 में थोड़ा बढ़कर 926 हुआ है। राजस्थान में डूँगरपुर एवं राजसमन्द जिले ऐसे थे जहाँ प्रति हजार पुरूषों से महिलाओं की संख्या अधिक है किन्तु 2011 में डूँगरपुर में 990 तथा राजसमन्द में 988 महिलाएँ प्रति हजार पुरूष रह गई है। राज्य में 2011 में सबसे कम लिंगानुपात धौलपुर जिले में है। यहां प्रति हजार पुरूषों के पीछे 845 महिलाएं है। राज्य में सबसे अधिक लिंगानुपात डूंगरपुर जिले में 990 है।

5. **साक्षरता दर** – राजस्थान में पिछले दशकों में साक्षरता में वृद्धि हुई है, किन्तु अभी भी राजस्थान साक्षरता की दृष्टि से राष्ट्रीय औसत से पीछे है। राजस्थान में ग्रामीण क्षेत्रों विशेषकर महिलाओं में साक्षरता का अभाव है।

साक्षरता की स्थिति

(प्रतिशत में)

	भारत			राजस्थान		
	1991	**2001**	**2011**	**1991**	**2001**	**2011**
व्यक्ति	52.21	64.84	74.04	38.55	60.41	67.06
पुरूष	64.13	75.26	82.04	54.99	75.70	80.51
महिला	39.29	53.67	65.46	20.44	43.85	52.66

स्त्रोत : भारत 2006, वार्षिक संदर्भ ग्रन्थ पृ .13

इण्डिया सेन्सस 2011 (प्रोविजनल)

वर्ष 1991 में राजस्थान में एक प्रकार से निरक्षरता का अंधकार था। वर्ष 1991 में राज्य की साक्षरता दर केवल 38.55 प्रतिशत थी जो भारत की साक्षरता दर 52.21 प्रतिशत से बहुत कम थी। वर्ष 1991 में बिहार के बाद सबसे ज्यादा निरक्षर राजस्थान में थे। इसके बाद राजस्थान में साक्षरता वृद्धि की विशेष पहल की गई। राजस्थान में साक्षरता 2001 में बढ़कर 60.41 प्रतिशत हो गई। पुरूष साक्षरता में राजस्थान ने अखिल भारत पुरूष साक्षरता को पीछे छोड़ दिया। वर्ष 2001 में भारत में पुरूष साक्षरता 75.26 प्रतिशत की तुलना में राजस्थान में पुरूष साक्षरता 75.70 प्रतिशत उल्लेखनीय है। हालांकि महिला साक्षरता में स्थिति अभी भी राष्ट्रीय औसत से काफी कमजोर बनी हुई है। वर्ष 2001 में भारत में महिला साक्षरता 53.67 प्रतिशत की तुलना में राजस्थान में महिला का साक्षरता 43.85 प्रतिशत थी। राजस्थान में 2011 में साक्षरता दर बढ़कर 67.06 प्रतिशत, पुरूष साक्षरता 80.51 तथा महिला साक्षरता 52.66 प्रतिशत हो गई। 2011 में राजस्थान का सबसे अधिक साक्षर कोटा रहा जहाँ साक्षरता का प्रतिशत 77.48 अंकित किया गया। इसके पश्चात् जयपुर (76.44) प्रतिशत, झुन्झुनू 74.72 प्रतिशत तथा सीकर 72.98 प्रतिशत रहा। जालौर जिला सबसे कम साक्षरता वाला जिला है जहाँ साक्षरता 55.58 प्रतिशत है।

6. **मानव विकास** – वर्तमान में आर्थिक विकास के साथ मानव विकास पर अधिक ध्यान दिया जाने लगा है।

राजस्थान मानव विकास के क्षेत्र में राष्ट्रीय औसत से पीछे है। मानव विकास में शिक्षा के अलावा औसत आयु, शिशु मृत्यु दर, जन्म दर, मृत्यु दर आदि को सम्मिलित किया जाता है। भारत और राजस्थान के मानव विकास का स्वरूप निम्न तालिका से स्पष्ट है–

मानव विकास के कुछ सूचक

क्र.सं.	सूचक	वर्ष	भारत	राजस्थान
1	जन्म पर जीवन प्रत्याशा	2002–2006	63.5	62.0
2	शिशु मृत्यु दर (प्र.ह. जन्म पर)	2007	55.0	65.0
3	जन्म दर (प्रति हजार)	2007	23.1	27.9
4	मृत्यु दर(प्रति हजार)	2007	7.4	6.8

Source: Enonomic Survey 2008-09, Page A-119, Government of India.

भारत की जन्म पर जीवन प्रत्याशा (life expectancy at birth) 2002–2006 में 63.5 वर्ष की तुलना में राजस्थान में जीवन प्रत्याशा 62 वर्ष है। राजस्थान में अधिक शिशु मृत्यु दर (infant mortality rate) चिन्ताजनक है। भारत में शिशु मृत्यु दर 2007 में 55 प्रति हजार की तुलना में राजस्थान में 65 प्रति हजार बहुत अधिक है। राजस्थान में जन्म दर अखिल भारत औसत से ज्यादा है। राजस्थान ने मृत्यु दर को कम करने में सफलता प्राप्त की है। राजस्थान में प्रति हजार मृत्यु दर 2007 में 6.8 थी जो भारत में मृत्यु दर 7.4 प्रति हजार से कम थी।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. अर्थव्यवस्था के कृषि क्षेत्र में सम्मिलित नहीं है –
   (अ) मत्स्य (ब) पशुपालन
   (स) आवास (द) वानिकी
2. वित्त वर्ष 2008–09 में विकास दर घटने का प्रमुख कारण है–
   (अ) महंगाई (ब) वैश्विक मंदी 2008
   (स) अकाल (द) कृषि उत्पादन में कमी
3. राजस्थान की प्रचलित मूल्यों पर 2011–12 में प्रति व्यक्ति आय है–
   (अ) 25654 रूपए (ब) 18010 रूपए
   (स) 17997 रूपए (द) 47506 रूपए
4. भारत के कुल क्षेत्रफल में राजस्थान के क्षेत्रफल का भाग है–
   (अ) 9.60 प्रतिशत (ब) 8.90 प्रतिशत
   (स) 13.50 प्रतिशत (द) 10.41 प्रतिशत
5. ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना की समयावधि है–
   (अ) 2002–07 (ब) 1992–97
   (स) 2007–12 (द) 1997–02
6. वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार राजस्थान की जनसंख्या है–
   (अ) 4.40 करोड़ (ब) 6.86 करोड़
   (स) 3.43 करोड़ (द) 2.58 करोड़
7. वर्ष 2011 में राजस्थान का जनसंख्या घनत्व है–
   (अ) 324 (ब) 274
   (स) 129 (द) 201

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. आर्थिक उदारीकरण की शुरूआत कब हुई?
2. अर्थव्यवस्था के विकास शीर्षों के नाम लिखिए।
3. सेवा क्षेत्र में किसे सम्मिलित किया जाता है?
4. राजस्थान की विकास दर स्थिर कीमतों पर 2011–12 में कितनी थी?
5. राजस्थान का क्षेत्रफल कितना है?
6. राजस्थान में 2011 में महिला साक्षरता कितनी है?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. राजस्थान की अर्थव्यवस्था में बदलाव की प्रवृत्ति बताइये।
2. सकल राज्य घरेलू उत्पाद में विकास क्षेत्रों की क्या भूमिका है?
3. राजस्थान के संदर्भ में 'बड़ा राज्य बड़ी भूमिका' को स्पष्ट कीजिए।
4. राजस्थान में बढ़ती ऋणग्रस्तता के क्या कारण है?
5. भारतीय परिप्रेक्ष्य में राजस्थान की साक्षरता की स्थिति कैसी है?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. राजस्थान की अर्थव्यवस्था की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. राजस्थान में जनसंख्या की विशेषताएं बताइये।
3. राजस्थान में मानव विकास की व्याख्या कीजिए।

□□□

अध्याय – 7
राजस्थान का आर्थिक विकास

योजनाबद्ध विकास

राजस्थान में आर्थिक विकास की गति को तेज करने के लिए 1951 से योजनाबद्ध विकास का प्रारम्भ पंचवर्षीय योजना के माध्यम से किया गया। वर्तमान में राज्य में योजनाबद्ध विकास को प्रारंभ हुए 62 वर्ष पूरे हो गये है। इस समयावधि में ग्यारह पंचवर्षीय योजनाएं तथा छह वार्षिक योजनाएं पूर्ण हो चुकी है। योजनाबद्ध विकास में सार्वजनिक क्षेत्र व्यय में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई। प्रथम पंचवर्षीय योजना में सार्वजनिक क्षेत्र का वास्तविक व्यय 54.2 करोड़ रूपये था जो बढ़कर दसवीं पंचवर्षीय योजना में 33735.1 करोड़ रूपये हो गया। राजस्थान में 1951–52 से लेकर 2006–07 तक (पहली पंचवर्षीय योजना से लेकर दसवीं पंचवर्षीय योजना तक) 74650.5 करोड़ रूपये व्यय किया गया। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना का अनुमोदित उद्व्यय 71732 करोड़ रूपये है। योजनाबद्ध विकास के प्रारम्भिक वर्षों में जहां राजस्थान कृषि में पिछड़ापन, अकाल एवं सूखा, औद्योगिक पिछड़ापन, ऊर्जा का अभाव, निर्धनता आदि समस्याओं से जूझ रहा था। आज राजस्थान योजनाबद्ध विकास के फलस्वरूप विकास के मार्ग पर आगे बढ़ रहा है। पंचवर्षीय योजनाओं में विद्युत तथा सिंचाई विकास को प्राथमिकता दी गई। वर्तमान में राज्य सरकार सामाजिक विकास के क्षेत्र में विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किये हुए है। राज्य की पंचवर्षीय और वार्षिक योजनाओं में किया गया वास्तविक व्यय तालिका 7.1 से स्पष्ट है–

तालिका 7.1 राजस्थान की पंचवर्षीय योजनाओं और वार्षिक योजनाओं में वास्तविक व्यय

(करोड़ रूपए)

योजना	योजना अवधि	वास्तविक व्यय
प्रथम पंचवर्षीय योजना	(1951-56)	54.15
द्वितीय पंचवर्षीय योजना	(1956-61)	102.74
तृतीय पंचवर्षीय योजना	(1961-66)	212.70
वार्षिक योजनाएं	(1966-69)	136.76
चतुर्थ पंचवर्षीय योजना	(1969-74)	308.79
पांचवी पंचवर्षीय योजना	(1974-79)	857.62
वार्षिक योजना	(1979-80)	290.19
छठी पंचवर्षीय योजना	(1980-85)	2120.45
सातवीं पंचवर्षीय योजना	(1985-90)	3106.18
वार्षिक योजना	(1990-92)	2159.98
आठवीं पंचवर्षीय योजना	(1992-97)	11998.97
नवी पंचवर्षीय योजना	(1997-02)	19566.82
दसवीं पंचवर्षीय योजना	(2002-07)	33735.14
ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना	(2007-12)	71731.98
दसवीं पंचवर्षीय योजना (अनुमोदित उद्व्यय)	(2012-17)	194283.44

स्त्रोत : आर्थिक समीक्षा 2008–09, राजस्थान सरकार पृ. 18, योजना आयोग भारत सरकार

योजना परिव्यय और प्राथमिकताएं – राजस्थान में 1951–52 से लेकर 2006–07 की समयावधि में दस पंचवर्षीय योजनाएं सम्पन्न हो चुकी है। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना की समयावधि 2007–12 है। योजनाबद्ध विकास के इन छह दशकों (1951–2010) में पंचवर्षीय योजनाओं के साथ कुछ वार्षिक योजनाएं भी महत्वपूर्ण रही। इनमें 1966–67, 1967–68, 1968–69, 1979–80, 1990–91 तथा 1991–92 उल्लेखनीय है। राजस्थान की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं और वार्षिक योजनाओं से सार्वजनिक व्यय और प्राथमिकताएं निम्नलिखित है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951–56) – राज्य में योजनाबद्ध विकास की शुरूआत एक अप्रेल 1951 से हुई। प्रथम पंचवर्षीय योजना की समयावधि एक अप्रेल 1951 से 31 मार्च 1956 थी। प्रथम योजना में सार्वजनिक क्षेत्र का वास्तविक व्यय 54.15 करोड़ रूपये था। इस योजना में कृषि एवं सम्बद्ध सेवाओं पर 2.6 करोड़ रूपये, ग्रामीण विकास एवं सहकारिता पर 3.3 करोड़ रूपये, सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर 31.3 करोड़ रूपये, ऊर्जा पर 1.2 करोड़ रूपये, उद्योग व खनिज पर 0.5 करोड़ रूपये, यातायात पर 5.6 करोड़ रूपये तथा सामाजिक एवं आर्थिक सेवाओं पर 9.7 करोड़ रूपये खर्च किये गये। भारत की प्रथम पंचवर्षीय योजना की भांति राज्य की प्रथम पंचवर्षीय योजना में कृषि विकास पर सबसे अधिक ध्यान दिया गया। योजना में सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण तथा सामाजिक एवं आर्थिक सेवाओं को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956–61) – इस योजना की समयावधि एक अप्रेल 1956 से 31 मार्च 1961 थी। सार्वजनिक क्षेत्र का वास्तविक व्यय 102.74 करोड़ रूपये था। सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर 27.9 करोड़ रूपये तथा ऊर्जा पर 15.2 करोड़ रूपये खर्च किये गये। इस योजना में भी सिंचाई एवं बाढ नियंत्रण को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई। प्रथम पंचवर्षीय योजना की तुलना में इस योजना में ऊर्जा विकास पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया गया।

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961–66) – इस पंचवर्षीय योजना की समयावधि एक अप्रेल 1961 से 31 मार्च 1966 थी। सार्वजनिक क्षेत्र का वास्तविक व्यय 212.70 करोड़ रूपये था। सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर सबसे अधिक 87. 9 करोड़ रूपये खर्च किया गया। इसके बाद सामाजिक एवं आर्थिक सेवाओं पर 43.1 करोड़ रूपये तथा ऊर्जा पर 39. 4 करोड़ रूपये व्यय किये गये। योजना में सिंचाई, बाढ़ नियंत्रण तथा ऊर्जा विकास पर सर्वोच्च ध्यान दिया गया।

तीन वार्षिक योजनाएं (1966–69) – उल्लेखनीय है कि तीसरी पंचवर्षीय योजना की समयावधि में भारत को दो विदेशी आक्रमणों का सामना करना पड़ा। भारत पर 1961 में चीन ने तथा 1965 में पाकिस्तान ने आक्रमण किया। ऐसी स्थिति में वित्तीय संसाधनों के अभाव में चौथीं पंचवर्षीय योजना देश में नियत समय पर प्रारंभ नहीं हो सकी। एक–एक वर्ष की तीन वार्षिक योजनाएं बनाई गई। राजस्थान में भी 1966–67, 1967–68 तथा 1968–69 तीन वार्षिक योजनाएं बनी। इन तीनों योजनाओं का वास्तविक व्यय 136.76 करोड़ रूपये था। तीनों वार्षिक योजनाओं में ऊर्जा विकास पर 46.8 करोड़ रूपये व्यय किया गया। वार्षिक योजनाओं में ऊर्जा विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969–74) – इस पंचवर्षीय योजना की समयावधि एक अप्रेल 1969 से 31 मार्च 1974 थी। योजना में सार्वजनिक क्षेत्र व्यय 308.79 करोड़ रूपये था। योजनावधि में ऊर्जा पर 94 करोड़ रूपये तथा सामाजिक एवं आर्थिक सेवाओं पर 72.4 करोड़ रूपये का व्यय किया गया। इस योजना में सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर व्यय में भारी वृद्धि हुई। इस विकास शीर्ष पर व्यय बढ़कर 105.3 करोड़ रूपये पहुँच गया।

पाँचवी पंचवर्षीय योजना (1974–79) – इस पंचवर्षीय योजना की समयावधि एक अप्रेल 1974 से 31 मार्च 1979 थी। योजना का सार्वजनिक क्षेत्र व्यय 857.62 करोड़ रूपये था। ऊर्जा विकास पर 249 करोड़ रूपये, सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर 217 करोड़ रूपये, सामाजिक एवं आर्थिक

सेवाओं पर 150 करोड़ रूपये व्यय किया गया। योजना में ऊर्जा विकास पर सर्वोच्च ध्यान दिया गया।

वार्षिक योजना (1979–80) – वित्त वर्ष 1979–80 को वार्षिक योजना के रूप में स्वीकार किया गया। इसके पीछे कारण राष्ट्रीय स्तर राजनीतिक बदलाव की स्थिति थी। वार्षिक योजना 1979–80 का सार्वजनिक क्षेत्र वास्तविक व्यय 290.19 करोड़ रूपये था।

छठी पंचवर्षीय योजना(1980–85) – इस योजना की समयावधि एक अप्रेल 1980 से 31 मार्च 1985 थी। योजना का सार्वजनिक क्षेत्र में वास्तविक व्यय 2120.45 करोड़ रूपये था। योजनावधि में ऊर्जा विकास पर 566 करोड़ रूपये, सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर 553 करोड़ रूपये, सामाजिक एवं आर्थिक सेवाओं पर 422 करोड़ रूपये खर्च किया गया। योजना में ऊर्जा विकास पर सर्वाधिक ध्यान केन्द्रित किया।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985–90) – इस योजना की समयावधि एक अप्रेल 1985 से 31 मार्च 1990 तक रही। वास्तविक योजना परिव्यय 3106.8 करोड़ रूपये था। ऊर्जा विकास शीर्ष पर 928 करोड़ रूपये व्यय किया जो कुल योजना परिव्यय का 29.9 प्रतिशत था। ऊर्जा के बाद सबसे अधिक व्यय सामाजिक एवं आर्थिक सेवाओं पर 788.7 करोड़ रूपये तथा सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर 691 करोड़ रूपये व्यय किया गया। योजना में सर्वाधिक ध्यान ऊर्जा विकास पर केन्द्रित किया गया।

वार्षिक योजनाएं (1990–92) – वित्त वर्ष 1990–91 और 1991–92 को वार्षिक योजनाओं के रूप में स्वीकार किया गया। इन दोनों वार्षिक योजनाओं का वास्तविक व्यय 2159.98 करोड़ रूपये था।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992–97) – आठवीं पंचवर्षीय योजना की समयावधि एक अप्रेल 1992 से 31 मार्च 1997 तक थी। इस योजना में सार्वजनिक क्षेत्र का वास्तविक व्यय 11998.97 करोड़ रूपये था। आठवीं पंचवर्षीय योजना के सार्वजनिक क्षेत्र परिव्यय में भारी बढ़ोतरी की गई। आठवीं पंचवर्षीय योजना का आकार, अब तक सम्पन्न हो चुकी सात पंचवर्षीय योजनाओं के सम्मिलित आकार से भी बड़ा था। पंचवर्षीय योजना में ऊर्जा विकास शीर्ष पर 3254 करोड़ रूपये व्यय किया गया जो कुल योजना परिव्यय का 27.1 प्रतिशत था। सामाजिक व आर्थिक सेवाओं पर 3168 करोड़ रूपये (कुल परिव्यय का 26.4 प्रतिशत), सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण 1836 करोड़ रूपये (कुल परिव्यय का 15.3 प्रतिशत) व्यय किया गया। इस योजना में ऊर्जा विकास शीर्ष पर सर्वाधिक ध्यान केन्द्रित किया गया।

नवीं पंचवर्षीय योजना (1997–2002) – नवीं योजना की समयावधि एक अप्रेल 1997 से 31 मार्च 2002 तक थी। नवीं योजना का प्रमुख उद्देश्य आठवीं पंचवर्षीय योजना की उपलब्धियों को बनाये रखना था। नवीं योजना के अन्य उद्देश्यों में कृषि क्षेत्र में पूंजी निर्माण, गरीबों के जीवन स्तर में सुधार, आधारभूत संरचना का विकास, सामाजिक क्षेत्र में विकास, क्षेत्रीय विषमता में कमी, राजकोषीय घाटे को कम करना आदि प्रमुख है।

भारत के योजना आयोग द्वारा राजस्थान की नवीं पंचवर्षीय योजना का प्रस्तावित प्रारूप प्रचलित कीमतों पर 27650 करोड़ रूपये स्वीकृत किया गया था। इसमें से सामाजिक एवं सामुदायिक सेवाओं, पर अनुमोदित उद्व्यय 7519 करोड़ रूपये था जो कुल उद्व्यय का 27.2 प्रतिशत था।

नवीं पंचवर्षीय योजना में अनुमोदित उद्व्यय 27650 करोड़ रूपये के मुकाबले वास्तविक उद्व्यय 19566.82 करोड़ रूपये रहा। इस योजना में अनुमोदित उद्व्यय का 70.77 प्रतिशत भाग ही व्यय किया जा सका। इससे स्पष्ट है कि राज्य की नवीं योजना के आकार में भारी कटौती हुई। देश में 1996–97 के बाद की राजनीतिक अस्थिरता का प्रभाव योजनाबद्ध विकास पर पड़ा। केन्द्र में 1996 से लेकर 1999 तक बार–बार सरकार बदलने से नवीं योजना का क्रियान्वयन समय पर नहीं हो सका। नवीं योजनावधि के प्रारंभिक दो वर्ष में योजना क्रियान्वयन गति नहीं पकड़

सका था। केन्द्र सरकार ने अगस्त 1999 में नवीं योजना के उद्देश्य सरकार की प्राथमिकताओं के अनुरूप बदलें।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002–07) – दसवीं योजना की समयावधि एक अप्रेल 2002 से 31 मार्च 2007 तक थी। दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002–07) का राष्ट्रीय उद्देश्य उन समस्याओं को सुलझाना था जो अभी तक यथावत थी।

राष्ट्रीय विकास परिषद की सितम्बर 2001 की बैठक में दसवीं पंचवर्षीय योजना के मसौदे में योजना आयोग द्वारा निम्नांकित लक्ष्य निर्धारित किये गये थे :

1. गरीबी 2007 तक 5 प्रतिशत तथा 2012 तक 15 प्रतिशत कम करना है।
2. उच्च गुणात्मक रोजगार अवसरों का सृजन।
3. वर्ष 2003तक सभी बच्चों को स्कूल भेजकर वर्ष 2007 तक उनकी प्राथमिक शिक्षा पूरी करना।
4. साक्षरता एवं मजदूरी में 2007 तक लिंग भेद 50 प्रतिशत कम करना।
5. 2001 व 2011 के दशक में जनसंख्या वृद्धि दर 16.2 प्रतिशत तक करना।
6. योजना अवधि में साक्षरता दर बढ़ाकर 75 प्रतिशत तक करना।
7. वर्ष 2007 तक शिशु मृत्यु दर कम कर प्रति हजार 45 करना।
8. वर्ष 2007 तक मातृ मृत्यु दर कम कर प्रति हजार 2 तथा 2012 तक 1 करना।
9. वर्ष 2007 तक वन क्षेत्र में 25 प्रतिशत तथा 2012 तक 33 प्रतिशत वृद्धि करना।
10. योजना अवधि में सभी गांवों को स्वच्छ व पर्याप्त पेयजल उपलब्ध कराना।
11. वर्ष 2007 तक सभी मुख्य नदियों को प्रदूषण मुक्त करना।

राजस्थान की दसवीं पंचवर्षीय योजना का वास्तविक उद्व्यय प्रचलित कीमतों पर 33735.14 करोड़ रूपये था। सामाजिक एवं सामुदायिक सेवाएं उद्व्यय 10196.95 करोड़ रूपये था जो कुल उद्व्यय का 30.23 प्रतिशत था। ऊर्जा विकास शीर्ष पर उद्व्यय 10461.46 करोड़ रूपये था जो कुल उद्व्यय का 31.01 प्रतिशत था।

दसवीं पंचवर्षीय योजना के अनुमोदित उद्व्यय 31831.75 करोड़ रूपये के मुकाबले वास्तविक उद्व्यय 33735.14 करोड़ रूपये रहा। उल्लेखनीय है जहाँ नवीं पंचवर्षीय योजना अनुमोदित उद्व्यय को पूरा नहीं कर सकी, वहीं दसवीं पंचवर्षीय योजना का आकार अनुमोदित उद्व्यय 31831.75 करोड़ रूपये की तुलना में वास्तविक व्यय 33735.14 करोड़ रूपये रहा। दसवीं योजना का आकार अनुमोदित उद्व्यय की तुलना में 5.98 प्रतिशत अधिक था।

राजस्थान की ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना

वर्तमान में राजस्थान में ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना क्रियान्वयन में है। इसकी समयावधि एक अप्रेल 2007 से 31 मार्च 2012 तक है। योजना आयोग द्वारा राज्य की ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना 71731.98 करोड़ रूपये अनुमोदित की गई। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के उद्व्यय में पर्याप्त वृद्धि की गई है। ग्यारहवीं योजना का उद्व्यय 71731.98 करोड़ रूपये दसवीं योजना में अनुमोदित उद्व्यय31831.75 करोड़ की तुलना में 39900.23 करोड़ रूपये अधिक है। ग्यारहवीं योजना अनुमोदित उद्व्यय के हिसाब से दसवीं योजना के 2.25 गुना अधिक है।

ग्यारहवीं योजना के वृद्धि लक्ष्य : राजस्थान की ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि वृद्धि दर 3.5 प्रतिशत, उद्योग वृद्धि दर 8 प्रतिशत तथा सेवा वृद्धि दर 8. 9 प्रतिशत लक्ष्य निर्धारित किये गये है। योजनावधि में राज्य सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि दर 7.4 प्रतिशत का लक्ष्य रखा गया है। राजस्थान की ग्यारहवीं योजना का अनुमोदित उदव्यय तालिका 7.2 द्वारा स्पष्ट है–

तालिका 7.2 राजस्थान की ग्यारहवीं योजना का अनुमोदित उद्व्यय

क्र.सं.	विकास शीर्ष	योजना उद्व्यय (करोड़ रूपये)	कुल उद्व्यय से प्रतिशत
1	कृषि एवं सम्बद्ध सेवाएं	2269.07	3.16
2	ग्रामीण विकास	4295.14	5.99
3	विशिष्ट क्षेत्रीय विकास	1759.43	2.45
4	सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण	7302.06	10.18
5	ऊर्जा	25606.75	35.70
6	उद्योग एवं खनिज	958.65	1.34
7	परिवहन	4683.06	6.53
8	वैज्ञानिक सेवाएं	29.70	0.04
9	सामाजिक एवं सामुदायिक सेवाएं	19719.83	27.49
10	आर्थिक संवाएं	731.04	1.02
11	सामान्य सेवाएं	4377.25	6.10
	योग	**71731.98**	**100.00**

ग्यारहवीं योजना में ऊर्जा विकास शीर्ष पर सर्वोच्च प्राथमिकता दी गई है। इस विकास शीर्ष का अनुमोदित उद्व्यय 25606.75 करोड़ रूपये है जो कुल योजना उद्व्यय का 35.70 प्रतिशत है। सामाजिक एवं सामुदायिक सेवाओं पर उद्व्यय 19719.83 करोड़ रूपये है जो कुल योजना उद्व्यय का 27.49 प्रतिशत है। इनके अलावा कुल योजना उद्व्यय का कृषि एवं सम्बद्ध सेवाओं पर 3.16 प्रतिशत, ग्रामीण विकास पर 5.99 प्रतिशत, विशिष्ट क्षेत्रीय विकास पर 2.45 प्रतिशत, सिंचाई एवं बाढ़ नियंत्रण पर 10.18 प्रतिशत, उद्योग एवं खनिज पर 1.34 प्रतिशत, परिवहन पर 6.53 प्रतिशत, वैज्ञानिक सेवाओं पर 0.04 प्रतिशत, आर्थिक सेवाओं पर 1.02 प्रतिशत तथा सामान्य सेवाओं पर 6.10 प्रतिशत आवंटन किया गया है।

वार्षिक योजनाएं – राजस्थान में केवल ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना ही आकार में बड़ी नहीं है बल्कि इसकी वार्षिक योजनाओं का आकार भी उत्तरोत्तर बढ़ा है। वित्त वर्ष 2007–08 की वार्षिक योजना का आकार 13795 करोड़ रूपये, 2008–09 की वार्षिक योजना 14916 करोड़ रूपये तथा 2009–10 की वार्षिक योजना 17322 करोड़ रूपये थी। योजना आयोग, नई दिल्ली ने राजस्थान की 2010–11 की वार्षिक योजना का आकार 24000 करोड़ रूपये निर्धारित किया था। यह योजना 2009–10 की वार्षिक योजना 17322 करोड़ रूपये की तुलना में 38.55 प्रतिशत अधिक थी। वार्षिक योजना 2011–12 राजस्थान के योजनाबद्ध विकास के इतिहास की बड़ी वार्षिक योजना थी। इसका आकार 28461.30 करोड़ रूपये (प्रस्तावित) था।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना 2012–17

योजना आयोग ने राजस्थान की बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012–17) का आकार 194283.44 करोड़ रूपये तय किया है। यह ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना राशि 71731. 98 करोड़ रूपये से 170.85 प्रतिशत अधिक है। बारहवीं

पंचवर्षीय योजना एक अप्रेल 2012 से प्रारम्भ हो चुकी है। योजना आयोग के अनुसार राजस्थान पूरे प्रदेश में पहला राज्य है जिसकी बारहवीं पंचवर्षीय योजना और वार्षिक योजना 2012–13 सबसे पहले मंजूर की।

वार्षिक योजना 2012–13

वित्त वर्ष 2012–13 बारहवीं पंचवर्षीय योजना का पहला वित्त वर्ष है। योजना आयोग ने राज्य की 2012–13 की वार्षिक योजना का आकार 33500 करोड़ रूपये तय किया है। यह 2011–12 की अनुमोदित वार्षिक योजना 28461.30 करोड़ रूपये की तुलना में 17.70 प्रतिशत अधिक है। वार्षिक योजना 2012–13 में सबसे अधिक उद्व्यय उर्जा के लिए निर्धारित किया गया है। सामुदायिक सेवाओं को भी प्रमुख प्राथमिकता में सम्मिलित किया गया है। योजना आयोग ने राजस्थान की वार्षिक योजना 2012–13 के 33128 करोड़ रूपये प्रस्ताव की तुलना में अधिक निर्धारित किया है। राजस्थान की सकल राज्य घरेलू उत्पाद वृद्धि दर 2010–11 में 10.97 प्रतिशत भारत की सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि दर 8.4 प्रतिशत से ज्यादा थी।

योजनाबद्ध विकास की उपलब्धियां

राजस्थान योजनाबद्ध विकास के 62 वर्ष पूर्ण कर चुका है। इस समयावधि में ग्यारह पंचवर्षीय योजनाएं सम्पन्न हो चुकी है। वर्तमान में बारहवीं पंचवर्षीय योजना क्रियान्वयन में है। योजनाबद्ध विकास में भारी पूंजी विनियोजन से राजस्थान का आर्थिक और सामाजिक विकास का मार्ग प्रशस्त हुआ है। राजस्थान अब "बीमारू राज्य" नहीं है। वर्तमान में राजस्थान देश की अर्थव्यवस्था का विकासशील राज्य के रूप में उभरा है। राजस्थान के विकास की गति के बढ़ने से भारत की अर्थव्यवस्था में इसकी भूमिका महत्वपूर्ण हो गई है। राजस्थान में योजनाबद्ध विकास की उपलब्धियाँ निम्नांकित हैं :

1. **सकल घरेलू उत्पाद** – राजस्थान ने आर्थिक विकास को गति देने के लिए आर्थिक नियोजन का मार्ग आत्मसात किया। वर्ष 1991 के बाद राजस्थान ने भारत के बदलते आर्थिक परिवेश के साथ अर्थव्यवस्था को समायोजित किया। आर्थिक नीतियों में किये गये बदलाव और आधारभूत संरचना के विकास पर बल देने से राजस्थान के सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि हुई है।

राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि कृषि उत्पादन पर निर्भर करती है। राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान लगभग 27 प्रतिशत है। यहाँ कृषि विकास मानसून पर भी निर्भर करता है। मानसून के अनुकूल होने की दशा में सकल घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान बढ़ जाता है।

स्थिर कीमतों (1999–2000) पर सकल राज्य घरेलू उत्पाद 1980–81 में 26004 करोड़ रूपये था जो बढ़कर 2000–01 में 81060 करोड़ रूपये तथा 2005–06 में और बढ़कर 109107 करोड़ रूपये हो गया। सकल राज्य घरेलू उत्पाद स्थिर कीमतों (2004–2005) पर 2011–12 में 215454 करोड़ रूपये (अग्रिम अनुमान) था। प्रचलित कीमतों पर सकल राज्य घरेलू उत्पाद 2011–12 में 368320 करोड़ रूपये था।

2. **सकल राज्य घरेलू उत्पाद आर्थिक वृद्धि दर** – राज्य में सकल राज्य घरेलू उत्पाद के बढ़ने से आर्थिक वृद्धि दर को गति मिली है। हाल के वर्षों में आर्थिक वृद्धि दर में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। राजस्थान की अर्थव्यवस्था पर वैश्विक मंदी 2008 का प्रभाव पड़ा है। वैश्विक मंदी के कारण 2008–09 में आर्थिक वृद्धि दर में गिरावट आई।

सकल राज्य घरेलू उत्पाद वृद्धि दर 2006–07 में उल्लेखनीय थी। इस वर्ष स्थिर कीमतों पर (1999–2000) सकल राज्य घरेलू उत्पाद वृद्धि दर 7.81 प्रतिशत तथा प्रचलित कीमतों पर 15.73 प्रतिशत थी। सकल राज्य घरेलू उत्पाद वृद्धि दर 2010–11 में स्थिर कीमतों पर 9.69 प्रतिशत तथा प्रचलित कीमतों पर 18.83 प्रतिशत रह गई।

3. **प्रति व्यक्ति आय** – शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद में जनसंख्या का भाग देकर प्रति व्यक्ति आय ज्ञात की जाती है। विगत वर्षों में शुद्ध राज्य घरेलू उत्पाद में वृद्धि से प्रति व्यक्ति आय बढ़ी है।

योजनाबद्ध विकास में प्रति व्यक्ति आय में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई है। प्रति व्यक्ति आय प्रचलित कीमतों पर 1980–81 में 1619 रूपए थी जो बढ़कर 2000–01 में 13020 रूपए तथा 2005–06 में और बढ़कर 17997 रूपए हो गई। प्रति व्यक्ति आय प्रचलित कीमतों पर 2011–12 में 47506 रूपए (अग्रिम अनुमान) हो गई। स्थिर (1999–2000) कीमतों पर प्रति व्यक्ति आय 1980–81 में 6200 रूपए थी जो बढ़कर 2000–01 में 12840 रूपए तथा 2005–06 में और बढ़कर 16460 रूपए हो गई। स्थिर कीमतों (2004–05) पर प्रति व्यक्ति आय 2011–12 में 27421 रूपये (अग्रिम अनुमान) हो गई।

4. **खाद्यान्न उत्पादन –** योजनाबद्ध विकास में कृषि के क्षेत्र में साठ के दशक में हरित क्रांति का लागू किया जाना महत्वपूर्ण घटना थी। हालांकि राजस्थान में सिंचाई सुविधाओं के अभाव के कारण हरित क्रांति का ज्यादा लाभ नहीं मिल पाया। इसके बावजूद भी राजस्थान ने खाद्यान्न उत्पादन के क्षेत्र में अच्छी प्रगति की है। खाद्यान्न उत्पादन में उतार–चढ़ाव अवश्य है।

खाद्यान्न उत्पादन 1950–51 में 29.4 लाख टन था जो बढ़कर 2000–01 में 100.4 लाख टन तथा 2006–07 में और बढ़कर 149.3 लाख टन हो गया। खाद्यान्न उत्पादन 2011–12 में 209.45 लाख टन (प्रावधानिक) था। कृषि उत्पादन सूचकांक 2005–06 में 153.84 तथा 2010–11 243.84 (प्रावधानिक) अंक था। खाद्यान्न उत्पादन के साथ तिलहन, गन्ना, और कपास का उत्पादन भी बढ़ा है। तिलहन का उत्पादन 1980–81 में 3.8 लाख टन, 2005–06 में 5. 9 लाख तथा 2007–08 में 4.2 लाख टन था। गन्ना उत्पादन 1980–81 में 11.6 लाख टन, 2005–06 में 4.8 लाख टन तथा 2007–08 में 5.9 लाख टन (अंतिम) था। कपास का उत्पादन 1980–81 में 66 हजार गाँठे से बढ़कर 2005–06 में 1.5 लाख गाँठे तथा 2007–08 में समान रहते हुए 1.5 लाख गाँठे रहा।

5. **सिंचाई** : राज्य में कृषि विकास के लिए सिंचाई सुविधाएं आवश्यक है। इस बात को ध्यान में रखते हुए पंचवर्षीय योजनाओं में सिंचाई को अधिक प्राथमिकता दी गई है। परिणामस्वरूप सिंचित क्षेत्र का विकास हुआ है।

शुद्ध सिंचित क्षेत्र 1951–52 में 10 लाख हैक्टेयर था जो बढ़कर 2000–01 में 49 लाख हैक्टेयर तथा 2005–06 में और बढ़कर 62.9 लाख हैक्टेयर हो गया। शुद्ध सिंचित क्षेत्र 2007–08 में 64.4 लाख हैक्टेयर था। सकल सिंचित क्षेत्र 2007–08 में 80.9 लाख हैक्टेयर था।

6. **विद्युत विकास**– आर्थिक विकास के लिए विद्युत महत्वपूर्ण आधारभूत संरचना है। राजस्थान का आर्थिक विकास की दृष्टि से विगत में पिछड़े रहने का प्रमुख कारण विद्युत का अभाव था। राज्य सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं में ऊर्जा विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी। योजनाबद्ध विकास में ऊर्जा की अधिष्ठापित क्षमता (installed capacity) में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई।

राज्य में ऊर्जा की अधिष्ठापित क्षमता 1950–51 में केवल 8 मेगावाट थी जो बढ़कर 2000–01 में 3998 मेगावाट तथा 2005–06 में और बढ़कर 5454 मेगावाट हो गई। ऊर्जा की अधिष्ठापित क्षमता दिसम्बर 2011 तक 9831 मेगावाट हो गई। राज्य में प्रति व्यक्ति विद्युत उपभोग में वृद्धि हुई है। प्रति व्यक्ति विद्युत उपभोग 2002–03 में 291 किलोवाट था जो तेजी से बढ़कर 2005–06 में 572 किलोवाट हो गया। प्रति व्यक्ति विद्युत उपभोग 1950–51 में केवल 3 युनिट था। ग्रामीण विद्युतीकरण कार्यक्रम के अन्तर्गत मार्च 2009 तक 37288 गाँवों को विद्युतीकृत एवं 8.96 लाख कुओं को ऊर्जीकृत किया गया।

7. **औद्योगिक विकास** – आर्थिक विकास के लिए औद्योगिक विकास आवश्यक है। योजनाबद्ध विकास में राज्य के औद्योगीकरण को गति मिली है। राज्य में योजनाबद्ध विकास के प्रारंभिक वर्षो में सूती वस्त्र, चीनी व वनस्पति घी की कुछ मीलें थी। वर्तमान में सूती व सिंथेटिक रेशे की इकाइयां, ऊनी, चीनी, सीमेंट, टेलीविजन, टायर ट्यूब, वनस्पति तेल, इंजीनियरिंग इकाइयां, खनिज आधारित बडी एवं मध्यम श्रेणी की इकाइयां है।

राज्य का औद्योगिक उत्पादन सूचकांक 1980–81 में 187 अंक था जो 2000–01 में बढ़कर 155 अंक तथा 2008–09 में और बढ़कर 263 अंक हो गया। वित्त वर्ष 2008–09 में विनिर्माण सूचकांक 262, खनिज सूचकांक 248, विद्युत सूचकांक 291 तथा औद्योगिक उत्पादन का सामान्य सूचकांक 263 था। औद्योगिक उत्पादन सूचकांक (आधार वर्ष 1993–94) वर्ष 2011–12 में 337.73 (प्रावधानिक) था।

8. **परिवहन विकास** – परिवहन महत्वपूर्ण आधारभूत संरचना है। सड़के और रेल्वे आर्थिक विकास के क्षेत्र में मानव शरीर में शिराएं और धमनियों की भाँति काम करती है। राज्य की पंचवर्षीय योजनाओं में परिवहन पर भारी वित्तीय संसाधन आवंटित किया गया। योजनाबद्ध विकास में सरकार द्वारा ध्यान केन्द्रित किये जाने के कारण राज्य में परिवहन विकास को गति मिली है।

सड़कों की कुल लम्बाई 1980–81 में 41194 किलोमीटर थी जो 2008–09 में बढ़कर 186806 किलोमीटर हो गई। इनमें 1980–81 में राष्ट्रीय राजमार्ग 2533 किलोमीटर था जो 2008–09 में बढ़कर 5714 किलोमीटर हो गया। वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार राज्य में 39753 आबाद गाँव है। वर्ष 2008–09 तक 31834 गाँवों को डामर की सड़कों से जोड़ा गया। डामर की सड़क से 80.08 प्रतिशत गांव जुड़े हुए है। मार्च 2008 में रेल मार्गों की कुल लम्बाई 5683 किलोमीटर थी। राज्य में 31 मार्च 2008 को प्रति हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में रेलमार्गों की औसतन लम्बाई 16.61 किलोमीटर थी।

9. **सामाजिक विकास** – योजनाबद्ध विकास में सामाजिक सेवाओं के क्षेत्र यथा शिक्षा, चिकित्सा, पेयजल, सामाजिक कल्याण, श्रम कल्याण, सामाजिक सुरक्षा आदि में सुधार हुआ है।

राज्य की साक्षरता दर 1951 में केवल 8.50 प्रतिशत थी जो बढ़कर 2011 में 67.1 प्रतिशत हो गई। पुरूष साक्षरता में राजस्थान ने अच्छी प्रगति की है। पुरूष साक्षरता 2011 में 80.5 प्रतिशत थी जो अखिल भारत पुरूष साक्षरता 82.14 प्रतिशत से थोड़ी कम है जबकि राज्य में महिला साक्षरता दर 52.7 प्रतिशत हो गई है।

योजनाबद्ध विकास में अर्थव्यवस्था के सभी विकास शीर्षों में प्रगति हुई है। राजस्थान आर्थिक पिछड़ेपन से निजात पा चुका है, किन्तु अभी भी राज्य के आर्थिक विकास की गति को और तेज किये जाने की आवश्यकता है। आर्थिक उदारीकरण में वित्तीय संसाधन जुटाना कठिन नहीं है। वर्तमान में स्वदेशी और विदेशी निवेशकों को आकर्षित कर विकास की गति को तेज किया जा सकता है।

नई औद्योगिक नीति

औद्योगिक विकास में औद्योगिक नीति महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। औद्योगिक विकास औद्योगिक नीति पर निर्भर करता है। राष्ट्र को यह निर्धारित करना होता है कि वह औद्योगिक विकास को कैसी दिशा देना चाहता है इसके लिए दिशा–निर्देश औद्योगिक नीति में समाहित होता है। अतः देश की औद्योगिक नीति उसके औद्योगिक विकास की आधारशिला समझी जाती है। वर्ष 1991 के बाद बदलते आर्थिक परिवेश में तो औद्योगिक नीति की उपयोगिता और भी बढ़ गई है।

औद्योगिक नीति के उद्देश्य

स्वतंत्रता के बाद घोषित औद्योगिक नीति के उद्देश्य लगभग समान रहे हैं। औद्योगिक नीति का प्रमुख उद्देश्य औद्योगिक उत्पादन में तीव्र गति से वृद्धि करना होता है। इसमें इस बात पर विशेष बल दिया जाता है कि न्यूनतम लागत पर अधिकाधिक उत्पादन हो। औद्योगिक नीति के द्वारा प्रायः सभी क्षेत्रों के विकास पर बल दिया जाता है। औद्योगिक नीति संतुलित क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा देती है। इससे उद्योग, कृषि तथा अन्य विविध क्षेत्रों का संतुलित विकास किया जा सकता है।

औद्योगिक नीति के माध्यम से सार्वजनिक क्षेत्र,

निजी क्षेत्र एवं सहकारी क्षेत्र का तेजी से विकास होता है, क्योंकि इसमें सभी क्षेत्रों के अधिकार और दायित्वों का स्पष्ट विभाजन होता है।

बड़े और लघु उद्योगों का क्षेत्र विभाजित कर इन्हें परस्पर प्रतिस्पर्धी होने से बचाया जाता है। जिससे लघु उद्योगों को पर्याप्त मात्रा में फलने–फूलने का अवसर मिलता है। उपभोग वस्तु उद्योगों और पूंजी वस्तु उद्योगों में परस्पर सहयोग को बढ़ावा देकर संतुलन स्थापित किया जा सकता है।

औद्योगिक नीति के द्वारा ही विदेशी पूंजी एवं साहस की सहभागिता सुनिश्चित होती है। प्रायः भारत जैसे विकासशील देशों में पूंजी के अभाव की पूर्ति विदेशी सहयोग द्वारा पूरी की जाती है।

औद्योगिक नीति

भारत में केन्द्र सरकार समग्र राष्ट्र के औद्योगिक विकास को ध्यान में रखते हुए ही औद्योगिक नीति की घोषणा करती है, जिसे प्रायः सभी राज्य आत्मसात करते हैं। राज्य सरकारें भी अपने स्तर पर स्वदेशी एवं विदेशी उद्यमियों को आकर्षित करने के लिए प्रलोभन युक्त घोषणा करती है।

राजस्थान की औद्योगिक नीति

राजस्थान में बेहतर औद्योगिक वातावरण निर्मित करने के लिए औद्योगिक नीति की घोषणा की गई। राजस्थान सरकार अपने स्तर पर स्वदेशी और विदेशी उद्यमियों को आकर्षित करने के लिए प्रयत्नशील है। राजस्थान में स्वतंत्रता के बाद औद्योगिक नीति 1978, औद्योगिक नीति 1990, औद्योगिक नीति 1994 तथा औद्योगिक नीति 1998 घोषित की जा चुकी है।

राजस्थान में 1978 की औद्योगिक नीति तथा 1990 की औद्योगिक नीति योजनाबद्ध विकास के दौर में घोषित की गई। भारत में वर्ष 1991 से आर्थिक उदारीकरण प्रारंभ होने के बाद औद्योगिक नीति 1994 तथा औद्योगिक नीति 1998 घोषित की गई। राज्य सरकार ने इन औद्योगिक नीति का निर्धारण केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित रूपरेखा के आधार पर किया है। राजस्थान की 1994 की औद्योगिक नीति और 1998 की औद्योगिक नीति ने राज्य की अर्थव्यवस्था को भारत की अर्थव्यवस्था के बदलते आर्थिक परिवेश के अनुसार समायोजित करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

राजस्थान की नई औद्योगिक नीति 2010

राजस्थान के खनिजों का अजायबघर होने के कारण भारत की अर्थव्यवस्था में विशेषकर औद्योगिक विकास में इस राज्य का महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारत में आर्थिक उदारीकरण को प्रारंभ हुए पूरे दो दशक बीत चुके हैं। इस दौरान अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक बदलाव आ चुके हैं। इस कारण राजस्थान की अर्थव्यवस्था को देश के बदलते आर्थिक पर्यावरण के साथ समायोजित करने के लिए औद्योगिक नीति में बदलाव की आवश्यकता थी। इस बात को ध्यान में रखकर राजस्थान सरकार ने राज्य की नई औद्योगिक नीति 2010 की घोषणा की। इस नई नीति की प्रमुख बातें निम्नांकित हैः

1. उद्देश्यः औद्योगिक नीति का प्रमुख उद्देश्य उत्पादन और सेवा क्षेत्र में निजी निवेश के माध्यम से उंची और दीर्घकालिक आर्थिक वृद्धि दर को प्राप्त करना निर्धारित किया गया है। आर्थिक विकास की गति को बढ़ाने के साथ–साथ अनुकूल पर्यावरण और संतुलित विकास को ध्यान में रखा जाएगा। निजी क्षेत्र के निवेश और उद्यम को आकर्षित करने के लिए आधारभूत ढांचे के विकास पर बल दिया गया है। इनके अलावा मानव संसाधन विकास और ज्ञान आधारित विकास को प्रोत्साहित किया जाएगा। बढ़ती युवा जनसंख्या को दृष्टिगत रखते हुए रोजगार सृजन पर विशेष बल दिया गया है।

2. व्यूहरचनाः औद्योगिक नीति के निर्धारित किये गये उद्देश्यों को अर्जित करने के लिए व्यूहरचना तैयार की गई

है। व्यूहरचना का ध्येय उद्योगों की प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता का विकास करना तथा देशी और विदेशी निवेश में वृद्धि करना है। व्यूहरचना में व्यावसायिक पर्यावरण में सुधार, गुणवत्ता वाले आधारभूत ढांचे का विकास, परियोजनाओं के लिए भूमि की आसान उपलब्धता, रोजगार सृजन, सूक्ष्म लघु व मध्यम उपक्रमों को प्रोत्साहन, चिन्हित थ्रस्ट क्षेत्रों का संवर्द्धन आदि को सम्मिलित किया गया है।

3. व्यावसायिक वातावरण में सुधारः राज्य सरकार व्यावसायिक वातावरण को सुधारने के लिए कटिबद्ध है। व्यापार नियामक प्रक्रिया को मजबूत बनाने के लिए प्रभावी कार्यवाही की जाएगी। व्यावसायिक वातावरण सुधार के लिए एकल खिड़की प्रणाली (सिंगल विंडो सिस्टम), नियामक व्यवस्था को सरल और युक्तिसंगत बनाना, औद्योगिक सलाहकार समिति की स्थापना आदि कदम उठाने का निर्णय लिया गया है। निजी और सार्वजनिक सम्पर्क को स्थापित व मजबूत करने के लिए उद्योग मंत्री की अध्यक्षता में 'औद्योगिक सलाहकार समिति' की स्थापना की जा चुकी है।

4. उच्च गुणवत्ता के आधारभूत ढांचे का विकासः राजस्थान में उद्योगों की प्रतिस्पर्धात्क क्षमता को बढ़ाने के लिए सड़के, अबाध विद्युत आपूर्ति, पर्याप्त जल, उच्च क्षमता डाटा स्थानान्तरण को विकसित किया जाएगा। आधारभूत ढांचे के विकास के लिए सार्वजनिक निजी भागीदारी, आधारभूत ढांचे के लिए कोष सर्जन, गैस ग्रिड का विकास, दिल्ली–मुम्बई इण्डस्ट्रियल कॉरिडोर (डी.एम.आई.सी.) के लाभ प्राप्त करना, प्रदूषण नियंत्रण और पर्यावरण सुरक्षा प्रणाली आदि प्रयास होंगे। राज्य में विभिन्नसरकारी एजेंसियों के बीच समन्वय स्थापित करने के लिए तथा आधारभूत क्षेत्र में निवेश को आकर्षित करने के लिए एक वैधानिक शक्ति प्राप्त 'आधारभूत ढांचागत विकास बोर्ड' का गठन किया जाएगा। रीको अगले पांच वर्षों में औद्योगिक उद्देश्यों के लिए 20000 एकड़ अतिरिक्त भूमि विकसित करेगा। राजस्थान में एक दिसम्बर 2009 तक विद्युत संस्थापित क्षमता 7716 मेगावॉट की है। वित्त वर्ष 2013–14 तक लगभग 10000 मेगावॉट की अतिरिक्त क्षमता विकसित करने की योजना है।

5. कौशल स्तरों और रोजगार योग्यता का विकास करनाः वैश्विक स्तर के उद्योगों के लिए कुशल मानव संसाधनों का होना आवश्यक है। राजस्थान के लोगों के लिए कौशल विकास और रोजगार योग्यता में सुधार करना राज्य सरकार की प्राथमिकता है। इसके लिए प्रौद्योगिकी और व्यावसायिक प्रशिक्षण संस्थानों की स्थापना की जाएगी तथा वर्तमान आई.टी.आई., पॉलीटेक्निक, इंजीनियरी और डिग्री कॉलेजों को प्रशिक्षण क्षमताओं से सुसज्जित किया जाएगा। औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों को 'सेंटर ऑफ एक्सीलैन्सी' में बदला जाएगा तथा सेवारत प्रशिक्षण के लिए 'ट्रेन टू गेन' योजना लागू की जाएगी। रोजगार क्षेत्रों की आवश्यकतों के अनुसार वर्तमान प्रशिक्षण तथा शैक्षणिक संस्थानों को अपनी रोजगार योग्यता में सुधार के लिए पाठ्यक्रमों और प्रशिक्षण गुणवत्ता में सुधार किया जाएगा। निर्धन और स्कूल छोड़ देने वाले व्यक्तियों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण उपलब्ध कराने और उन्हें संगठित क्षेत्र के लिए रोजगार योग्य बनाने के लिए तकनीकी रूप समुन्नत 'राजीव गांधी कौशल स्कूलों' की स्थापना के लिए राजस्थान सरकार शिक्षा एवं प्रशिक्षण क्षेत्र में अग्रणी संस्थाओं का सहयोग करेगी।

6. भूमि की आसान उपलब्धता सुनिश्चित करनाः

परियोजनाओं के लिए भूमि की त्वरित और आसान उपलब्धता निवेशकों की प्राथमिकता होती है। राजस्थान में अनुत्पादक और कम उर्वर भूमि की बहुतायत है। इसलिए राजस्थान में निवेश को आकर्षित करने और सुगम बनाने के लिए भूमि का लाभ संसाधन की तरह उठाया जा सकता है। राज्य में भूमि

की उपलब्धता को आसान बनाने के लिए भूमि उपयोग परिवर्तन, भवन मानचित्र आदि के अनुमोदन की प्रक्रियाओं को आसान बनाया जाएगा। भू अधिग्रहण प्रक्रिया का सरलीकरण किया जाएगा। इसके अलावा भूमि बैंक का सृजन तथा निवेशों के लिए भूमि से लाभ प्राप्त करने के लिए नए नीतिगत दिशा निर्देशों का निरूपण जाएगा।

7. विशिष्ट क्षेत्रों को प्रोत्साहनः राजस्थान कृषि प्रसंस्करण, कपड़ा, खनिज उत्पाद, हस्तकला, हथकरघा, रत्न और आभूषण जैसे कुछ क्षेत्रों में तुलनात्मक रूप से लाभपूर्ण स्थिति में है। औद्योगिक उत्पादन में भी इन क्षेत्रों का विशिष्ट स्थान है। इनमें से अधिकांश क्षेत्रों के लिए राज्य में कच्चा माल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। राजस्थान सरकार ज्ञान क्षेत्र, सूचना प्रौद्योगिकी, पर्यटन, खनन एवं खनिज प्रसंस्करण, रत्न एवं आभूषण, कृषि व्यवसाय, वस्त्र एवं परिधान, हस्तकला एवं हथकरघा, निर्यात, पिछड़े क्षेत्रों का विकास, हरित उद्योग, श्रम प्रधान क्षेत्र आदि विशिष्ट क्षेत्रों में निवेश बढ़ाने के लिए विशेष प्रयास करेगी। इनमें से अधिकांश क्षेत्रों जैसे खनन, पर्यटन आदि के लिए राजस्थान सरकार की पहले से ही विशिष्ट नीतियां है। ये नीतियां अबाध रूप से जारी रहेगी। नीतियों को और अधिक अनुकूल बनाने के लिए इनकी समीक्षा की जाएगी। राजस्थान सरकार ज्ञान के विस्तार और उच्च कौशल आधारित गतिविधियों जैसे बिजनेस प्रॉसेस आउटसोर्सिंग, नॉलेज प्रोसेस आउटसोर्सिंग, सूचना प्रौद्योगिकी को प्रोत्साहित करेगी।

8. संकुल विकास (क्लस्तर डवलपमेंट): राजस्थान सरकार पूरे राज्य में एम.एस.एम.ई के संकुल विकास को प्राथमिकत देना जारी रखेगी। वर्तमान संकुलों को सुदृढ़ किया जाएगा और नये संकुलों को चिन्हित करने का कार्य किया जाएगा। कम से कम 20 इकाइयों की संख्या वाले संकुल को विकसित करने के लिए नोडल संस्थान या औद्योगिक संघों को सामुदायिक सुविधाओं के विकास के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जाएगी। निजी भूमि को संकुलों की स्थापना के लिए बिना किसी परिवर्तन शुल्क के भूमि किस्म परिवर्तन की जाएगी। सरकारी भूमि पर बनने वाले संकुलों को सरकारी भूमि डी.एल.सी. दरों के 50 प्रतिशत पर आवंटित की जाएगी। संकुल अंतिम बिंदु तक आधारभूत ढांचा सुविधा प्राप्त करने के पात्र होंगे। राजस्थान हथकरघा विकास निगम को मजबूत बनाने के लिए बुनकर समूहों को प्रशिक्षण की परियोजनाएं दी जाएगी। इसके अलावा राजस्थान वित्त निगम सूक्ष्म और कुटीर उद्योगों में महिला उद्यमियों को प्रोत्साहित करने के लिए अनुदानित दरों पर ऋण प्रदान करने की एक विशेष योजना आरंभ करेगा।

सार रूप में देखें तो राजस्थान की नई औद्योगिक और निवेश संवर्धन नीति भारत में 1991 के बाद औद्योगिक संरचना में हुए क्रांतिकारी बदलाव के साथ राजस्थान के औद्योगिक वातावरण को समायोजित करने की दिशा में महत्त्वपूर्ण पहल है। राज्य की इस नई औद्योगिक नीति में आधारभूत ढांचे और कौशल विकास पर विशेष बल दिया गया है। इससे औद्योगिक निवेश के साथ सेवा क्षेत्र में भी निवेश प्रोत्साहित होगा। नई नीति राज्य के औद्योगिक विकास को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होगी।

औद्योगिक विकास

राजस्थान अनेक औद्योगिक घरानों की जन्मभूमि है। यहां की धरा ने स्टील किंग लक्ष्मी निवास मित्तल, बिड़ला, डालमिया, सिंघानिया, बॉगड़, पौद्दार आदि उद्योगपतियों को जन्म दिया है। इन्होंने देश और विदेश में औद्योगिक और व्यापारिक जगत में ख्याति अर्जित की है।

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय राजस्थान एक पिछड़ा हुआ प्रान्त था। राज्य में बिजली, पानी व यातायात के साधनों के अभाव के कारण बड़े पैमाने के आधुनिक उद्योगों का विकास

संभव नहीं था। इसके अलावा राजस्थान के औद्योगिक विकास के क्षेत्र में केन्द्र सरकार के कुल निवेश का लगभग 2 प्रतिशत भाग ही पाया जाता है। आज राजस्थान योजनाबद्ध विकास के 62 वर्ष पूरे कर चुका है। सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं में औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक आधारभूत ढांचागत संरचना और आधारभूत सामाजिक सरचंना के विकास पर काफी बल दिया है। राज्य में केन्द्र सरकार के सार्वजनिक उपक्रम भी है। विगत में केन्द्र सरकार ने यहां के कई जिलों को औद्योगिक विकास की दृष्टि से पिछड़ा घोषित किया था। केन्द्रीय सब्सिडी की व्यवस्था के अनुसार पिछड़े जिलों को सब्सिडी का लाभ मिला। राज्य सरकार यहां से पलायन कर गये उद्योगपतियों तथा देश–विदेश के अन्य उद्यमियों को राज्य में विनियोग बढ़ाने हेतु आकर्षित करके के लिए प्रयत्नशील है। राजस्थान सरकार द्वारा राज्य की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर 23 व 24 सितम्बर, 2000 को जयपुर में 'अन्तर्राष्ट्रीय राजस्थानी सम्मलेन–2000' का आयोजन किया गया। अब राजस्थान में आधारभूत संरचना की स्थिति सन्तोषजनक होने के कारण बड़े उद्यमियों की मनोवृत्ति बदल रही है। उद्यमियों के कदम राज्य में निवेश के लिए बढ़ने लगे हैं। फिर राजस्थान में औद्योगिक विकास हेतु प्राकृतिक एवं मानवीय संसाधन बहुतायत में उपलब्ध है। यहां विभिन्न उद्योगों के विकास की खूब संभावनाएं हैं। राज्य में खनिज आधारित उद्योगों का विकास किया जाए तो यह देश के औद्योगिक दृष्टि से सम्पन्न राज्यों की श्रेणी में आ सकता है।

राज्य के सकल घरेलू उत्पाद में उद्योग का भाग – राजस्थान के सकल राज्य घरेलू उत्पाद में उद्योग का भाग 2000–01 में 27.8 प्रतिशत था जो 2005–06 में बढ़कर 29. 7 प्रतिशत हो गया । वित्त वर्ष 2011–12 के सकल राज्य घरेलू उत्पाद में (स्थिर कीमतों पर) उद्योग का भाग 29.85 प्रतिशत रहा है।

उद्योग वृद्धि दर – राजस्थान में खनन व विनिर्माण क्षेत्र की वृद्धि दर 2005–06 में 12.09 प्रतिशत उल्लेखनीय रही। वित्त वर्ष 2008–09 में खनन व विनिर्माण क्षेत्र वृद्धि दर घटकर 3.21 प्रतिशत (अग्रिम अनुमान) रह गई। वैश्विक मंदी 2008 का असर राजस्थान की अर्थव्यवस्था पर भी पड़ा।

वैश्विक मंदी का राजस्थान पर प्रभाव – वैश्विक मंदी 2008 से विश्व अर्थव्यवस्था पर बुरा प्रभाव पड़ा। इससे अनेक विकसित देशों की विकास दर घटी। भारत की अर्थव्यवस्था पर हालाकि वैश्विक मंदी का असर बहुत ज्यादा नहीं पड़ा, किन्तु भारत की विकास दर 2008–09 में घटकर 6.7 प्रतिशत रह गई जबकि यह 2007–08 में 9 प्रतिशत थी। भारत की औद्योगिक विकास दर 2008–09 में 2.6 प्रतिशत तक गिर गई।

स्थिर कीमतों (1999–2000) पर राजस्थान की सकल राज्य घरेलू उत्पाद वृद्धि दर 2005–06 में 6.70 प्रतिशत थी जो घटकर 2008–09 में 5.48 प्रतिशत रह गई। वित्त वर्ष 2008–09 में खनन व विनिर्माण वृद्धि दर 3.21 प्रतिशत तक गिर गई। इससे स्पष्ट है राजस्थान की अर्थव्यवस्था पर वैश्विक मंदी 2008 का अधिक प्रभाव पड़ा है।

पंजीकृत फैक्ट्रियां – राजस्थान में भारतीय फैक्ट्री एक्ट 1948 के अन्तर्गत सेक्शन 2 एम (i), सेक्शन 2 एम (ii) तथा सेक्शन 85 के अन्तर्गत पंजीकृत फैक्ट्रियां है। राजस्थान में पंजीकृत फैक्ट्रियों की संख्या 1987 में 9665 थी जो 2007 में बढ़कर 10001 हो गई।

लघु उद्योगों का विकास – अर्थव्यवस्था में लघु उद्योगों का महत्वपूर्ण स्थान है। राज्य सरकार ने लघु उद्योगों के विकास पर विशेष बल दिया हैं। लघु उद्योगों में काफी व्यक्तियों को रोजगार मिला हुआ है। राज्य में लघु उद्योगों की पंजीकृत इकाइयां 1975–76 में 20102 थी जो 2008–09 में बढ़कर 3.20 लाख हो गई। लघु उद्योगों में 1975–76 में 1.37 लाख व्यक्तियों को रोजगार मिला हुआ था। लघु उद्योगों में रोजगार प्राप्त व्यक्तियों की संख्या 2008–09 में बढ़कर 13.16 लाख हो गई। लघु उद्योगों में विनियोजित पूंजी 1975–76 में 72.37 करोड़ रूपए से बढ़कर 2008–09 में 8888.21 करोड़ रूपए हो गई।

खादी एवं ग्रामोद्योग – खादी एवं ग्रामोद्योग की ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन की दृष्टि से महत्वपूर्ण भूमिका है। राज्य में खादी एवं ग्रामोद्योग का मुख्य उद्देश्य श्रमिकों को उत्तम गुणवत्ता की वस्तुओं के उत्पादन में सहायता प्रदान करना, कारीगरों को प्रशिक्षण दिलाना, सहकारिता की भावना जागृत करना, कच्चा माल तथ आवश्यक औजारों की पूर्ति द्वारा उत्पादन में वृद्धि करना है। राज्य में खादी एवं ग्रामोद्योग को बढ़ावा देने के लिए 'फैशन फोर डवलपमेंट योजना' संचालित की जा रही है। राज्य में गुणवत्ता पूर्ण एवं आकर्षक खादी वस्त्रों के उत्पादन में वृद्धि हुई है। वर्ष 2008–09 में खादी का 18.14 करोड़ रूपए का उत्पादन एवं ग्रामोद्योग में 301.79 करोड़ रूपए का उत्पादन हुआ।

औद्योगिक उत्पादन – वर्तमान में राजस्थान में सूती एवं सिंथेटिक रेशे की इकाइयां, ऊनी, चीनी, सीमेन्ट, टेलीविजन, टायर टयूब फैक्ट्री, वनस्पति तेल की मिलें, इंजीनियरी की औद्योगिक इकाइयां, खनिज आधारित बड़ी एवं मध्यम इकाइयां है। राजस्थान से मुख्य रूप से रत्न, आभू ाण, टेक्सटाइल, अभियांत्रिक वस्तुएं, रेडीमेड वस्त्र, दस्तकारी वस्तुएं, रसायन, कृषि उत्पादन, खनिज आधारित वस्तुओं का निर्यात किया जाता है।

राजस्थान के औद्योगिक उत्पादन में 36 उत्पाद है। इनमें से कुछ प्रमुख उत्पादन इस प्रकार हैः– वर्ष 2008 में वनस्पति घी का उत्पादन 57480 टन, खाद्य तेल 120866 टन, सूती कपड़ा 203.40 लाख मीटर, सिथेंटिक तागा 536. 60 लाख कि.ग्रा., यूरिया 371883 टन, सल्फ्यूरिंक एसिड़ 594045 टन, सीमेन्ट 101.20 लाख टन, वाटर मीटर 89592 आदि।

विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज)

राजस्थान में औद्योगिक विकास एवं रोजगार वृद्धि के लिए विशेष आर्थिक क्षेत्र स्थापित करना प्रस्तावित है। विशेष आर्थिक क्षेत्र (सेज) औद्योगिक सेवाओं एवं व्यापार हेतु एक विशेष सीमांकित क्षेत्र है जिन्हें 'डीम्ड फोरेन टेरिटरी' का दर्जा देते हुए सीमा उत्पाद शुल्क एवं अन्य शुल्कों से मुक्त रखा गया है।

राजस्थान में सीतापुरा (जयपुर) में जैम्स एवं ज्वैलरी हेतु विशेष आर्थिक क्षेत्र की स्थापना की जा रही है। इसके अलावा जोधपुर में हैण्डीक्राफ्ट एवं ग्वार गम की इकाइयों के लिए विशेष आर्थिक क्षेत्र की स्थापना प्रगति पर है। जयपुर में रीको और महिन्द्रा लाईफ स्पेस डवलपर लिमिटेड द्वारा जयपुर–अजमेर राष्ट्रीय राजमार्ग पर पब्लिक प्राइवेट पॉर्टनरशिप (पीपीपी) के अन्तर्गत विशेष आर्थिक क्षेत्र की स्थापना की जा रही है।

राजस्थान के औद्योगिक विकास ने अब गति पकड़ ली है। राज्य में आधारभूत संरचना के सुधर जाने से अब आई.टी. क्षेत्र की दिग्गज कम्पनियां जैसे इनफोसिस लिमिटेड, विप्रो लिमिटेड, टेक महिन्द्रा, नगारो आदि राज्य में निवेश में रूचि दिखा रही है।

कृषि विकास

राजस्थान की अर्थव्यवस्था में कृषि का महत्वपूर्ण स्थान है। वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार राज्य की कुल जनसंख्या में ग्रामीण जनसंख्या का भाग 75.07 प्रतिशत है। यह ग्रामीण जनसंख्या जीवन बसर के लिए कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्र पर निर्भर है। राजस्थान में कृषि मानसून से प्रभावित है। यहां मानसून की प्रकृति साधारणतया अनियमित एवं अनिश्चित है। राजस्थान में मानसून विलम्ब से आता है और जल्दी चला जाता है। यहां मानसून की अवधि लगभग तीन माह ही है। राज्य में भूमिगत जल स्तर तेजी से गिरता जा रहा है। राजस्थान में अकाल और अभाव की स्थिति से भारी क्षति होती है। वित्त वर्ष 2008–09 में 12 जिलों के 7402 गांवों की 100 लाख जनसंख्या अकाल और अभाव से प्रभावित हुई । इस वर्ष 47.7 लाख रूपये का भू–राजस्व निलंबित किया गया।

राजस्थान का भूमि उपयोग उद्देश्य के लिए रिपोर्टिंग क्षेत्रफल 2008 में 34270 हजार हैक्टेयर था। इसमें सकल कृषिगत क्षेत्र 22208 हजार हैक्टैयर था जो रिपोर्टिंग क्षेत्रफल का 64.80 प्रतिशत था। राज्य में 2007–08 में विभिन्न स्त्रोतों से सकल सिंचित क्षेत्र 8088 हजार हैक्टैयर था जो सकल कृषिगत क्षेत्र का 36.42 प्रतिशत था।

सकल राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि एवं संबद्ध क्षेत्र का योगदान – किसी अर्थव्यवस्था में एक वर्ष की अवधि में समस्त वस्तुओं और सेवाओं के मौद्रिक मूल्य को सकल राज्य घरेलू उत्पाद कहा जाता है। राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि, उद्योग और सेवाएं के उत्पादन को सम्मिलित किया जाता है। वित्त वर्ष 2005–06 में सकल राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान 27.52 प्रतिशत, उद्योग का योगदान 29.72 प्रतिशत तथा सेवाओं का योगदान 42.76 प्रतिशत था। वित्त वर्ष 2011–12 के अग्रिम अनुमानों में सकल राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान 22.09 प्रतिशत, उद्योग का योगदान 29.85 प्रतिशत तथा सेवाओं का योगदान 48.60 प्रतिशत था। पिछले कुछ वर्षो में (2008–09 से 2011–12) सकल घरेलू उत्पाद में कृषि के योगदान को देखे तो पाते हैं कि स्थिर कीमतों (2004–2005) पर सकल राज्य घरेलू उत्पाद में कृषि का योगदान लगभग 22 प्रतिशत स्थिर सा हो गया है।

कृषि वृद्धि दर – कृषि एवं सम्बद्ध सेवाओं की वृद्धि दर में उच्चावचन की प्रवृत्ति व्याप्त है। इसके पीछे कारण कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्र का मानसून पर निर्भर होना है। कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्र वृद्धि दर 2005–06 में ऋणात्मक 0.88 प्रतिशत थी। कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्र वृद्धि दर 2008–09 में बढ़कर 6. 12 प्रतिशत (अग्रिम अनुमान) हो गई।

राजस्थान की प्रमुख फसलें

राजस्थान की अर्थव्यवस्था के कृषि प्रधान होने के कारण यहां विभिन्न फसलों का उत्पादन होता है। राज्य में रबी की फसलों में गेहूँ, चना, जौ, सरसों, अलसी, गन्ना, तारामीरा, जीरा, धनिया, आलू, मटर, अफीम तथा खरीफ की फसलों में ज्वार, बाजरा, मक्का, मूँगफली, तिल, सोयाबीन, चावल, मूँग, मोठ, अरहर, सूरजमुखी आदि मुख्य है।

खाद्यान्न उत्पादन

योजनाबद्ध विकास में खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि हुई है। यहां खाद्यान्न उत्पादन में उच्चावचन की प्रवृत्ति देखने को मिलती है। इसका कारण कृषि का मानसून पर निर्भर होना है। खाद्यान्न उत्पादन 1960–61 में 45.41 लाख टन था जो बढ़कर 1990–91 में 109.35 लाख टन हो गया। खाद्यान्न का उत्पादन 2011–12 में और बढ़कर 209.45 लाख टन (प्रावधानिक) हो गया।

खाद्यान्न उत्पादन में अनाज और दालों के उत्पादन को सम्मिलित किया जाता है। अनाज में चावल, ज्वार, बाजरा, मक्का, गेहूँ, जौ प्रमुख फसलें है। बाजरा पश्चिमी राजस्थान की प्रमुख फसल है। बाजरे के उत्पादन में राजस्थान का देश में प्रथम स्थान है। देश के कुल बाजरा उत्पादन का 1/3 भाग राजस्थान में होता है। देश के कुल मक्का उत्पादन का 1/8 भाग राजस्थान में होता है। देश में उत्तरप्रदेश के बाद सबसे अधिक जौ का उत्पादन राजस्थान में होता है।

राजस्थान में 2008–09 में अनाज उत्पादन 140.55 लाख टन, दलहन उत्पादन 18.98 लाख टन, इन दोनो को मिलाकर खाद्यान्न उत्पादन 159.53 लाख टन (संभावित) था।

तिलहन - देश में खाद्य तेलों का अभाव है। खाद्य तेल के आयात पर विदेशी मुद्रा भण्डार खर्च होते है। राजस्थान में तिलहन उत्पादन में वृद्धि हुई है। हाल ही के वर्षों में राजस्थान ''तिलहन क्रान्ति'' की ओर अग्रसर हुआ है। राज्य में मूंगफली , तिल, सोयाबीन, राई व सरसों, अलसी, तारामीरा का उत्पादन होता है।

राजस्थान में तिलहन का उत्पादन 1960–61 में 1.72 लाख टन था जो 1990–91 में बढ़कर 23.56 लाख टन हो गया। तिलहन का उत्पादन 2007–08 के 42.29 लाख टन की तुलना में 2008–09 में 55.36 लाख टन होने का अनुमान है, जो गत वर्ष की तुलना में 30.91 प्रतिशत वृद्धि दर्शाता है। तिलहन के अन्तर्गत खरीफ फसल में मूंगफली, तिल, सोयाबीन, अरण्डी तथा रबी फसल में राई व सरसों, तारामीरा व अलसी सम्मिलित है।

गन्ना – गन्ना चीनी उद्योग का कच्चा माल है। राजस्थान में गन्ने का उत्पादन बूंदी, उदयपुर, गंगानगर, चित्तौड़गढ़

आदि जिलों में होता है। राज्य में गन्ने का उत्पादन अधिक नहीं होता है। गन्ने का उत्पादन 2007–08 में से 5.94 लाख टन की तुलना में 2008–09 में 3.02 लाख टन होने की संभावना है जो 49.16 प्रतिशत कमी दर्शाता है।

कपास – कपास एक महत्वपूर्ण नकदी फसल है। राज्य में कपास विशेषतः गंगानगर और हनुमानगढ़ जिले में बोई जाती है। कपास का उत्पादन 2007–08 में 8.62 लाख गॅाठे था जबकि 2008–09 में 7.26 लाख गॅाठें उत्पादित होने की संभावना है जो 15.78 प्रतिशत की कमी दर्शाता है।

फल, सब्जियॉ और मसालें – राज्य के प्रमुख फल पपीता, अमरूद, सन्तरे हैं। सब्जियों में आलू व प्याज का उत्पादन होता है। इनके अलावा यहां जायकेदार मसालों का भी उत्पादन होता हैं। मसालों में सूखी मिर्च, धनिया, जीरा, अजवाईन, मैथीं, हल्दी, अदरक, सौंठ, लहसुन का उत्पादन होता है।

राजस्थान के आर्थिक विकास में बाधाएं

राजस्थान योजनाबद्ध विकास के बासठ वर्ष पूरे कर चुका है। इस समयावधि में दस पंचवर्षीय योजनाएं, छह वार्षिक योजनाएं पूर्ण हो चुकी है तथा वर्तमान में बारहवीं पंचवर्षीय योजना क्रियान्वयन मे है। सबसे महत्तपूर्ण बात यह है कि 1951–52 से लेकर 2006–07 तक के योजनाबद्ध विकास में 74651 करोड़ स्पष्ट व्यय किये जा चुके हैं। राजस्थान के तीव्र आर्थिक विकास में कुछ बड़ी बाधाएं हैं जिनमें निम्नलिखित उल्लेखनीय है :

1. **मरूस्थल** – राजस्थान में मरूस्थल आर्थिक विकास में बड़ी बाधा है। राज्य के कुल भू–भाग का 61.11 प्रतिशत भाग रेत के धोरों से पटा हुआ है। राज्य के पश्चिम और उत्तर पश्चिम क्षेत्र के 11 जिलों में राज्य की 40 प्रतिशत जनसंख्या थार मरूस्थल में निवास करती है। रेत के समुद्र में प्रदेशवासी कठोर जीवन जीते हैं।

2. **मानसून पर निर्भरता** – राज्य में कृषि मानसून पर निर्भर है। हालांकि योजनाबद्ध विकास में सिंचाई सुविधाओं का विकास हुआ है, किन्तु अर्थव्यवस्था में कृषि की भूमिका को देखते हुए सिंचाई संसाधनों का आज भी कमी है। कृषि उत्पादन का सकल घरेलू उत्पाद पर प्रभाव पड़ता है। कृषि उत्पादन के घटने–बढ़ने से सकल घरेलू उत्पाद में उच्चावचन की प्रवृत्ति देखने को मिलती है। मानसून के अनुकूल नहीं होने की दशा में अर्थव्यवस्था के विकास की गति धीमी पड़ जाती है।

3. **अकाल** – राज्य में अकाल और सूखा आर्थिक विकास में बाधा बना हुआ है। राज्य में अकाल काले नाग की भांति डैने फैलाए पसरा है। राजस्थान अतीत में भी अकाल की चपेट में रहा। वर्तमान में भी अकाल से निजात नहीं मिला है। वर्ष 1981–82 से लेकर 2008–09 तक 27 वर्षों में केवल 1983–84, 1990–91, 1994–95 तीन वर्ष ही ऐसे रहे जब राज्य को अकाल का सामना नहीं करना पड़ा। शेष सभी वर्षों में न्यूनाधिक अकाल की स्थिति थी। वर्ष 1991–92 और 2002–03 में पूरा प्रदेश अकाल की भयंकर चपेट में था। वर्ष 2008–09 में भी 12 जिलों के 7402 गॅावों की एक करोड़ जनसंख्या अकाल से प्रभावित थी। इस वर्ष 47.7 लाख रूपए भू–राजस्व निलंबित किया गया।

4. **पानी की कमी** – राजस्थान पानी की कमी वाला राज्य है। यहां सतही जल एवं भूमिगत जल दोनों दुर्लभ संसाधन है। कई स्थानों में भूमिगत जल मानव एवं पशुओं दोनों के उपयोग के अनुकूल नहीं है। प्रदेश का बड़ा भाग मरूथल, ऊपर से मानसून की अनिश्चितता फिर अकाल से मरू प्रदेश के बाशिंदों को पानी की कमी का सामना करना पड़ता है। सतत् प्रवाही नदियों के बावजूद पूर्वी राजस्थान भी पेयजल समस्या से अछूता नहीं है। राज्य में साफ एवं सुरक्षित पेयजल जटिल समस्या है। राज्य सरकार शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में पीने का पानी मुहैया कराने के लिए प्रयत्नशील है। अगर राजस्थान में पानी की समस्या का समाधान नहीं होता है तो यह भविष्य में आर्थिक विकास के मार्ग में बाधा बन सकता है।

5. **अधिक जनसंख्या** – राजस्थान अधिक जनसंख्या वाला प्रदेश है। यहां की जनसंख्या वृद्धि दर ऊँची है। गुणात्मक जनसंख्या का अभाव है। अधिक जनसंख्या विकास में बाधा है। राजस्थान की जनसंख्या 1951 से सभी

जनगणनाओं में बहुत तेज गति से बढ़ी है। राजस्थान की जनसंख्या 1991 में 4.40 करोड़ थी जो 2011 में बढ़कर 6.86 करोड़ हो गई। राजस्थान की जनसंख्या की 2001 में दशकीय वृद्धि 28.41 प्रतिशत थी जो भारत की जनसंख्या की दशकीय वृद्धि 21.34 प्रतिशत से अधिक थी। राजस्थान में भारत की कुल जनसंख्या का 5.67 प्रतिशत भाग निवास करता है। अधिक जनसंख्या से राजस्थान में बेरोजगारी की समस्या मुखर हो गयी है।

6. **कम साक्षरता** – राजस्थान जनसंख्या में आगे तथा साक्षरता में पीछे है। महिला साक्षरता में स्थिति चिन्ताप्रद है, हालांकि राज्य में साक्षरता में 1991 की तुलना में 2011 में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, किन्तु राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में स्थिति उत्साहवर्द्धक नहीं है। राज्य में 2011 में साक्षरता दर 67.1 प्रतिशत, पुरूष साक्षरता 80.5 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता 52.7 प्रतिशत थी।

7. **उर्जा की कमी** – उर्जा महत्त्वपूर्ण आधारभूत संरचना है। उर्जा विकास से ही आर्थिक विकास संभव है। उर्जा के अभाव में औद्योगिक विकास महज कल्पना है। राजस्थान में उर्जा की कमी है। यहां उर्जा की मांग और पूर्ति में अंतराल है। राज्य में प्रति व्यक्ति विद्युत उपभोग भी कम है।

8. **कम पूंजी निवेश** – कम पूंजी निवेश आर्थिक विकास में बाधा रहा है। हालांकि राजस्थान में जन्में औद्योगिक घरानों ने देश–विदेश के विकास में बड़ी भूमिका निभाई है, किन्तु राजस्थान में यहां के मूल उद्यमियों का निवेश अपेक्षित नहीं रहा। योजनाबद्ध विकास में सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों का खूब विकास हुआ, किन्तु राजस्थान में केन्द्र सरकार के सार्वजनिक उपक्रम कम है। राजस्थान के औद्योगिक क्षेत्र में समस्त भारत के कुल केन्द्रीय विनियोगों का लगभग 2 प्रतिशत अंश ही पाया जाता है। वर्ष 1991 के आर्थिक उदारीकरण के बाद सार्वजनिक उपक्रमों की भूमिका घट गई है। राजस्थान आर्थिक उदारीकरण के दौर में विदेशी निवेशकों को अधिक आकर्षित नहीं कर सका है।

राजस्थान में आर्थिक विकास की संभावनाएं

विकासशील देशों में अग्रणी भारत की अर्थव्यवस्था में राजस्थान की अर्थव्यवस्था महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। राजस्थान आर्थिक और सामरिक दृष्टि से देश का महत्त्वपूर्ण राज्य है। भौगोलिक क्षेत्रफल की दृष्टि से यह देश का सबसे बड़ा राज्य है। थार मरूस्थल के कारण राजस्थान की विशेष पहचान है। हालांकि राज्य का अधिकांश भाग रेत के धोरों से पटा हुआ है, किन्तु यह धोरे रूपी सागर अपने में अथाह संपदा समेटे हुए हैं। राजस्थान ने आर्थिक सुधारों को आत्मसात कर देश की प्रगति के साथ कदमताल की है। वर्तमान में राज्य में विदेशी पूंजी आकर्षित होने लगी है।

राजस्थान के प्राकृतिक संसाधनों की दृष्टि से सम्पन्न होने के कारण यहां आर्थिक विकास की काफी संभावनाएं हैं। राजस्थान में आर्थिक विकास की भावी संभावनाएं निम्नांकित है :

1. **खनिजों की प्रचुरता** – राजस्थान खनिज सम्पदा की दृष्टि से समृद्ध प्रान्त है। यहां विविध प्रकार के खनिज पाये जाते हैं। कुछ खनिजों का उत्पादन तो केवल राजस्थान में ही होता है। राजस्थान कई खनिजों के उत्पादन में देश में अग्रणी है।

राजस्थान में धात्विक खनिजों में ताँबा, सीसा, जस्ता, लोहा, मैगनीज, चांदी, टंगस्टन, आणविक खनिज तथा अधात्विक खनिजों में अभ्रक, जिप्सम, राक फास्फेट, लाइम स्टोन (चूना पत्थर), सोप स्टोन, संगमरमर व ग्रेनाइट, एस्बेस्टस, पाइराइट्स, बेन्टोनाइट, पन्ना व गारनेट, चायना क्ले व व्हाइट क्ले, फायर क्ले, सिलिका सैण्ड पाये जाते है। इनके अलावा खनिज ईंधन में लिग्नाइट राज्य में उपलब्ध है। खनिज तेल व प्राकृतिक गैस भी राज्य में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है।

राजस्थान का अधात्विक खनिजों के उत्पादन मूल्य की दृष्टि से भारत में प्रथम स्थान है। खनिज सम्पदा की दृष्टि से बिहार के बाद राजस्थान का ही नाम आता है। राजस्थान जिप्सम, सीसा, जस्ता, रॉक फास्फेट, मैगनीज, चाँदी, एस्बेस्ट्स फेल्सपार आदि के उत्पादन में देश में अग्रणी है।

2. नेशनल काउंसिल ऑफ एप्लाइड इकोनॉमिक रिसर्च,

नई दिल्ली ने राजस्थान का टैक्नो–इकोनॉमिक सर्वेक्षण करके विभिन्न उद्योगों की क्षमता और भावी संभावना को ध्यान में रखते हुए राजस्थान में निम्नांकित उद्योगों की स्थापना का औचित्य बताया– ट्रैक्टर व संबंधित यंत्र, डीजल ईंजन, स्कूटर व मोटर साइकिलें, मोटर गाड़ियों के पुर्जे, विद्युत सामग्री, इस्पात के तार, पाइप, टयूब, कीलें, नट बोल्ट, पोर्टलैण्ड सीमेन्ट, सफेद व रंगीन सीमेन्ट, कांच, तेल शोधक आदि कारखाने।

3. राजस्थान में निम्नांकित उद्योगों के विकास की प्रबल संभावनाएं हैं :

(i) कोटा में जिप्सम आधारित सल्फ्यूरिक एसिड के निर्माण का संयंत्र लगाने पर सक्रिय रूप से विचार किया जाना चाहिए।

(ii) उदयपुर में एक पिग लोहा संयंत्र लगाने की आवश्यकता है जहां निकटवर्ती क्षेत्रों के कच्चे लोहे का उपयोग किया जा सकता है।

(iii) सवाई माधोपुर में लाइम स्टोन (सीमेंटग्रेड) के भरपूर भण्डार है इन भण्ड़ारों के उपयोग के लिए सीमेंट उद्योग को चालू कर इन भण्डारों का बेहतर उपयोग किया जा सकता है।

(iv) निम्न श्रेणी की जिप्सम से दीवारों के बोर्ड बनाये जा सकते है।

(v) उत्तम सेलेनाइट के भण्डारों का उपयोग प्लास्टर ऑफ पेरिस व अन्य उद्योगों का विकास करने में किया जाना चाहिए।

(vi) फेल्सपार क्वार्टस व चिकनी मिट्टी के उपयोग से चीनी मिट्टी के सामान के कारखानों की स्थापना का क्षेत्र बढ़ सकता है।

(vii) सिलिका के उपयोग से कांच के उद्योग का विस्तार किया जा सकता है।

4. **खनिज तेल एवं प्राकृतिक गैस के विपुल भण्डार** – राजस्थान में 1984 में जैसलमेर के सादेवाला क्षेत्र में खनिज तेल तथा जुलाई 1990 में डांडेवाला (जैसलमेर) में प्राकृतिक गैस के विशाल भण्डार मिले थे। वर्ष 1983 में जैसलमेर के घोटारू नामक स्थान पर गैस के भण्डार प्राप्त हुए थे।

राजस्थान के बाड़मेर बेसिन में मौजूदा अनुमानों के अनुसार 6.5 अरब बैरल तेल के भण्डार है। ऐसे में 2011 के अंत तक प्रदेश के चिन्हित तेल क्षेत्रों से 2.40 लाख बैरल प्रतिदिन तेल उत्पादन की उम्मीद है। केयर्न इण्डिया के अनुसार 2011 तक राजस्थान देश के सकल घरेलू तेल उत्पादन का चौथाई से भी बड़ा हिस्सा मुहैया करने लगेगा। बाड़मेर में मंगला, भाग्यम, एश्वर्या व अन्य क्षेत्रों के कुल 196 तेल कुओं में उत्खनन शुरू हो गया है। राजस्थान के बाड़मेर में खनिज तेल की विपुल उपलब्धता को देखते हुए पश्चिमी राजस्थान में खनिज तेल रिफाइनरी की स्थापना की सम्भावना है, राज्य सरकार इस दिशा में प्रयत्नशील है।

5. **कृषि संपदा पर आधारित उद्योग** – कृषि संपदा की दृष्टि से राजस्थान का देश में महत्त्वपूर्ण स्थान है। राज्य में कपास, गन्ना, तिलहन, मक्का, चना व गेहूँ आदि ऐसी फसलें हैं जिन पर आधारित अनेक छोटे बड़े उद्योग स्थापित किये जा सकते हैं। इन्दिरा गांधी नहर परियोजना क्षेत्र में कृषिगत उत्पादन में निरन्तर वृद्धि हो रही है। राजस्थान में कुल खाद्यान्न उत्पादन 2005–06 में 108.24 लाख टन था जो 2011–12 में बढ़कर 209.45 लाख टन (प्रावधानिक) हो गया।

पिछले वर्षों में राजस्थान तिलहन के उत्पादन की दृष्टि से एक महत्त्वपूर्ण राज्य के रूप में उभरा है। देश के तिलहन उत्पादन का 12 प्रतिशत भाग राजस्थान में होने लगा है। सरसों के उत्पादन में यह एक अग्रणी राज्य हो गया है। यहां देश की कुल सरसो के उत्पादन का 35 प्रतिशत अंश होने लगा है।

राज्य में जयपुर, अलवर, धौलपुर, चित्तौड़गढ़, जोधपुर, डूंगरपुर, झुन्झुनू, हनुमानगढ़ में सूती वस्त्र उद्योग स्थापित किये जा सकते है। कोटा, भरतपुर व उदयपुर में चीनी की मिलें लगाई जा सकती है। कोटा में वनस्पति घी का उद्योग तथा भरतपुर, अलवर, गंगानगर, सवाई माधोपुर में खाद्य तेल मिलें स्थापित की जा सकती है। पूरे राज्य में मक्का व बाजरे पर आधारित फूड प्रोसेसिंग उद्योग स्थापित किये जा सकते है।

6. **पशु सम्पदा पर आधारित उद्योग** – राज्य में चमड़ा, ऊन, मांस, दूध व दूध से बने पदार्थ का आधार पशुधन है। पश्चिमी शुष्क प्रदेश के नगरों में चमड़ा उद्योग, डेयरी उद्योग, दूध पाऊडर के उद्योग, मक्खन, पनीर व पशु आहार के उद्योगों की स्थापना की विपुल संभावनाएं हैं। बीकानेर व जोधपुर में होजरी, ऊनी व चमड़े के कारखाने, सवाई माधोपुर, अलवर, भरतपुर, बीकानेर में हड्डी पीसने के कारखानें तथा अलवर व उदयपुर में मछली उद्योग का विकास किया जा सकता है। वर्ष 2007 की पशुगणना के अनुसार राज्य में 579 लाख पशुधन तथा 50.12 लाख से अधिक कुक्कुट सम्पदा है। वर्ष 2008–09 में राज्य में कुल दूध का उत्पादन 9,942 हजार टन था। राज्य के पश्चिमी जिलें स्वदेशी पशुधन के लिए प्रसिद्ध है। मुख्य पशुधन उत्पाद दूध, मांस, अण्डे व ऊन है।

7. **वनों पर आधारित उद्योग** – राजस्थान में हालांकि वन क्षेत्र कम है। यहां वन 2006–07 में भौगोलिक क्षेत्रफल का 7.87 प्रतिशत ही है, किन्तु यहां वनोत्पाद में विविधता है फिर राजस्थान सरकार वन क्षेत्र को बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील है। इस दिशा में 'हरित राजस्थान' कार्यक्रम उल्लेखनीय है।

राज्य में वनों पर आधारित लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास की अच्छी संभावनाएं हैं। राज्य में दियासलाई उद्योग, कागज उद्योग, चमड़ा साफ करने का उद्योग, बीड़ी उद्योग, खस आधारित उद्योग आदि स्थापित किये जा सकते हैं।

8. **आधारभूत संरचना** – क्षेत्र के आर्थिक विकास के लिए आधारभूत संरचना महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। राजस्थान में हाल के वर्षो में आधारभूत संरचना का खूब विकास हुआ है। राज्य सरकार ने पंचवर्षीय योजनाओं और वार्षिक योजनाओं में आधारभूत संरचना पर भारी वित्तीय संसाधन आवंटित किये है। केन्द्र सरकार भी राजस्थान में आधारभूत संरचना के विकास के लिए रूचि ले रही है।

राज्य में उर्जा की अधिष्ठापित क्षमता दिसम्बर 2011 तक 9831 मेगावाट थी। राज्य में अक्षय ऊर्जा जैसे पवन ऊर्जा, सौर ऊर्जा, बायोमास ऊर्जा का उत्पादन बढ़ रहा है। अच्छी सड़कें विकास की जीवन रेखा है। वर्ष 2008–09 में राज्य में निर्मित सड़कों का कुल लम्बाई 1,86,806 किलोमीटर थी। इनके अलावा राजस्थान संचार, बैंकिग, शिक्षा, चिकित्सा, आवास आदि क्षेत्रों में विकास की ओर अग्रसर है। आधारभूत संरचना आर्थिक विकास की गति को बढ़ाने में सहायक है।

9. **उद्यमी** – राजस्थानी मूल के उद्यमियों ने देश और विदेश में औद्योगिकीकरण के क्षेत्र में प्रभावी भूमिका निभाई है। लक्ष्मी निवास मित्तल, बिड़ला, पौद्दार, गोलेछा, साहू आदि बड़े उद्यमी है। यदि ये चाहे तो राज्य के आर्थिक कायाकल्प में बड़ी भूमिका निभा सकते हैं।

10. **औद्योगिक विकास के निगम** – राजस्थान में औद्योगिक विकास का वातावरण बनाने में अनेक निगम भूमिका निभा रहे हैं। राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास एवं विनियोजन निगम (रीको) राज्य के औद्योगिक विकास को गति देने वाली शीर्ष संस्था है। रीको का मुख्य उद्देश्य राजस्थान का योजनाबद्ध तीव्र विकास करना है। राजस्थान वित्त निगम (आर.एफ.सी.) नवीन उद्योगों की स्थापना, विद्यमान उद्योगों के विस्तार और नवीनीकरण के लिए वित्तीय सहायता उपलब्ध कराता है। राजस्थान लघु उद्योग निगम लघु औद्योगिक एवं हस्तशिल्प इकाइयों को प्रोत्साहन एवं सहायता प्रदान करने का कार्य कर रहा है। खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड का मुख्य उद्देश्य श्रमिकों को उत्तम गुणवत्ता की वस्तुओं के उत्पादन में सहायता प्रदान करना, कारीगरों को प्रशिक्षण दिलाना, सहकारिता की भावना पैदा करना एवं कच्चे माल व आवश्यक औजारों की पूर्ति द्वारा उत्पादन में वृद्धि करना है।

राजस्थान में विद्यमान प्राकृतिक संपदा का विवेकपूर्ण दोहन किया जाए तो राजस्थान देश के अन्य विकसित राज्यों की श्रेणी में खड़ा हो सकता है। राज्य की विषम भौगोलिक स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए राज्य सरकार केन्द्र से राज्य को विशेष दर्जा देने हेतु प्रयत्नशील है जिससे अधिकाधिक वित्तिय संसाधन प्राप्त हो सकें और आर्थिक विकास की गति सुनिश्चित की जा सके।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजस्थान में पंचवर्षीय योजनाओं की शुरूआत हुई –
   (अ) 1955–56 (ब) 1951–52
   (स) 1991–92 (द) 1966–69

2. राजस्थान की ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना का अनुमोदित उद्व्यय है–
(अ) 33735 करोड़ रूपए (ब)19567 करोड़ रूपए
(स) 11999 करोड़ रूपए (द) 71732 करोड़ रूपए
3. प्रथम पंचवर्षीय योजना की समयावधि है–
(अ) 1956–61 (ब) 1961–66
(स) 1951–56 (द) 1969–74
4. राज्य की दसवीं योजना में मद पर सबसे अधिक व्यय किया गया–
(अ) सिंचाईं व बाढ़ नियंत्रण (ब) ग्रामीण विकास
(स) सामाजिक व सामुदायिक सेवाएं (द) उर्जा
5. राज्य में ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना शुरू हुई–
(अ) एक अप्रैल 2006 (ब) एक अप्रैल 2009
(स) एक अप्रैल 2007 (द) एक अप्रैल 2008
6. राज्य की ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में सकल घरेलू उत्पाद वृद्धि दर लक्ष्य है–
(अ) 9 प्रतिशत (ब) 7.4 प्रतिशत
(स) 8 प्रतिशत (द) 9.9 प्रतिशत
7. राजस्थान की ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में विकास शीर्ष पर सर्वाधिक व्यय का प्रावधान किया गया है–
(अ) परिवहन (ब) कृषि एवं संबद्ध सेवाएं
(स) उद्योग व खनिज (द) उर्जा
8. राजस्थान की सबसे बड़ी वार्षिक योजना है–
(अ) 2007–08 (ब) 2008–09
(स) 2009–10 (द) 2010–11
9. राज्य में 2011–12 में खाद्यान्न उत्पादन (प्रावधानिक) था–
(अ) 108.2 लाख टन (ब) 109.3 लाख टन
(स) 202.07 लाख टन (द) 149.3 लाख टन
10. चोपंकी (भिवाड़ी) विशेष औद्योगिक समूह है–
(अ) जैक्स एण्ड ज्वैलरी (ब) होजरी
(स) टेक्सटाइल्स (द) दस्तकारियां
11. राजस्थान में कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्र वृद्धि दर ऋणात्मक रही –
(अ) 2005–06 (ब) 2006–07
(स) 2008–09 (द) 2007–08
12. भारत में अधात्विक खनिजों के उत्पादन में राजस्थान का स्थान है–
(अ) द्वितीय (ब) चतुर्थ
(स) प्रथम (द) तृतीय
13. मंगला प्रसिद्ध है–
(अ) ताबां (ब) तेल कुएं
(स) दुग्ध उत्पादन (द) लोह अयस्क

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

1. राजस्थान में प्रथम पंचवर्षीय योजना से लेकर दसवी पंचवर्षीय योजना तक कुल वास्तविक व्यय कितना है?
2. प्रथम पंचवर्षीय योजना में सर्वोच्च प्राथमिकता किस विकास क्षेत्र को दी गई?
3. चतुर्थ पंचवर्षीय योजना की समयावधि क्या है?
4. राज्य की वार्षिक योजना 2012–13 का आकार कितना है?
5. राज्य में दिसम्बर 2011 तक विद्युत की अधिष्ठापित क्षमता कितनी थी?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. राजस्थान में पंचवर्षीय योजनाओं की समयावधि बताइये।
2. दसवीं पंचवर्षीय योजना के क्या लक्ष्य थे?
3. ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के सामाजिक लक्ष्य बताइये।
4. योजनाबद्ध विकास की कोई तीन उपलब्धियां बताइये।
5. राजस्थान की औद्योगिक नीति 2010 के लक्ष्य लिखिए।
6. पांच विशेष औद्योगिक समूह के नाम बताइये।
7. राजस्थान के आर्थिक विकास में क्या बाधाएं है?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के प्रमुख लक्ष्य एवं उद्व्यय की व्याख्या कीजिए।
2. राजस्थान में योजनाबद्ध विकास की उपलब्धियों का वर्णन कीजिए।
3. भारत की नई औद्योगिक नीति की मुख्य विशेषताएं क्या है?
4. राजस्थान की जून 2010 की औद्योगिक नीति का वर्णन कीजिए।
5. राजस्थान के औद्योगिक विकास पर टिप्पणी कीजिए।
6. राजस्थान में कृषि की भूमिका का उल्लेख कीजिए।
7. राजस्थान में औद्योगिक विकास की संभावनाएं बताइये।

□□□

अध्याय – 8
राजस्थान में पर्यटन विकास और संभावनाएं

आज अर्थव्यवस्था के विकास में पर्यटन महत्त्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में विकसित हो गया है। पर्यटन एक ऐसा उद्योग है जिसमें अपेक्षाकृत कम पूंजी निवेश से विकास को गति दी जा सकती है, साथ ही अधिकाधिक रोजगार सृजन भी संभव होता है। इसलिए सभी देश पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। पर्यटन विदेशी मुद्रा अर्जन का बड़ा स्त्रोत है इसलिए देश के विकास में पर्यटन की भूमिका बढ़ गई है। साथ ही पर्यटन से संस्कृति और कलात्मक धरोहर को संरक्षण मिलता है। पर्यटन से विश्व स्तर पर सांस्कृतिक आदान–प्रदान बढ़ता है। पर्यटन उद्योग से ऐतिहासिक और प्राकृतिक सौंदर्य वाले स्थानों को सुरक्षा प्रदान करने और उन्हें विकसित करने की सोच विकसित होती है। मेलें और त्यौहारों में देशी एवं विदेशी पर्यटकों के आने से लोक संस्कृति का प्रचार एवं प्रसार होता है तथा लोक कलाकारों को प्रतिभा दिखाने का अवसर मिलता है।

राजस्थान में पर्यटन

भारत के पर्यटन में राजस्थान का विशिष्ट स्थान है। राजस्थान एक ओर जहाँ योद्धाओं की शौर्य गाथाओं से परिचय कराता है वहीं दूसरी ओर शिल्पियों, दस्तकारों, कवियों पर भी गर्व करता है। राजस्थान के दुर्ग, हवेलियां, स्तम्भ, इसके गौरवपूर्ण अतीत की याद दिलाते हैं। यहां की वास्तु शिल्प, कला, संगीत, त्यौहार एवं लोक कलाएं पूरे विश्व में पर्यटकों का आकर्षण केन्द्र हैं। राजस्थान अपने प्राकृतिक सौन्दर्य और ऐतिहासिक महत्ता के कारण देशी विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करता है। राजस्थान मंदिर, मस्जिद, दुर्ग, अभयारण्य, झीलें, मरूस्थल आदि के कारण सुरम्य और मनमोहक पर्यटन केन्द्र के रूप में विकसित हो सका है।

राजस्थान के पर्यटक स्थलों का वर्गीकरण

राजस्थान के पर्यटक स्थलों को निम्नांकित श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है–

1. **प्राकृतिक स्थल** – राजस्थान को प्रकृति ने अनेक सुरम्य स्थलों से संवारा है, जिन्हें देखने का आकर्षण पर्यटकों में होता है। इसमें **पर्वतीय क्षेत्र** – माउण्ट आबू, **रेगिस्तानी बालूका स्तूपों का दृश्य** – जैसलमेर में, **पर्वतीय घाटियाँ** – आमेर की घाटी, अलवर की काली घाटी, देसूरी की नाल आदि। **प्राकृतिक वनस्पति एवं जीव–जन्तुओं के केन्द्र** – राष्ट्रीय उद्यान, अभ्यारण, जलप्रपात जैसे मैनाल आदि। अनेक प्राकृतिक स्थल ऐतिहासिक और धार्मिक स्थलों के भी केन्द्र हैं।

2. **ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक स्थल** – राजस्थान का इतिहास समृद्ध रहा है और यहाँ के ऐतिहासिक स्थलों को पर्यटन केन्द्रों के रूप में विकसित किया गया है, इसमें प्रमुख हैं–

(क) **ऐतिहासिक दुर्ग** – चित्तोड़गढ़, कुम्भलगढ़ (उदयपुर), नाहरगढ़, आमेर, जयगढ़ (जयपुर), मेहरानगढ़ (जौधपुर), जूनागढ़ और लालगढ़ (बीकानेर), रणथम्भौर (सवाई माधोपुर), जैसलमेर, जालौर, नागौर, शेरगढ़ के किले, तारागढ़ (अजमेर), लोहागढ़ (भरतपुर) आदि।

(ख) **पुरातात्विक स्थल** – कालीबंगा (हनुमानगढ़), आहड़ और बालाथल (उदयपुर), बैराठ (अलवर), बूँदी के गुफा चित्र, बागौर (भीलवाड़ा)।

(ग) **महल और हवेलियाँ** – जयपुर, जौधपुर, उदयपुर, बीकानेर, भरतपुर, डीग, बूँदी, अलवर, सामोद के राजमहल और जैसलमेर की हवेलियाँ पर्यटकों के आकर्षण केन्द्र हैं। शेखावटी के अनेक किले और हवेलियाँ भी देशी–विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।

(घ) **धार्मिक स्थल** – राजस्थान के धार्मिक स्थलों में नाथद्वारा, पुष्कर, कोलायत, रामदेवरा, एकलिंग जी, साँवरिया जी, गलता, केसरियाजी, कैलादैवी,

सालासर, खाटू श्याम जी, जयपुर के गोविन्द देव जी का मंदिर, बिड़ला मंदिर, मोती डूँगरी का गणेश मंदिर, आदि। जैन मंदिरों में राणकपुर, देलवाड़ा मंदिर, महावीर जी का मंदिर, नाकोड़ा, पदमपुरा आदि। मुस्लिम दरगाह में अजमेर में स्थित ख्वाजा मुइनुद्दीन हसन चिश्ती की दरगाह सर्वाधिक प्रसिद्ध है।

(च) **सांस्कृतिक केन्द्र** – के रूप में ऐतिहासिक स्थलों के अतिरिक्त उत्कृष्ट स्थापत्य कला और वास्तुकला के केन्द्र राजस्थान में अनेक स्थलों पर हैं, जैसे –

(i) **जयपुर** – हवामहल, जन्तर–मन्तर, चन्द्र महल, आमेर के राजाओं की छतरी एवं मंदिर आदि।

(ii) **जैसलमेर** – पटवों की हवेली, नथमल जी की हवेली, रामगढ़ की हवेलियाँ आदि।

(iii) जौधपुर – जसवंत थड़ा

(iv) डीग – महल

(v) अजमेर – अढ़ाई दिन का झोपड़ा

(vi) बूँदी – चौरासी खंभों की छतरी, रानी जी की बावड़ी, क्षार बाग की छतरियाँ

(vii) चित्तौडगढ़ – विजय स्तम्भ, कीर्ति स्तम्भ तथा किले पर स्थित मंदिर

(viii) टोंक – 'स्वर्ण कोठी', अरबी–फारसी शोध संस्थान

(ix) कोटा – जल मंदिर के पास की छतरियाँ

(x) झालरापाटन – चन्द्रभागा नदी के किनारे मंदिर एवं सूर्य मंदिर

(xi) माउण्ट आबू – देलवाड़ा के मंदिर

(xii) रणकपुर – जैन मंदिर

(xiii) डूँडलोद – इमारतें, हवेलियाँ

(छ) **मेले** – राजस्थान के मेले सांस्कृतिक धरोहर हैं, जो आज भी परम्परागत रूप में लगते हैं, अतः पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। यहाँ के प्रसिद्ध मेले हैं – पुष्कर (अजमेर), तिलवाड़ा (बाड़मेर), जसवन्त मेला (भरतपुर), करणीमाता और कपिलमुनि मेला (बीकानेर), गोगामेड़ी (हनुमानगढ़), रामदेवरा (जैसलमेर), परवतसर एवं मेड़ता मेला (नागौर), दशहरा मेला (कोटा), त्रिनेत्र गणेश रणथम्भौर (सवाईमाधोपुर), केलादेवी (करौली), तीज एवं गणगौर (जयपुर), जाम्बेश्वर (मुकाम), सती मेला एवं लोहारगढ़ मेला (झुंझुनू), खाटू श्याम जी (सीकर), बैणेश्वर (डूँगरपुर), ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती उर्स (अजमेर) आदि।

इसके अतिरिक्त हस्त कला के केन्द्र तथा पर्यटन विभाग द्वारा विकसित शिल्प ग्राम आदि भी पर्यटकों को राजस्थान में आकर्षित करते हैं। राजस्थान के अनेक उत्सव एवं त्यौहारों जैसे तीज, गणगौर, दशहरा, दुर्गाष्टमी, होली, अन्नकूट, नवरात्रा, दीपावली आदि भी पर्यटकों को आकर्षित करते हैं।

राजस्थान के पर्यटन स्थल

सम्पूर्ण राजस्थान पर्यटन की दृष्टि से एक अलग पहचान रखता है। यहां के दुर्ग, महल और हवेलियों के अलावा शिल्प कला, उत्सव, मेलें और प्राकृतिक सौंदर्य देखने योग्य है। प्रत्येक क्षेत्र की अपनी विशेष पहचान और आकर्षण है।

राजस्थान में पर्यटन स्थलों की दृष्टि से मारवाड़, मेवात एवं ब्रज, हाडौती, ढूंढ़ाड़, मरू क्षेत्र, गोडावन, शेखावाटी, मेवाड़, बागड़ आदि सभी क्षेत्र महत्वपूर्ण है। राजस्थान के पर्यटन विभाग ने देश–विदेश के पर्यटकों को 'पधारो म्हारे देश' का बुलावा देकर राज्य में पर्यटन हेतु आमंत्रित किया गया है।

पर्यटन विभाग का वाक्य हैं – अतुल्य राजस्थान।

1. ढूंढाड़ क्षेत्र

ढूंढाड़ में राजस्थान की राजधानी जयपुर और दौसा जिले के पर्यटन स्थल आते हैं। विश्व में जयपुर 'गुलाबीनगर' नाम से प्रसिद्ध है। जयपुर में कांच की कारीगरी, प्राचीन भित्ती चित्र से युक्त सिटी पैलेस, सवाई जयसिंह द्वारा स्थापित वैध शाला, (जन्तर–मन्तर) बिड़ला द्वारा स्थापित अन्तरिक्ष ज्ञान का खजाना बिड़ला प्लेनेटेरियम, पांच मंजिली गोल व आगे निकले हुए झरोखे एवं खिड़कियों से युक्त स्थापत्य कला का नमूना हवामहल, रामनिवास बाग प्रागंण में अल्बर्ट म्यूजियम, चिड़ियाघर, जयपुर राजघराने के वैभव की याद दिलाती स्थापत्य कला का अनुपम उदाहरण गैटौर की छतरियां, इतिहास के गवाह जयगढ़, नाहरगढ़ व आमेर

के किले आदि दर्शनीय स्थल है। इनके अलावा गलता, गोविन्ददेव जी मंदिर, मोती डूंगरी के गणेशजी, लक्ष्मीनारायण मंदिर आदि तीर्थाटन है। ये हिन्दुओं के तीर्थ और पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। गलता के प्रमुख कुण्ड गौमुख से निकली जलधारा दर्शनीय है। आमेर में जयगढ़, मावठा और मंदिर दर्शनीय स्थल है। रामगढ़ की झील में नौकायन की सुविधा है।

2. मेरवाड़ा क्षेत्र

मेरवाड़ा क्षेत्र में अजमेर, पुष्कर, नागौर जिलों के पर्यटन स्थल आते हैं। अजमेर जिले का पुष्कर हिन्दुओं का बड़ा तीर्थस्थान है। यहां दर्शनीय स्थलों में ब्रह्मा जी का मंदिर, पुष्कर सरोवर मुख्य है। ऐतिहासिक नगरी अजमेर में ख्वाजा साहब की दरगाह, ढाई दिन का झोपड़ा, तारागढ़, आना सागर, मेयो कॉलेज, सुभाष उद्यान, संग्रहालय एवं नसियां आदि पर्यटन स्थल है।

3. मेवात एवं ब्रज क्षेत्र

मेवात एवं ब्रज क्षेत्र में अलवर, भरतपुर, एवं सवाईमाधोपुर जिलों के पर्यटन स्थल आते हैं। अलवर के पर्यटन स्थलों में बाला किला, विनय विलास महल, मूसी महारानी की छतरी, पुर्जन विहार, गवर्नमेंट म्यूजियम आदि है। अलवर के समीपवर्ती स्थलों में सिलीसेढ़, जयसमंद, पांडुपोल, भर्तहरि, वैराठ नगर एवं नारायणी माता मंदिर है। अलवर में सरिस्का टाइगर प्रोजेक्ट भी है।

भरतपुर केवलादेव पक्षी अभयारण्य के कारण जगप्रसिद्ध है। यहां के अन्य पर्यटन स्थलों में लोहागढ़, गवर्नमेंट म्यूजियम, जवाहर एवं फतह झील है। भरतपुर के निकट डीग के महल पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। सवाईमाधोपुर से लगभग 10 किलोमीटर दूर रणथम्भौर अपने नेशनल पार्क और दुर्ग के लिए प्रसिद्ध है। यहां का त्रिनेत्र गणेश मंदिर श्रृद्धालुओं का आस्था स्थल है।

4. हाड़ौती क्षेत्र

इसमें कोटा, बूंदी, बाँरा और झालावाड़ के पर्यटन स्थल आते हैं। कोटा चम्बल के किनारे बसा प्रमुख औद्योगिक नगर है। यहां के दर्शनीय स्थलों में गढ़, सिटी पैलेस, चम्बल गार्डन, जगमंदिर, उम्मेद भवन, ब्रज विलास पैलेस, छत्र विलास, गवर्नमेंट म्यूजियम तथा समीपवर्ती स्थलों में कोटा बैराज, गांधी सागर डेम और रावतभाटा परमाणु विद्युत केन्द्र है। झालावाड़ के पर्यटन स्थलों में गागरोन का किला, भवानी नाट्यशाला, रेन बसेरा, झालरापाटन के मंदिर, गुफाएं, डाग, काकूनी और भीम सागर प्रमुख है। बारां में भण्डदेवरा और सीतामाता दर्शनीय स्थल है। बूंदी पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है बूंदी के महल, चौरासी खम्भों वाली छतरी, रानी जी की बावड़ी आदि दर्शनीय स्थल है।

5. मरू क्षेत्र

मरू क्षेत्र के पर्यटन स्थलों में जोधपुर, जैसलमेर, बीकानेर और बाड़मेर के पर्यटन स्थल आते हैं। जोधपुर सूर्यनगरी के नाम से विख्यात है। यहां पुरातन ऐतिहासिकता वाला मेहरानगढ़ का किला है। इनके अलावा यहां उम्मेद भवन, जसवंत थडा, गिरदी कोट, सरदार मार्केट, मंडोर, कायलाना झील, औसियां, सरदार समंद झील रमणीय स्थल है।

बीकानेर में जूनागढ़ किला, लालगढ़ महल, संग्रहालय, देवकुण्ड के अलावा देशनोक में करणीमाता मंदिर, ऊंट अनुसंधान केन्द्र, गजनेर, कोलायत के मंदिर आदि पर्यटन स्थल है।

जैसलमेर में दूर–दूर तक फैले रेतीले धोरे पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र है। यहां पटवों की हवेली, नथमल हवेली, सालिम सिंह हवेली, गढ़ीसर, मानव चौक, दुर्ग, बड़ा भाग आदि पर्यटन स्थल है। बाड़मेर अपनी कलात्मक छपाई एवं फर्नीचर के काम के कारण प्रसिद्ध है।

6. मेवाड़ क्षेत्र

मेवाड़ क्षेत्र में उदयपुर, राजसमंद, चित्तौड़गढ के पर्यटन स्थल आते हैं। अपूर्व प्राकृतिक छटा और सौन्दर्य के गोद में सिमटा उदयपुर 'झीलों की नगरी' के नाम से जाना जाता है यहाँ अनेक रमणीय स्थल है। पिछौला झील के मध्य स्थित जग मंदिर व जग निवास अपनी सौन्दर्य और फव्वारों की अद्भूत छटा के लिए प्रसिद्ध है। वृक्षों और पुष्पों से लदे पौधे की अनुपम छटा से युक्त सहलियों की बाड़ी राजस्थान के प्रसिद्ध उद्यानों में एक है। उदयपुर के पास महाराणा प्रताप की वीरभूमि हल्दीघाटी है जहां की गाथा सुन पर्यटक नतमस्तक होते हैं। फतहसागर व स्वरूप सागर नौका विहार के लिए प्रसिद्ध है। राजसमंद बांध कला का

उत्कृष्ट नमूना तथा जयसमंद कृत्रिम झील है। नाथद्वारा और कांकरोली महानतीर्थ है। चित्तौड़गढ़ के पर्यटन स्थलों में यहां किला, विजय स्तम्भ, कीर्ति स्तम्भ, पद्मिनी महल, मीरा मंदिर, कालिका माता मंदिर, जयमल और पत्ता महल, सावंरिया जी आदि प्रमुख है। महाराणा कुम्भा द्वारा निर्मित कुंभलगढ़ में बादल महल के अलावा अन्य दर्शनीय स्थल है।

7. शेखावाटी क्षेत्र

इस क्षेत्र में सीकर, झुंझुनू एवं चूरू के पर्यटन स्थल आते हैं। चूरू में ढोला–मारू की चित्रकारी देखने योग्य है। अन्य स्थलों में सालासर, हनुमान मंदिर, पिलानी व तालछापर आकर्षक स्थल है। सीकर व झुन्झुनू की हवेलियां दर्शनीय है। चूरू का तालछापर अभयारण्य काले हिरणों के लिए प्रसिद्ध है।

8. बागड़ क्षेत्र

इस क्षेत्र में डूंगरपुर व बांसवाड़ा के पर्यटन स्थल आते हैं। डूंगरपुर में जूना महल, बैनेश्वर, गैल सागर झील तथा बांसवाड़ा में माही बांध, बादल महल, त्रिपुर सुन्दरी मंदिर, रंग जी मंदिर, कागदी झील आदि पर्यटन स्थल है।

9. गोड़ावन क्षेत्र

इस क्षेत्र में राजस्थान का प्रसिद्ध पर्वतीय स्थल माउंट आबू तथा देलवाड़ा जैन मंदिर है। यहां अन्य पर्यटक स्थलों में नक्की झील, सनसेट पोइंट, गुरू शिखर मुख्य है। रणकपुर में प्रसिद्ध जैन मंदिर है।

पर्यटक विकास हेतु राज्य सरकार के प्रयास

राज्य सरकार पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ है। राजस्थान में समृद्ध सांस्कृतिक परम्परा के कारण पर्यटन विशेष ध्यान देने वाला क्षेत्र है। राज्य सरकार द्वारा पर्यटन विकास हेतु उठाये गये कदम निम्नलिखित है –

1. **पर्यटन निदेशालय** – इसकी स्थापना 1955 में की गई। यह पर्यटन स्थलों का विकास, पर्यटन से संबंधित साहित्य प्रकाशन तथा पर्यटकों के परिवहन, आवास आदि महत्त्वपूर्ण कार्यों को सम्पन्न करता है।

2. **राजस्थान राज्य पर्यटन विकास निगम लिमिटेड** – इसकी स्थापना एक अप्रैल, 1979 को की गई। यह राज्य में पर्यटन स्थलों को विकास, संरक्षण एवं उनके आस–पास बुनियादी सुविधाओं के विकास हेतु महत्त्वपूर्ण गतिविधियां संचालित कर रहा है। इस निगम द्वारा वीड़ियो कैसेट 'ड़ेजर्ट ट्राइ एंगल' तैयार किया है। इसमें राज्य के पर्यटन स्थलों और संस्कृति को चित्रित किया गया है। निगम के द्वारा राज्य में अनेक होटलों और मिडवे का संचालन किया जा रहा है। निगम भारतीय रेल मंत्रालय के सहयोग से शाही रेलगाड़ी का भी संचालन करता है।

3. **पर्यटन को उद्योग का दर्जा** – राजस्थान सरकार ने 1989 में पर्यटन क्षेत्र को उद्योग का दर्जा प्रदान किया। पर्यटन को उद्योग का दर्जा मिल जाने से उद्योग को उपलब्ध होने वाली सुविधाएं और छूट पर्यटन इकाइयों को भी उपलब्ध है।

4. **हैरिटेज होटल योजना** – राजस्थान के वैभव को संजोने वाले किलों, महलों, गढ़ों तथा हवेलियों के संरक्षण के लिए पर्यटन विभाग की ओर से हैरिटेज होटल योजना बनाई गई। वर्ष 1991 में पुरानी हवेलियों एवं महलों को होटलों में बदलने की यह योजना 1995 तक तीव्रता से चली। इससे कई पुराने महलों को संरक्षण मिला। विदेशी पर्यटक दूरस्थ इलाकों तक पहुंचने लगे। पर्यटक पंचतारा होटलों में ठहरने की अपेक्षा हैरिटेज होटलों में ठहरना शान समझते हैं।

5. **पर्यटन पर बजट आवंटन** – वर्ष 2010–11 के राज्य बजट में पर्यटन ने विकास के लिए 25 करोड़ रूपये का प्रावधान किया गया है। बजट में आमेर किले व घाट की गूणी को सांस्कृतिक हब और एडवेंचर टूरिज्म को बढ़ावा देने की घोषणा की गई है। इसके अलावा तीन सितारा से कम वाले होटलों एवं रेस्टोरेंट्स में भोजन पर वैट की दर 14 प्रतिशत से घटाकर 5 प्रतिशत कर दी है। जयपुर में अप्रैल 2008 में ग्रेट इण्डियन ट्रेवल बाजार का आयोजन किया।

6. **पर्यटक परिपथों का विकास** – राज्य में पर्यटकों की सुविधा के लिये पर्यटन विभाग ने पर्यटन स्थलों के समूहों को पर्यटक परिपथ (Tourist Circuits) के रूप में विकास किया है। राज्य के पर्यटक परिपथ हैं – जयपुर परिपथ, चूरू परिपथ, अलवर परिपथ, हाड़ौती परिपथ, मेवाड़ा परिपथ, शेखावटी परिपथ तथा माउण्ट आबू परिपथ।

राजस्थान की पर्यटन नीति

राजस्थान सरकार ने राज्य में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए पर्यटन नीति की घोषणा की है। राजस्थान सरकार द्वारा प्रथम पर्यटन नीति 2001 में घोषित की गई।

प्रथम पर्यटन नीति 2001– राजस्थान की प्रथम पर्यटन नीति के निर्धारित किये गये उद्देश्य निम्नलिखित है :

1. समृद्ध पर्यटन संसाधनों का सर्वोत्तम उपयोग।
2. गांवों में रोजगार सृजन।
3. समृद्ध एवं विविध हैण्डीक्राफ्ट विकसित करना।
4. पर्यटन को जन–जन का उद्योग बनाना।
5. सामाजिक व आर्थिक विकास में पर्यटन के योगदान को बढ़ाना।

राज्य की प्रथम पर्यटन नीति में इस बात पर बल दिया गया कि राज्य की समृद्ध हस्तशिल्प और कुटीर उद्योगों के उत्पाद की बिक्री तथा कलाकारों के सामाजिक आर्थिक उत्थान के लिए राज्य सरकार अभिप्रेरक (As Motivaters) की भूमिका निभायेगी। पर्यटन इकाइयों की स्थापना के लिए कृषि भूमि को आरक्षित दरों के एक–चौथाई दाम पर अधिकतम चार बीघा भूमि के आवंटन का प्रावधान किया गया। नये होटलों को शहरी सीमा में भूमि खरीदने पर

पंजीयन शुल्क में छूट का प्रावधान किया गया। इसके अलावा नई पर्यटन इकाइयों को 5 वर्ष तक के लिए विलासिता शुल्क लेने का प्रावधान किया। राज्य में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए ब्याज और मनोरंजन कर में छूट का प्रावधान किया गया। प्रथम पर्यटन नीति का आकर्षक पहलू स्थानीय निवासियों को रोजगार मुहैया कराना है इस नीति में अकुशल कार्यशक्ति की शत–प्रतिशत भर्ती स्थानीय स्तर पर करना सुनिश्चित किया गया।

होटल नीति 2006

राजस्थान में होटलों में जगह की मांग व आपूर्ति के बीच अन्तर को पाटने के उद्देश्य से और भविष्य में पर्यटकों की वृद्धि की संभावना को दृष्टिगत रखते हुए राज्य सरकार द्वारा होटल नीति 2006 की घोषणा की गई। इस नीति में निम्नलिखित बातों को सम्मिलित किया गया।

1. राज्य सरकार ने होटलों के लिए भूमि बैंक की स्थापना की घोषणा की।
2. होटलों एवं आवास सुविधा की आधारभूत संरचना हेतु भूमि उपलब्ध कराने में जयपुर विकास प्राधिकरण, स्थानीय निकाय, ग्राम पंचायतों के अधिकारी तथा जिला कलेक्टरों की भूमिका महत्त्वपूर्ण होगी।
3. नई होटल नीति में होटलों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया गया है इसमें एक, दो, तीन सितारा का क्षेत्रफल 1200 वर्गमीटर तक, 4 सितारा होटल का 6000 वर्ग मीटर तक तथा 5 सितारा एवं ऊपर की श्रेणी का 18000 वर्ग मीटर तक क्षेत्रफल रख गया है।
4. राज्य सरकार ने होटल की जमीन की बिक्री के लिए विशेष आरक्षित कीमत की घोषणा की जिसकी पालना स्थानीय संस्थाओं को करनी होती है।
5. नई होटल नीति में होटल की जमीन लेने में होटल वालों / टूर–आपरेटर को प्राथमिकता दी जायेगी। भूमि क्रेताओं को भूमि परिवर्तन चार्जेज में 100 प्रतिशत छूट एवं मनोरंजन कर में 100 प्रतिशत छूट मार्च 2010 तक दी जायेगी। इसके अलावा होटल निर्माताओं को जलापूर्ति, गृहकर आदि में रियायत दी जायेगी। सरकार हेरिटेज–होटल्स की स्थापना को प्रोत्साहन देगी।

राजस्थान टूरिज्म यूनिट पालिसी, 2007

राज्य सरकार की होटल नीति 2006 'राजस्थान टूरिज्म यूनिट पालिसी 2007' द्वारा प्रतिस्थापित की गई। होटल नीति 2006 के तहत प्रमुख श्रेणी के होटलों को ही छूट का प्रावधान था जबकि नई नीति के तहत् अन्य श्रेणी के होटलों, हैरिटेज होटलों एवं पर्यटन इकाइयों यथा हॉलिडे रिसोर्ट एवं रेस्टोरेंट आदि को भी यह सुविधा उपलब्ध है।

प्रदेश में पर्यटकों की आवक का स्वरूप

राजस्थान के पर्यटन विभाग का मूलमंत्र **'पधारो म्हारे देस'** फलीभूत हो रहा है। इस बात की पुष्टि राजस्थान में देशी और विदेशी पर्यटकों की संख्या में हो रही उत्तरोत्तर वृद्धि से सहज रूप से होती है। भारत आने वाला पर्यटक राजस्थान की ओर खिंचा चला आता है। एक अनुमान के अनुसार भारत आने वाला एक तीसरा पर्यटक राजस्थान अवश्य आता है। राजस्थान में पर्यटकों की संख्या में निरंतर वृद्धि हो रही है जो निम्नांकित तालिका से स्पष्ट है –

राजस्थान में पर्यटकों की संख्या

(लाख में)

वर्ष	देशी पर्यटक	विदेशी पर्यटक
1980	24.50	2.08
1990	37.35	4.71
2000	73.74	6.23
2006	234.83	12.20
2007	259.21	14.01
2008	283.59	14.78
2010(दिस.तक)	255.43	12.78

राजस्थान में विगत वर्षों में पर्यटकों की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई है। देशी पर्यटकों की संख्या 1980 में केवल 24. 50 लाख थी जो बढ़कर 2000 में 73.74 लाख तथा 2008 में और बढ़कर 283.59 लाख हो गई। राजस्थान में विदेशी पर्यटकों की संख्या में भी अच्छी वृद्धि हुई है। विदेशी पर्यटकों की संख्या 1980 में केवल 2.08 लाख थी जो बढ़कर 2000 में 6.23 लाख तथा 2008 में 14.78 लाख हो गई। वर्ष 2007 में सबसे ज्यादा देशी पर्यटक अजमेर में आये यहां आने वाले पर्यटकों की संख्या 19.96 लाख थी। विदेशी पर्यटकों को आकर्षित करने में जयपुर सबसे आगे है। जयपुर में 2007 में 4.65 लाख विदेशी पर्यटक आये।

पर्यटन विकास की संभावनाएं

राजस्थान के लिए पर्यटन उद्योग वरदान सिद्ध हो सकता है। राजस्थान विविधताओं, जिज्ञासाओं और विचित्रताओं से भरा हुआ प्रदेश है। आज विश्व में राजस्थान की अद्भूत कठपुतली कला, लोक संगीत, भोजा, लंगा, मांगणियार मशहूर है। राजस्थान प्राचीनतम और शिल्प समृद्ध मन्दिरों, अद्भूत और बेजोड़ स्थापत्य कलाओं से भरा पूरा प्रदेश है जिन्हें देखने के लिए दुनिया के व्यक्ति लालायित रहते हैं।

राज्य में एडवेंचर टूरिज्म की पर्याप्त संभावना है। इसके अलावा वाटर सफारी, ग्रामीण पर्यटन, इको टूरिज्म, फार्म टूरिज्म, एज्यूकेशनल टूरिज्म द्वारा भी पर्यटकों को आकर्षित किया जा सकता है।

राजस्थान में पर्यटन विकास के लिए मजबूत आधारभूत ढांचा उपलब्ध है। राज्य में 2006–07 में पर्यटकों के लिए 38 होटल, 35 हेरिटेज होटल, 48 पर्यटक स्वागत और सूचना केन्द्र, 3 यात्री निवास, 22 मिडवे और मोटल थे। जयपुर में अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा बन जाने से विदेशी

पर्यटकों की आवक में अच्छी वृद्धि हो रहीं है।

राजस्थान में पर्यटन के विकास हेतु राज्य सरकार अनेक कार्यक्रम चला रही है, जिसमें महत्वपूर्ण हैं–

1. पर्यटन साहित्य का प्रकाशन एवं प्रचार–प्रसार।
2. ऐतिहासिक स्मारकों का संरक्षण उपलब्ध कराना।
3. ऐतिहासिक स्मारकों को संरक्षण एवं रख–रखाव।
4. पर्यटक गाइड की व्यवस्था।
5. मरू मेलों का आयोजन।
6. शाही रेलगाड़ी (Palace on Wheels) का प्रारम्भ करना।
7. पैकेज टूर कार्यक्रम जैसे स्वर्ण त्रिभुज (गोल्डन ट्राइंगल–दिल्ली, आगरा, जयपुर, मेवाड़ पैकेज, हवा–महल पैकेज आदि निर्धारित करना।
8. पर्यटन विभाग द्वारा आंचलिक मेलों एवं सांस्कृतिक समारोहों का आयोजन।
9. 'एडवेंचर टूरिज्म' के विकास की योजना तैयार करना।
10. इको, हैल्थ, एडवेन्चर' एवं धार्मिक पर्यटन को प्रोत्साहन देना आदि।

पर्यटन, 'पधारों सा'

राजस्थान में पर्यटन को एक उद्योग घोषित कर दिया गया है। रीको पर्यटन इकाइयों को औद्योगिक क्षेत्रों में औद्योगिक दरों पर भूमि उपलब्ध कराएगा।

पर्यटन इकाई के लिए भूमि का आवंटन पर्यटन इकाई नीति 2007 में प्रदत्त दरों के अनुसार होगा। शहरी और ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि भूमि का रूपान्तरण, रूपान्तरण व विकास शुल्क से पूरी तरह मुक्त होगा।

'पधारों सा' एक अभिनव योजना है जो गुणवत्ता भोजन, प्रसाधन सुविधाओं की सुलभता, कुशल व गुणवत्ता सुविधाएं, बड़े पैमाने पर रोजगार, पर्यटन में लघु उद्यमियों द्वारा निवेश आदि लाभ प्रदान करते हुए निजी क्षेत्र की भागीदारी के साथ गुणवत्तापूर्ण 'वे साइड' सुविधाओं के विकास द्वारा पर्यटन क्षेत्र में रोजगार सृजन लक्ष्य रखा गया है। 'पधारा सा' में रेस्टोरेंट, सुविनियर शॉप्स, सार्वजनिक टेलीफोन और कॉफी शॉप्स प्रकार की इकाइयां सम्मिलित होगी। पधारो सा इकाई का डिजाइन विशिष्ट व ब्रांडेड होगी। पधारों सा की अनुमोदित इकाइयों को प्रोत्साहन के रूप निर्माण/नवीनीकरण की लागत का 25 प्रतिशत अधिकतम 5 लाख रुपए तक भी प्रदान किया जाएगा।

वास्तव में पर्यटन राजस्थान का एक महत्वपूर्ण उद्योग है जिससे न केवल राज्य सरकार को आय होती है अपितु यह हजारों व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करता है। इसी कारण राज्य सरकार का पर्यटन विभाग निरन्तर पर्यटन के विकास में संलग्न है। राज्य में अभी भी अनेक पर्यटक स्थल हैं जिनका यदि समुचित विकास किया जाय तो पर्यटकों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हो सकती है। राज्य में पर्यटन विकास की अत्यधिक सम्भावनायें है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. पर्यटन स्थल जयपुर क्षेत्र में आता है –
   (अ) शेखावाटी (ब) हाड़ौती
   (स) मेवाड़ (द) ढूढांड़ क्षेत्र
2. रणथम्भौर नेशनल पार्क जिले में है–
   (अ) करौली (ब) सवाईमाधोपुर
   (स) दौसा (द) कोटा
3. सूर्यनगरी के नाम से विख्यात है–
   (अ) बाड़मेर (ब) बीकानेर
   (स) जोधपुर (द) जैसलमेर
4. 'झीलों की नगरी' के नाम से जाना जाता है–
   (अ) जयपुर (ब) अलवर
   (स) उदयपुर (द) राजसमंद
5. पर्यटन को उद्योग का दर्जा मिला–
   (अ) 1989 (ब) 1995
   (स) 1979 (द) 1955

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. जन्तर–मन्तर कहाँ है?
2. ढाई दिन का झौपड़ा किस नगर में है?
3. केवलादेव क्यों प्रसिद्ध है?
4. गागरोन का किला कहाँ है?
5. बीकानेर में कौनसा किला है?
6. ढोला मारू क्या है?
7. राजस्थान के पर्यटन निदेशालय की स्थापना कब हुई?

लघूत्तरात्मक प्रश्न

1. पर्यटन उद्योग का महत्त्व बताइये।
2. मारवाड़ क्षेत्र के पर्यटन स्थलों का वर्णन कीजिए।
3. जैसलमेर में पर्यटन के आकर्षण केन्द्रों के नाम बताइये।
4. शेखावाटी में कौनसे जिले आते हैं तथा वे क्यों प्रसिद्ध है?
5. हैरिटेज होटल क्या है?
6. राजस्थान में 2008 में कितने पर्यटक आये?

निबन्धात्मक प्रश्न

1. राजस्थान के पर्यटन क्षेत्रों का वर्णन कीजिए।
2. राजस्थान सरकार द्वारा पर्यटन विकास के प्रयासों का वर्णन कीजिए।
3. राजस्थान की नई पर्यटन नीति की व्याख्या कीजिए।
4. राजस्थान में पर्यटन विकास की स्थिति तथा संभावनाओं को समझाइये।

□□□